

प्रसाद के नाटको मे नियतिवाद

पद्माकर शर्मा

रचना प्रकाशन

इलाहाबाद—१-

प्रकाशक—

डा. म. म. म. म.

रचना म. म. म.

४ म. म. म. म.

म. म. म. म.—१



प्रथम संस्करण १९६८

८ प. म. म. म.



मुद्रक—

म. म. म. म.

४७ म. म. म. म.

म. म. म. म.—२

म. म. म. म.

भूमिका

अनेक विद्वानों ने नियति की मात्र भाग्यपरक मानकर प्रसाद के नियतिवाद का विवेचन किया है। किंतु श्री पद्माकर गर्मा ने प्रस्तुत गोघ निबन्ध में उक्त मायता का खण्डन करते हुए निष्कल्प रूप में नियतिविषयक निम्न विहित आठ भसाट्टितिया (Facets) के आलोक में प्रसाद के नाटक साहित्य में नियतिवाद का बद्धि-सगत तथा प्रमाणपुरस्सर विश्लेषण किया है—

- (१) श्रुतवाद
- (२) क्षमवाद
- (३) नियतिवाद (Determinism)
- (४) नियति और विश्वकल्याणवाद
- (५) नियति और नियामक
- (६) दववाद
- (७) पूर्वनिदिष्टवाद तथा
- (८) सोद्देश्यवाद

श्री गर्मा की दृष्टि में प्रसाद की नियति-सम्बन्धी धारणा कोई स्थिति शील प्रत्यय (concept) नहीं है। प्रसाद के व्यक्तित्व के विकास के साथ साथ उनकी एतन्विषयक धारणा भी विकसित होती रही है। इस विकास के मूल में उनके व्यापक अध्ययन तथा व्यक्तिक अनुभव की क्लृप्त प्रतीत होती है। समझ है वे स्वभाव से भाग्यवादी रहे हों किंतु विविध ग्राहकों के अनुशीलन द्वारा उन्हें नियति के अनेक रूपों के दग्गन हुए हों। श्री पद्माकर की समीक्षापनाओं से सहमत होना भले ही समय न भी हो, फिर भी उनके स्वतंत्र चिंतन का अापना मूल्य है जिसका मैं स्वागत करता हूँ।

‘आत्मन्वते वष्टिजतां ना निधीवति षोडश
गन्दायो सत्त्वविरिव द्वय विगानपेदाते ।

—विगानपासवष त्तिम सग लोक ८६ ।

उपक्रम

प्रस्तुत गौध निबंध मरे एम० ए० (उत्तराध) के छाठवें प्रश्न पत्र के ध्यान पर लिखा गया है। वा० ए० म आत्म साहित्य के विद्यार्थी रूप में मरा ध्यान हाई की नियति भावना की धार सर्वाधिक आकृष्ट हुआ। वस्तुतः वही ध्यान परमात्मीय डा० सहल साहब की मनु प्रेरणा पाकर इस रूप में पलेवित-पुनित हुआ है।

विषय को व्यापक रूप से हृत्पगम करने के लिए मुझे बड़े विद्वानों से भी चर्चा-परिचर्चा करनी पड़ी जिनमें सर्वथी बच्चन जी लक्ष्मी नारायण 'मुद्यागु' तथा हसबुमार निवारी व नाम उल्लेखनीय हैं। सभी ने इस विषय की सराहना की और मेरा भाग प्रशस्त किया।

प्रथम अध्याय में मैंने 'युक्ति और प्रवृत्ति दोनों सदमों में 'नियति' का ही समेप म ध्याया की है। तत्पश्चात् 'नियति' के पर्यायवाची गाना पर विचार करते हुए उनका वर्गीकरण किया है। इस वर्गीकरण के आधार पर मैंने नियति का तीन भय—क्रमण नियमपद्धति उत्तमसत्ता और भाग्य—लिए हैं। २मी अध्याय में नियतिवाद के सम्बन्ध में कतिपय पाश्चात्य मता का भी उल्लेख कर लिया है।

तृतीय अध्याय में भारतीय वागमय के आधार पर नियतिवाद के उद्भव और विकास का विहंगावलोकन (श्रद्धेय से योगवासिष्ठ तक) प्रस्तुत किया है।

चतुर्थ अध्याय में कालक्रमानुसार प्रसाद के समस्त प्रवाहित नाटकों में नियति के स्वरूप का विवेचन किये गए हैं। इसे मैंने तीन विदुषों—नियति विषयक सन्न समीक्षण और निष्पत्ति—के आधार पर यथासाध्य स्पष्ट करने का प्रयास किया है।

चतुर्थ अध्याय में मैंने प्रसाद के नियतिवाद पर समग्र रूप से विचार किया है और यह निबन्ध का प्रयास किया है कि उनकी नियति विषयक परिवर्तना में विकास का है। इस विकास को मैंने नियति की छाठ 'मुसकानिया स दर्शाया है।

इस गौध निबंध में मरी कुछ मौलिक अपलक्षित भी हैं। नियति के पर्यायों का सम्पूर्ण विवेचन सम्भवतः सर्वप्रथम में ही प्रस्तुत कर रहा हूँ। नियतिवाद की अधिकांश विद्वाना १ भाग्यवाद बहुर ही सतोष कर लिया है। कुछ कोणकारा ने भी इस भय को दोहराया है। यहाँ तक लिख लिया गया है कि भाग्यवाद मात्र एक वचारीक प्रवृत्ति है दार्शनिक सिद्धांत नहीं (देखिए पृ० ४०)। इस सम्बन्ध में डॉ० रामगोपाल शर्मा 'दिने' का गांध प्रबंध 'निर्णय' में नियतिवाद भी उल्लेखनीय प्रथ है किन्तु इसके नेपथ्य में भी 'नियति' का भाग्य का पर्याय ही भाग है। बरतत नियति का एक भय 'भाग्य' भा हा सक्ता है किन्तु भाग्य ही नहीं। मैंने 'नियति' के पर्यायों के वर्गीकरण के आधार पर इस का तीन भय लिए हैं (देखिये पृ० १५-१६) नियति का यह त्रिविध स्वीकरण इससे पूर्व किसी समी

शक द्वारा नहीं किया गया था। प्रसादजी की नियति भावना को मैं नहीं वही प्रोक्तासिया की भाग्य सम्बन्धी मायता का आभास दते हुए भी मूलतः बल्कि ऋतान्तरित कमवाद सिद्ध किया है और उसके आगामी विकास को भी आठ मुखाकृतियों द्वारा स्पष्ट करने का प्रयास किया है—जाकि मरा अपनी उपलब्धि है प्रसाद की नियति भ्रूतत ऋतवादी है—मरा उस मायता का समयन आमती महादवा वर्मा न भी किया है (दखिए पृ० १३३) और वह कमवादी है—यह तो प्रसाद जी के निबन्धा से भी स्पष्ट हो जाता है।

अपने इस गोपनीय के अन्तगत मुझ भी नियति नहीं के कई प्रथाप भुगाने पड़े। अभी काय प्रारम्भ ही किया था पूरु जीजाजी की दवेन्नाय ठाकुर का स्वगवाह हा गया और मुझ लम्बी यात्रा पर बिहार जाता पला तपश्चात् हास्टन के कमरे में अग्निदर का प्रकोप हुआ और अधिकांश विविध सामग्री स्वाहा हो गई। किन्तु मैं भी प्रसाद के नियतिवादी पात्रों की तरह कम क्षेत्र में प्राण पण में जुटा ही रहा।

अपने इस अध्ययन से मुझ यह प्रतीति है कि नियतिवाद एक अत्यन्त गहन और विस्मृत विषय है। फिर प्रमाण की नियति तो और भी अधिक गूढ़ और दुर्बुद्ध है। अतः मैं तो अपनी अति-सीमाप्राप्त इस विषय का स्पष्ट भाव ही कर पाया हूँ। किन्तु मरा यह अकिञ्चन प्रयाग भी यदि किसी का बाड़ी ही भी निगाह दे सक तो मैं स्वयं को उपहत समझना।

अतः मैं उन समस्त मयानुभाषा का हृदय से आभार प्रकट करता हूँ जिनका स्नह-साध्योग मुझ प्रयत्न अथवा परोक्ष रूप से मिला है। परमपूज्य डॉ० नरेश्वरी का मैं अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने भूमिका लिखकर मुझ को साध किया। इस गोपनीय निबन्ध के निर्माण परमगुरुत्व डॉ० कर्दयालान जी सन्तर के प्रति आभार प्रकट करते हुए मैं मना करता हूँ क्योंकि उनका अस्मितामय व्यक्तित्व तो इस निबन्ध का अति-वृद्धि में स्वयं ही उपस्थित है। अन्तर्गत में यह उद्देश्य का महत्ता प्रेरणा और गुमागीर्षों का फल है, मैं तो मात्र एक माध्यम हूँ।

त्रिपय-सूची

नियतिवाद सद्धातिक विन्लेपण	६ २८
(१) नियति गान का अर्थ	६
(२) नियति के पर्याय	६
(३) नियति के पर्याय का वर्गीकरण	१६
(४) नियतिवादा नियमक कनिपय पाश्चात्यमत	२२
(५) भौतिक विज्ञानप्रौढ नियतवाद	२४
(६) अस्तित्वज्ञान प्रौर नियतिवादा	२६
(७) हार्डी का नियतिवादा	२७
भारतीय नियतिवादा का उत्पन्न और विकास	२६ ३६
(१) दलिक ऋतवादा	२६
(२) उपनिषद् साहित्य	३१
(३) पौराणिक साहित्य	३४
(४) महाकाव्य-साहित्य	४६
(५) भारतीय दान	३६
प्रसाद क नाटको म नियतिवादा का स्वरुप	५१ १२०
(१) सजन	५२
(२) प्रापञ्चित	५५
(३) कल्याणालय	५६
(४) रायथी	६६
(५) विनास	७३
(६) अज्ञातगन्तु	७८
(७) जनमजय का नागयज्ञ	८७
(८) कामना	९७
(९) स्कन्दगुप्त	१०४
(१०) क ऋगुप्त	१११
(११) एव घूट	११६
(१२) ध्रुवस्वामिनी	११७
समाहार	१२१ १४०
घयनिचा	१४३ १४६

नियतिवाद सैद्धांतिक विश्लेषण

“नियति” शब्द का अर्थ —

व्युत्पत्ति की दृष्टि से नियमित्यते आत्मा अनयति नियति^१ अयति आत्मा की नियामिका शक्ति नियति है। काव्य प्रवाण^२ के रचयिता मम्मटाचार्य ने भी बाणी की वदना करते हुए नियति^३ शब्द को इसी अर्थ में व्यवहृत किया है^४ जिससे स्पष्ट है कि नियति^५ नियमों की समष्टि के रूप में उभरे भी स्वीकार्य है।

प्रवृत्ति निमित्त अर्थ को लक्ष्य में रखते हुए जात होता है कि नियति^६ का प्रयोग भाग्य दत्त अदृश्य भागधेय विधि भविष्यता दृष्टिकता प्रारंभिक और ईश्वरेच्छा के पर्याय के रूप में भी होता रहा है।^७ अमरकोशकार ने ‘नियति का प्रयोग इसी रूप में किया है।^८ सस्कृत के महाकवि माघ ने भी आसादितस्य तसमा नियतेनियोगात्^९ के द्वारा नियति^{१०} शब्द का प्रयोग भाग्य या दत्त के अर्थ में ही किया है। बाह्यनीय समझकर नियति के पर्यायों की पृथक् पृथक् व्याख्या नीचे दी जाती है।

“नियति” के पर्याय —

भाग्य — व्यक्ति के हिस्से (भाग) में जो कुछ करना और भोगना जाता है उसे भाग्य कहते हैं।^{११} अतः भाग्य वह शक्ति है जो प्राणी मात्र

(१) गदकल्पद्रुम अण्ड २ पृ० ८८६

(२) नियतिवृत्तनियमरहिताम्

—काव्यप्रवाण उल्लास १, श्लोक १

(३) भाग्य के ही अर्थ पर पर्याय दत्त विधि नियति ईश्वरेच्छा भवितव्यता और प्रारब्ध हैं।

हिंदी साहित्यकोश (धीरेन्द्र वर्मा), पृ० ५४०

(४) दत्त दित् भागधय भाग्य स्त्री नियतिविधि

हेतुनाकारण बीज निदान त्वादिकारणम्

—अमरकोश कान्दवग अण्ड १ श्लोक २८

(५) भाग्य गिणुपालवच, ४-३४

(६) हिंदी साहित्यकोश (धीरेन्द्र वर्मा) पृ० ५४०

यं काम का स्वरूप रूप में प्रभावित करती है और उस जिधर चाहे मोड़ देता है। यह वह अनस्य शक्ति है जो मानव जीवन में घटित होने वाली घटनाओं का संचालन करती है जो व्यक्ति या समाज को प्रभावित करती है जो पूर्व निर्धारित होता है कि म पर किसी का वग नहीं चलता जो अपरि यत्नाय है और जिसका किसी का पूर्वज्ञान नहीं होता। इसलिए भाग्य का सर्वप्रथम जन्म से माना जाता है और मनुष्य उसके विषय में कुछ भी कहने में सर्वथा असमर्थ होता है।

उक्त विवरण के अनुसार भाग्य का प्राकृतिक अथवा भू-दिशा या सरल मानव मन पर भाग्य का प्रभाव पर एक और दृष्टि से भी विचार किया जा सकता है। जिस का समस्त वर्णन हमें वास्तविकता में दृष्ट्योचर होती है एक निश्चित और दूसरा अप्रत्याशित—अगर एक ही समय में वस्तुओं और व्यक्तियों के वर्णन में समस्त अस्मृत स्वरूप है और व्यक्ति मृत्यु रूप में अस्मृत में अप्रत्याशित रूप में समष्टि का एक भाग या अंग ही हम प्राप्त करता है। भाग्य का नियत वास्तविकता में भाग्य का ज्ञान है उसी को कुछ लोग न माना जाता है।

सर्वप्रथम के अनुसार भाग्य इच्छा का ही दूसरा नाम है। ईश्वर के नियत है। यह सर्वव्यापी और सर्वज्ञ है। जो समस्त शक्तियों का संचालन और नियंत्रण करता है। इसलिए मनस्य का समाप्ति और घटनाओं का सर्व भाग्य का ही कारण है।

इसलिए हमें भाग्य का ज्ञान ही उनमें मिलता है। उनका अनुसार भाग्य एक सर्वोपरि शक्ति है जिसके नियत नमाब मुक्तकृत है और जिसका अज्ञान ही अज्ञान के समस्त भौतिक नियमों पर आधारित और अज्ञान है। इन सभी ही कि भाग्य वह अनस्य शक्ति है जिसके कारण पृथ्वी पर जितने समस्त घटनाएँ घटित होती हैं।^१

(१) सार्वभौमिक ज्ञान प्राचीन भाग्यवादादिगत साक्षात्कार
भारत १। १२ - २ - १६६) ५

भाग्य की महिमा स महाभारत भरा पड़ा है। भाग्य के सम्मुख ययाति और धनराष्ट्र दोनों ही निष्पत्त हो जाते हैं। भीष्मपितामह का पुरुषार्थ भी भाग्य के आगे शिथिल सा दीख पड़ता है। धनराज तो स्वयं भाग्यवादी बने हुए हैं। उनका विश्वास है कि भाग्य ही अन्तिम और चरम सत्ता है।

भाग्यहीन पुरुष बलवान होने पर भी धन प्राप्त नहीं कर सकता और जो भाग्यवान है वह बालक और दुबल होने पर भी पर्याप्त धन प्राप्त कर लेता है।^१ धृतराष्ट्र भी किसी बान के होने या न होने में मनुष्य का नहीं भाग्य का ही हाथ मानते हैं। विधाता सूत में बड़ी कठपुतली की भाँति सबको नचा रहे हैं।^२

सारांग में भाग्यवाद वह वैचारिक प्रवृत्ति है जिसके प्रभाव से मानव जीवन में स्वतंत्रता की अवास्तविक समझा जाता है। इसमें यत्र तत्र धार्मिक विश्वास का भी पुत्र है जिसके कारण कभी कभी भाग्य को ही ईश्वरेच्छा मान लिया जाता है। सभी युगों में भाग्यवादी भावना ने चिन्तन पर पर्याप्त प्रभाव डाला है।

दव — 'दव का युरपत्तिलभ्य अथ है देवता सम्बन्धी।^३ कोण्वार के अनुसार दव का तात्पर्य है देवता सम्बन्धी देवता का किया हुआ, प्रारम्भ भाग्य आदि^४ योगवासिष्ठवार में भी भाग्य के रूप में दव नाम न किंचन दव न विद्यते आदि कह कर यत्र तत्र इस शब्द का प्रयोग किया है।^५ कुछ स्थानों पर पूव जन्म में किये गये शुभाशुभ कर्मों के अर्थ में भी दव का प्रयोग मिलता है।^६ किन्तु प्रमुखतः यह शब्द भाग्य के पर्याय रूप में ही सर्वाधिक प्रचलित है।

(१) नामागधय प्राप्नोति धन सुखलवानपि

भागधया वितस्त्वर्षाः कृणो वासुदेव विदति ।

—महाभारत अनु० ५०, अ० १६३ पृ० ३२३

(२) अनोन्वरो य पुरुषो भयामधे सूत्रप्रोता दारमयीव योधा

धात्रातु विष्टस्य वने किलाय तस्माद् वदत्व अथण धतो हम ।

—यही उद्यो० प० ५६-१

(३) देवस्यद दय अण (तस्यदम प्र० ४-१-१२०)

(४) नासदा विनाल गवत् सागर पृ० ६२०

(५) B. L. Atreya : The Philosophy of the Yogavashista
P 130

(६) पूष जन्म कृत कर्म तद् धमिति कथ्यते ।

दव अथवा भाग्य की महिमा सबन गाई गई है। ब्रह्मवक्त्र पुराण म लिखा है कि जम कम अगुम सभी दव के अधीन है। यही नही सारा ससार एकमात्र दवाधीन है। इम कारण दव से अधिक और कोई बल नही है।

मत्स्य पुराण म दव का बलन विस्तार पूवक किया गया है। मनु के यह पूछन पर कि दव और पुण्याप म कौन उच्छतर है मत्स्य ने कहा कि दव हा पुण्याकार स श्रेष्ठ है।^१

अद्भुत — सामान्यन अदृष्ट का प्रारंभ भाग्य अथवा किस्मत के अर्थ म प्रयुक्त होता है, सिन्दु वापिका न उक्त का की निम्नलिखित व्याख्या का है —

प्राचीन वंश पत्र साग प्राणिया के धम रूप अदृष्ट का परमाणुमा क प्रथम रूप का कारण बताते हैं। अदृष्ट के सम्बन्ध म उसकी दार्शनिक बल्यता बड़ा विनमल है। अस्तित्व मणि की ओर मूय की स्वाभाविक गति^२ कृपा क भीतर रग का नीच से उपर चला^३ अग्नि की सपना का उपर उटना वायु की निरक्षा गति अदृष्ट जय बनाई जाती है पर पीछ क भावायों न अदृष्ट का सहकारिता से ईश्वरच्छा सा ही परमाणुमा म स्वप्न तथा तत्रय मृत्ति क्रिया मानी है।^४

वापिका शरा किया गया अदृष्ट का उक्त विवरण डिस्मिनिम अथान् नियतिवा स मितता युक्तता है।

कम — कम का योग्यन अर्थ है, वह जो किया जाय वाय कम कृत भाग्य प्रारंभ^५ सिन्दु साधारण बावबाव की भाषा म कम किया क अर्थ म भाग्यन का है।

द्वान म कम का एक विशिष्ट अर्थ है। मनुष्य क वाय स का न क पन अर्थ उक्त होता है। यह पन गुन अगुम या

(१) शिवा विश्व काग (नग्न वपु) भाग १० पृ० ६६२

() अग पृ ६६२

() मणिमन मन्मिमनमनिदृष्ट कारणम । (व सूत्र १-१-१५)

(६) अन्निमन्मिदृष्टकारिम (अग ५-२-७)

() अन्नि उपायय भाग्यय दान पृ

() अन्नि अन्नि अन्नि अन्नि पृ २१०

इन दोनों से भिन्न भी हो सकता है। दान शुभ कम है किन्तु हिंसा अशुभ। यहाँ कम का प्रयाग क्रिया और फल दोनों क लिए हुआ है। अत क्रिया से फल अवश्य उत्पन्न होता है किन्तु शरीर की स्वभाविक क्रियाएँ—ग्रास की फलको का उठना—गिरना सास लेना आदि—कम की कोटि में नहीं आ सकती। क्रिया में जब भावना मिल जाती है तभी कम होता है।^१

कम में विश्वास रखने वाला का मत है कि ससार में कोई राजसी ठाठ-वाट से रहता है और कोई दर दर भटकता है इस वपम्य का कारण कम ही है, भाग्य नहीं। किसी की वर्तमान दशा उसके पूर्वकृत कर्मों के शुभाशुभ फल के कारण ही उदित हाती है। कम विषयक इसी भावना ने भारतीय दक्षिण में कमवाद को जन्म दिया। कमवाद की उत्पत्ति के विषय में ये पक्तियाँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं —

कमवाद की प्रथम अनुभूति ब्रह्मिक यज्ञ के विधान में होती है। ब्रह्मिक विश्वास के अनुसार यदि यज्ञ का विधिवत् संपादन किया जाए तो उससे एक अदृश्य शक्ति उत्पन्न होती है। इसे अष्ट' अथवा अपूर्व कहते हैं। यही उचित अवसर आने पर यज्ञ के वाञ्छित फल को उत्पन्न करती है। इस प्रकार यज्ञ का फल मनुष्य को अवश्य प्राप्त होता है। इस कम और फल के सम्बन्ध की सावभौम नियम के रूप में अभिव्यक्ति सवप्रथम ऋग्वेद के 'ऋत के सिद्धांत में मिलती है।^२ अत कमवाद का मूल स्रोत ऋग्वेदिक ऋतवाद ही है।

कमवाद और पुनर्जन्म का भी अद्भुत सम्बन्ध है। कमवादी मानते हैं कि यह आवश्यक नहीं कि कम भोग भी यही शरीर करे जिसने कम किया है। कम भाग के लिए कर्ता दूसरा शरीर भी धारण करता है। यही पुनर्जन्म का सिद्धांत है। मृत्यु शरीर की आनुपंगिक स्वाभाविक क्रिया है। जिसका कम पर कोई प्रभाव नहीं होता। अत कमवाद को पुनर्जन्म से पृथक् नहीं किया जा सकता।^३

(१) हिंदी विश्व कोश (ना० प्र० स०) भाग २, पृ० ३६८

(२) वही पृ० ३६६

(३) वही, पृ० ३६६

‘दव अथवा भाग्य की महिमा सवन गाई गइ है । ब्रह्मवक्त्र पुराण म लिखा है कि जम कम अगुभ सभी दव के अधीन है । यही नहा सारा ससार एकमात्र दवाधीन है । इम कारण दव से अधिक् और वाई बन नही है ।’

मत्स्य पुराण म दव का वखन विस्तार पूवक् किया गया है । मनु के यह पूछने पर कि दव और पुरुषार्थ म कौ श्रेष्ठतर है मत्स्य न कहा कि दव ही पुरुषकार से श्रेष्ठ है ।^२

अदृष्ट — सामांयत अदृष्ट गण प्रारंभ भाग्य अथवा विस्मृत क अथ म प्रयुक्त होता है, निनु वनेपिका न उक्त गण की निम्नलिखित व्याख्या की है —

प्राचीन वनेपिक लोग प्राणियों के धम रूप अदृष्ट का परमाणु के प्रथम स्पर्श का कारण बताते हैं । अदृष्ट के सम्बन्ध म उसकी दानिक बलपना बड़ी विलक्षण है । अथस्वात मखि की आरंभ्य की स्वाभाविक गति^३ वृक्षा क भीतर रस का नीचे से उपर चटना^४ अग्नि की लपटा का उपर उठना वायु की तिरछी गति अदृष्ट जय बनाई जाती है पर पीछ क आचार्यों ने अदृष्ट की सहकारिता से ईश्वरच्छा से ही परमाणु म स्पर्शन तथा तजय सृष्टि क्रिया मानी है ।^५

वनेपिका द्वारा किया गया अदृष्ट का उक्त विवचन डिटरमिनिम अथान् नियतवा से मिलता-जुलता है ।

कम — कम गण का वोगगत अथ है, वह जो किया जाए काय काम कृत्य भाग्य प्रारंभ किन्तु साधारण वोनचाल की भाषा म कम क्रिया क अथ म भी प्रयुक्त हुना है ।

दान म कम गण का एक विगिष्ट अथ है । मनुष्य क काय से काइ न को पत्र अथय उत्पन्न हुना है । यह पत्र गुभ अगुभ या

(१) हिंदी विश्व कोश (नगड्र धनु) भाग १० पृ ६६२

(२) वही पृ ६६२

(३) मणिमन स्यामिसपणमित्यदृष्ट कारणम् । (ध० सूत्र ५-१-१५)

(४) वक्षामिसपमणित्यदृष्टवारितम् (वही ५-२-७)

(५) बलदेव उपाध्याय भारतीय दान पृ ३ ५

() नातः विगत गण सागर पृ २१०

इन दोनों से भिन्न भी हो सकता है। दान शुभ कम है किन्तु हिंसा अनुभ। यही कम का प्रयोग क्रिया और फल दोनों के लिए हुआ है। अतः क्रिया से फल अवश्य उत्पन्न होता है किन्तु शरीर की स्वभाविक क्रियाएँ—श्राव की पलका का उठना—गिरना, सास लेना आदि—कम की कोटि में नहीं आ सकती। क्रिया में जब भावना मिल जाती है तभी कम होता है।^१

कम में विश्वास रखने वालों का मत है कि ससार में कोई राजसी ठाठ-बाट से रहता है और कोई दर दर भटकता है, इस वषम्य का कारण कम ही है, भाग्य नहीं। किसी की वर्तमान दशा उसके पूर्वकृत कर्मों के शुभानुभ फल के कारण ही उदित होनी है। 'कम विषयक इसी भावना ने भारतीय दर्शन में कमवाद' को जन्म दिया। कमवाद की उत्पत्ति के विषय में ये पंक्तियाँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं —

कमवाद की प्रथम अनुभूति घटिक यज्ञ के विधान में होती है। बटिक विश्वास के अनुसार यदि यज्ञ का विधिवत् संपादन किया जाए तो उससे एक अदृश्य शक्ति उत्पन्न होती है। इसे 'अष्ट अथवा अपूर्व कहते हैं। यही उचित अवसर आने पर यज्ञ के वांछित फल को उत्पन्न करती है। इस प्रकार यज्ञ का फल अनुष्य को अवश्य प्राप्त होता है। इस कम और फल के सम्बन्ध की सावभौम नियम के रूप में अभिव्यक्ति सर्वप्रथम ऋग्वेद के 'ऋतं क सिद्धांत में मिलती है।^२ अतः कमवाद का मूल स्रोत ऋग्वैदिक ऋतवाद ही है।

कमवाद और पुनर्जन्म का भी अद्भुत सम्बन्ध है। कमवादी मानते हैं कि यह आवश्यक नहीं कि कम भोग भी वही शरीर कर जिसने कम किया है। कम भोग के लिए कर्ता दूसरा शरीर भी धारण करता है। यही पुनर्जन्म का सिद्धांत है। मृत्यु शरीर की धानुषगिक स्वाभाविक क्रिया है। जिसका कम पर कोई प्रभाव नहीं होना। अतः कमवाद को पुनर्जन्म से पृथक् नहीं किया जा सकता।^३

(१) हिंदी विश्व कोश (ना० प्र० स०) भाग २ पृ० ३६८

(२) यही पृ० ३६६

(३) यही, पृ० ३६६

सत्य जितको ने सचित त्रियमाण (वतमान) और प्रारम्भ के भेद से कम की तीन गतियाँ बताई हैं। अनेक जन्मों में सचित किये हुए पुराने कर्म को सचित कम कहते हैं। बहुत समय से सचित किया हुआ शुभ कर्मवा अशुभ कर्म वर्तमान जन्म में पुण्य एवं पाप के रूप में सामने आता है। प्रत्येक जन्म में प्राणियों द्वारा कम सचय होता रहता है। जो त्रियमाण कम है। उसी को वतमान कम कहते हैं। देहधारी जीव शुभ कर्मवा अशुभ रूप में कम में प्रवृत्त हो जाते हैं। शरीर धारण कर लेने पर काम की प्रेरणा से कर्म त्रय भानू हो जाते हैं। प्रारम्भ कम उसे समझना चाहिए जो सचित कर्म से प्रारम्भ हो गया है। ज्ञानी को भी प्रारम्भ कम अवश्य भोगना पड़ता है। इसमें कोई शक्य नहीं। यह निश्चित है कि पूर्व जन्म में किये गये जितने कर्म और बुरे कम हैं उनका फल वतमान जन्म में सामने आते हैं। उन्हें भोगना प्राणियों के लिए अनिवार्य हो जाता है। मनुष्य दैवता यक्ष गधर्व और विद्वान सभी कर्म भोग में परतन्त्र हैं। देहधारण करने में भी कम ही मुख्य कारण है। मनुष्य के वतमान सुख-दुःख पूर्व जन्म के कम के ही परिणाम हैं। अतः सिद्ध है कि अनेक जन्मों में सचित जितने कम हैं उनमें से कम-एक एक कम का भोग प्राणियों के सामने समयानुसार आता रहता है। देवगण भी इनसे नहीं बच सकते।^६

कम के दृढ़ समर्थन बुद्धिवादी मीमांसक हुए हैं जिनका कहना है कि मानव जीवन का सबसे बड़ा चमत्कार ^७। उन्होंने यह प्रतिपादन किया है कि कम ही वह शक्ति है जिस ^८ कम किया जाता है। भाग्य की ^९ ही होती है।
 ही का दूसरा नाम पुरु ^{१०} और भाग्य ^{११} है।

महाभारत में भी कर्म का महत्त्व अनक स्थला पर उद्घाटित किया गया है कर्म से प्राणी बाँधा जाता है और विद्या से उसका छुटकारा हो जाता है।^१ कर्म की पकड़ इतनी गहरी है कि उससे जन्म-जमान्तर में भी छुटकारा नहीं मिलता पूव की सृष्टि में प्रत्येक प्राणी ने जो जो कर्म किये होंगे ठीक वे ही कर्म उसे (चाहे उसकी इच्छा हो या न हो) फिर फिर कथा पूवक प्राप्त होते रहते हैं।^२ दार्ष्टि पर म भीष्म युधिष्ठिर से कहते हैं, हे राजन्, यदि यह देख पड़े कि किसी व्यक्ति को उसके पाप-कर्मों का फल नहीं मिला, तो समझना चाहिए कि वह फल उसके पुत्रों, पौत्रों और प्रपौत्रों को भागना पड़ेगा।^३

वास्तव में कर्मवाद भारतीय दार्ष्टियों में अधिवाग दशनों का प्रमुख स्वर रहा है। बल्कि साहित्य में भी कर्मवाद की ही महत्ता गायी गई है, भाग्यवाद अथवा नियतिवाद वहाँ दूढ़ने पर भी नहीं मिलेगा। हमारे सुधन नियति न मानते थे। उनका यहाँ तक विश्वास था कि जो लोग निमित्त मानते हैं वे बुद्धिमान नहीं क्योंकि ऐसा विश्वास रख कर कोई भी सौंप के मुह में नया पुमना कि कपाल में जो लिखा है वह अवश्य होगा।^४

उपरोक्त वणनों से स्पष्ट हा जाता है कि भारतवर्ष में जहा एक ओर भाग्यवाणी भावना का प्रचार प्रसार था वहीं दूसरी ओर कर्मवाद भी यापक रूप से प्रचलित था। यह कर्मवाद भाग्यवाद में कौनो दूर था। पश्चिम में त्रिस काम कारण-परम्परा हीन भाग्यवाद का विकास हुआ भारतीय कर्मवाद में उसका भूलक मिलनी भी मुश्किल है। कर्मवाद एक सवथा बजानिक सिद्धान्त रहा है जो काय और कारण की परम्परा को लेकर चला इसके अधिष्ठाना देव बरुण का बणन अनेक स्थलों पर किया गया है। अत भारत वासी भूलत कर्म के पुजारा थे और इनके इस कर्मवाद को भाग्यवाद कदापि नहीं कहा जा सकता।

(१) कर्मणा बध्यते जन्तुविद्यया तु प्रमुच्यते—महाभारत गार्ति प० २४० ७

(२) देवा ये धानि कर्माणि प्राकसृष्ट्यां प्रतियदिरे तायेव प्रतिपद्यते सम्पमान पुन पुन । वही २८१-४८

(३) पाप कर्म कृत किञ्चिदपि तस्मिन् दृश्यते नृपते तस्य पुत्रेषु पौत्रेष्वपि च नप्तुः । वही १२६-२१

(४) हिम्वी विश्वकोण (मनेत्रनाथ वसु) भाग १, पृ० ३३४

विधि —साधारणत इस शब्द का प्रयोग किसी काय का सम्पान्ति करने के लिये रात्रि या प्रणाला के अर्थ म होता है। शास्त्रा म विधि शब्द का उस भाषा के रूप म प्रयुक्त होता है जिसका पालन नियमानुसार अवश्य किया जाना चाहिए।

किन्तु दान म यह शब्द प्रवृत्ति नियमि भाग्य प्रारब्ध तन्वीर अदृष्ट और कर्म के पर्याय के रूप म भी यत्र-तत्र प्रयुक्त होता है।^१ विधीयते मुगदु के अनन्त विधानि अर्थात् 'विधि वह है, जिसके द्वारा मुख-दुःख का विधान होता है।'^२

भागधेय — भागधेय स तात्पर्य है भाग्य किस्मत प्रारब्ध।^३ हिन्दी विश्व कोश मे इसकी परिभाषा भाग्य धीयते सौवा कर्मणियत् कर्त्त कर दी गई है।^४ स्पष्ट है कि इस शब्द का प्रयोग भी भाग्य के अर्थ म हाता है।

प्रारब्ध — प्रारब्ध का शास्त्रिक अर्थ है प्रारम्भ किया हुआ। अर्थात् जिस कर्म का फल भोग प्रारम्भ हो चुका है उसे प्रारब्ध कहते हैं।^५ किन्तु इस शब्द का प्रयोग अदृष्ट भाग्य और किस्मत के पर्याय रूप म भी किया जाता है।^६

ललाट रेखा —साधारणत ललाट क अर्थ मस्तक अथवा माथे स लिखा जाता है किन्तु यह शब्द प्रचलित है कि छठी के दिन भाग्य देवी आकर माथे पर मनुष्य का भाग्य लिख जाती है और उसी के अनुसार ही उस जीवन यापन करना पडता है। इस लिखावट म राई रत्ती भी परिवर्तन असम्भव है। ललाट के इमी लेख का ललाट रेखा कहते हैं। इसलिए इस शब्द का प्रयोग भाग्य या किस्मत का निश्चय ललाट म लिखा होना भाग्य या किस्मत म लिखा हुना के रूप म होता है।

(१) हिन्दी विश्व-कोश (नग-द्रनाय वसु) भाग २१ पृ० ४०७

(२) वही पृ० ४०७

(३) नालन्दा विशाल शब्द सागर पृ० १ १६

(४) हिन्दी विश्व-कोश (नग-द्रनाय वसु) भाग १६ पृ १५

(५) नालन्दा विशाल शब्द सागर पृ० ६१८

(६) हिन्दी विश्व-कोश (नग-द्रनाय वसु) भाग १४ पृ ७३८

(७) नालन्दा विशाल शब्द सागर पृ० १२०४

भवितव्य — भवितव्य का अर्थ है अवश्य होने वाली बात होनेहार भाग्य, अदृष्ट '१' इसका गार्हिक अर्थ है होने योग्य किन्तु यह भाग्य क अर्थ में भी प्रयुक्त होता है। यथा अथवा भवितव्यताना द्वाराणि भवन्ति सबन्त ।

दृष्टिकता — दृष्टिक का अर्थ होता है भाग्य के भरोसे रहने वाला ।^२ इसी से दृष्टिकता^३ शब्द प्रयुक्त हुआ है। अतः इस शब्द का अर्थ भी भाग्य अथवा प्रारब्ध ही है।

दिष्ट — 'दिष्ट' का अर्थ है नियत अथवा अवश्य होने वाला जसा कि निर्दिष्ट शक्ति शक्ति से स्पष्ट है। इस शब्द का प्रयोग भी नियति दृष्टिकता आदि के अर्थों में किया जाता है।

भाग्यांश — भाग्यांश का तात्पर्य है भाग्य द्वारा अंग में मिला हुआ। यह शब्द भाग्य और भाग्येय से मिलना-जुलना-सा है तथा देव नियति प्रारब्ध विधि भवितव्यता विस्मृत नसीब तकदीर आदि का पर्यायवाची भी है।

भावी — भावी का अर्थ है ज्ञानवाला समय, भविष्य में अवश्य होने वाली बात आदि। यह शब्द भी भवितव्यता होने की तकदीर भाग्य आदि के अर्थों में प्रयुक्त होता है।

विधाता — विधान करने वाले उत्पन्न करने वाले अथवा जन्म देने वाले को विधाता कहते हैं। यह शब्द ब्रह्मा और ईश्वर आदि के लिए भी प्रयोग में आता है क्योंकि एसा विश्वास किया जाता है कि इनके द्वारा ही सृष्टि निमित्त हुई है किन्तु साधारण बात चाल की भाषा में भाग्य अथवा ईश्वरच्छा के लिए भी विधाता का प्रयोग प्रचलित है।

अव — इस शब्द का गार्हिक अर्थ है बिना या निगान किन्तु यह शब्द भाग्य पर नियत विधि के अर्थ का सूचक भी है और भाग्य अथवा विस्मृत के अर्थों में भी प्रयुक्त होता है।

(१) हिंदी विश्व कोश (नगरनाथ धनु) भाग १६ पृ० ६७

(२) मालवा विशाल शब्द सागर पृ० ६२१।

(३) मालव्यते दृष्टिकता (माघ)

हानी — हानी अवश्य होन वाली बात या घटना को कहते हैं। भावी भविष्यता होनहार आति इसके पर्याय हैं।

होनहार — इस शब्द का अर्थ भी हानी की तरह उस बात से है जो घटल हो तथा होकर ही रहे। इसका प्रयोग हानी भावी भविष्यता आति के अर्थों में होता है।

हठ — वैसे इस शब्द का अर्थ जिद हठ प्रतिज्ञा अथवा टेक से होता है किन्तु भाग्य की घटलता के लिए विधि का हठ भाग्य का हठ आदि कह कर अथवा हठ कहकर नियति की दृढमनीयता को दर्शाया जाता है जसा कि हठात् आदि प्रयोगों से भी स्पष्ट है।

सयोग — दो या दो से अधिक बातों का एक साथ घटित होना सयोग कहनाता है। किन्तु भाग्य भावी अथवा ईश्वरेच्छा के लिए भी सयोग का प्रयोग बहुधा देखा जाता है।

काल — काल शब्द उस सम्बन्ध सत्ता को व्यक्त करता है जिसके द्वारा भूत भविष्य और वर्तमान आदि की प्रतीति होनी है। इस शब्द का प्रयोग भी नियति भाग्य और अदृष्ट आति के अर्थों में होना है।

कृतात् — बाल्मीकि रामायण में भाग्य आति के अर्थ में विधि काल नियति भविष्यता इव और कृतात् आति शब्दों का प्रयोग हुआ है। देव के बाद सर्वाधिक प्रयोग कृतात् शब्द का हुआ है। एक उदाहरण दिए —

एवयं वा सुविस्तीर्णं यसा वा सुदारणे
रवत्र पुण्य बध्वा कृतात् परिक्रपति^१

अर्थात् अत्यधिक विस्तीर्ण ऐवय हा भयकर स भयकर आपाद हो फिर भी भाग्य रस्ती की तरह बाध कर पुरुष को लीचता है।

ऋत — ऋग्वेद में ऋत शब्द का व्यापकता से प्रयोग हुआ है। वहिक ऋषियों ने ऋत का ही सत्ता के नियम चक्र का और ब्रह्माण्ड में व्याप्त समस्त व्यवस्था का एक मात्र कारण माना है। ऋत वह अमर नियम विधान है जो मूलतः ननिक सिद्धान्तों पर आधारित है। वहिक साहित्य में वर्णित यह ऋतवाणी भावना नियति की अदृष्ट काय कारण-पर परा वाली विचारधारा से बहुत कुछ भिन्नती जुलनी है।

तक्षदीर (तक्रदीर) — यह शब्द भी प्रचुरता से भाग्य प्रारम्भ ग्रहण, एवं किस्मत और मुकद्दर आदि का पर्यायवाची बनकर प्रयुक्त होता है।

किस्मत — किस्मत का अर्थ है भाग्य, अष्ट प्रारम्भ तादात्म्य आदि। 'किस्मत आत्रमाना विन्मयत कूटना 'किस्मत चमकना' आदि मुहावरों से भी यह स्पष्ट हो जाता है कि यह शब्द 'भाग्य' का ही पर्याय है।

मुकद्दर — इस शब्द का प्रयोग भी प्रारम्भ भाग्य, अष्ट किस्मत, तक्षदीर नसीब भाग्य आदि के लिए किया जाता है।

सितारा — वैसे 'सितारा' का अर्थ है तारा, नक्षत्र, ग्रह आदि किन्तु भाग्य, प्रारम्भ, तक्षदीर, नसीब, किस्मत आदि के लिए भी शब्द का प्रयोग प्रचलित है जसा कि 'सितारा चमकना', 'सितारा बुलन्द होना', अति मुहावरों से स्पष्ट है, जो भाग्योदय होने अथवा अशुची किस्मत होने के अर्थ में प्रयुक्त होते हैं।

वक्त — वक्त का शाब्दिक अर्थ है समय, अवसर मौका जमाना, ऋतु, मौसम आदि लेकिन सांस्कृतिक रूप में इस शब्द का प्रयोग भी हिन्दी शब्द काल की तरह से किया जाता है। इस प्रकार वक्त शब्द का अर्थ भाग्य किस्मत नसीब आदि के लिए इस्तेमाल होता है। वक्त का क्या ठिकाना' वक्त बुरा है' 'वक्त से बच कर चलो' वक्त सब कुछ बरा दता है वक्त में साथ नहीं लिया', आदि मुहावरों से भी यह स्पष्ट है।

नसीब — भाग्य प्रारम्भ किस्मत मुकद्दर आदि के अर्थों में 'नसीब' का प्रयोग व्यापक रूप से किया जाता है। मुहावरों में भी भाग्य के अर्थ में 'नसीब' का प्रयोग काफी मात्रा में होता है जस— नसीब में यही बदा या आदि।

नियति के पर्यायों का वर्गीकरण —

नियति के उपरोक्त पर्यायवाची शब्दों का व्युत्पत्तिपरक और प्रवृत्तिपरक अर्थों के सम्बन्ध में विवेचन निम्नलिखित करने के पश्चात् यह धारणा बनती है कि सभी शब्दों की आत्मा एक नहीं है। उक्त भिन्न भिन्न शब्दों का भिन्न भिन्न अर्थों में प्रयोग किया जाता है। कुछ शब्दों द्वारा अथवा फल मूलक हैं तो कुछ शब्दों का बोध कराने हैं। इस प्रकार कुछ शब्दों किसी अन्दर दबी सत्ता की धार संकेत करते हैं तो कुछ शब्दों का अर्थ-कारण की परम्परा से युक्त सामान्य नियम विधान को प्रकट करते हैं। इन आधारों पर 'नियति' के पर्यायों का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है —

नियम अथवा फल सूचक शब्द	कर्ता बोधक शब्द	दियता सूचक शब्द	नियम बोधक शब्द
नाम्य प्रारंभ भविष्यता भावो हानी होनहार भागधय कृतान्त भाग्याग तकरीर नसीब विस्मय कहाट रेखा मुक्तर	अदृष्ट (भाग्य के अर्थ में) विधि विधाना काल नियति (चेतन सत्ता) वक्त	दव सितारा हठ सयोग	नियति श्रुत कम अदृष्ट (वशेषिक) दृष्टिकता

उपरोक्त शब्दों में से अदृष्ट तथा नियति ऐसे शब्द हैं जिनका बहुधा निःशक प्रयोग होता है। अदृष्ट मुख्यतः कर्ता बोधक रूप में भाग्य का पर्यायवाची बन कर प्रयोग में आता है। तबिन वगैरिका न इस शब्द को काय कारण परम्परा सहित नियम बद्धता के अर्थ में प्रयुक्त किया है। इसी प्रकार नियति का कुछ नाम चेतन सत्ता मानते हैं। ऐसा स्वीकार कर लेने पर ये कर्ता बोधक शब्द बन जाते हैं। किन्तु जन्मादी दार्शनिक नियति का प्रयोग अव्ययभावी नियम परम्परा के अर्थ में करते हैं।

निष्कर्ष — नियतिवादी भावना को यत्न करके निकालने अधिक पर्यायों से यह बात स्पष्ट हो जानी है कि हमारे देश में यह एक वाक्य भावना रही है। जब मनुष्य में भी यत्न अधिक शक्ति का प्रचुरता से प्रयोग होता यही प्रकट करता है कि यह भावना मानव मन में काफी गहरी बँठी गई है। वासीर रामायण में अक्षय ही राक्षस पात्र नियति भाग्य आदि शब्दों का प्रयोग नहीं करते। जिससे कुछ विद्वानों ने यह निष्कर्ष निकाला कि

द्वय सिद्धांत आय सिद्धांत ही था और राक्षसी ने इसे मायता प्रदान नहीं की थी। किंतु ऐसा कहना मयाग म सत्य नहीं है क्योंकि उक्त प्रथम राक्षस सिद्धांत 'व गच्छ' का यत्र-तत्र प्रयोग किया है।^१ हमारा उद्देश्य यहाँ इस बात विचार में पड़ना नहीं मात्र यह सिद्ध करना है कि आय लागों में ही नहीं, राक्षस समक्षम में भी भाग्यवाणी भावना का किसी भ्रम में प्रचार अवश्य था।

यदा का संस्कृति में भी भ्रष्ट सम्बन्ध होता है। एक ही भाव विरोध को व्यक्त करने के लिए लोक प्रचलित इतने अधिक गानों से यह संकेत भी मिलता है कि हमारा सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में भी भाग्य नियति आदि भ्रष्ट गतिविधियों का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि इन सभी गानों के मुख्य रूप से दो विभाग बन गये हैं। कुछ गान—जैसे ऋतु नियति कम आदि—ऐसे गान हैं जो कार्य-कारण का श्रृंखला का संचालन वाले भ्रष्ट नियम विधान के सूचक हैं, तथा प्रथम कुछ शब्द—जैसे दय भ्रष्ट विधाता आदि—ऐसे गान हैं जो किसी भ्रष्ट नियम विधान का भावना का तो स्वीकार नहीं करते लेकिन किसी अलक्ष्य दिव्य शक्ति की सत्ता अवश्य मानते हैं। गानों में ये दो विभाग इस बात के प्रत्यक्ष प्रमाण हैं कि भाग्यवादी तथा नियमवादी दो प्रकार की नियम भावना हमारी संस्कृति में विद्यमान है।

यहाँ पर यह प्रश्न भी विचारणीय है कि इस विश्व में मात्र 'नियम' ही है अथवा उस 'नियम' का कोई निषामक भी है? यह प्रश्न जडवादी और अध्यात्मवादी दार्शनिकों के मध्य अत्यंत मतभेद का विषय रहा है। प्रथम-दशक के विचारक प्रकृति का कार्य-कारण परम्परा का तो मानते हैं पर उससे पात्र विज्ञान चेतना सत्ता का अस्तित्व उक्त स्वीकार नहीं। द्वितीय दशक के विचारकों की मायता है कि प्रकृति के समस्त नियमों का नियन्त्रक चतन ईश्वर ही है।

समस्त पर्यायवाची गानों के प्रवृत्ति और व्युत्पत्ति तन्मय श्रमों के पर्यवेक्षण से ज्ञान होता है कि नियति सम्बन्धी यह भावना साधक हान के साथ-साथ अत्यन्त ही घृणित अस्पष्ट और जटिल भी है। सभी गानों के विषय में कहा जा सकता है कि लाग इनका एक ही विषय अथवा प्रयोग न कर परिस्थिति प्रसंग और कार्य-व्यापार की पृथक्ता के कारण भिन्न भिन्न सदस्यों में प्रयोग करते हैं निम्ने हम यह निष्कर्ष निगूत सकते हैं कि 'नियम विषयक यह प्रत्यय (Concept) स्थितिगत नहीं गतिशील है—निरपेक्ष नहीं साधक

है। इसी कारण उसे हृदयगम करना तथा उसे सुनिश्चित अथवा प्रदान करना कठिन ही नहीं असम्भव सा जान पड़ता है।

फिर भी यह तो क्या ही जा सकता है कि हमारे देशवासी इस समस्त ब्रह्माण्ड के पीछे निश्चित नियम का मान कर चलें और हमारा नियतिवाद काय कारण की अटूट श्रृंखला को लेकर चला। प्रीववासिया की जो भाग्यवादी कल्पना है वसी कल्पना हमारे देश में सामान्यतः नहीं मिलती। भारतीय दर्शन का मुख्य स्वर कर्मवाद ही है अर्थात् भाग्यवाद हमारी विचार धारा की परिधि में नहीं आता।

नियतिवाद के सम्बन्ध में तथा उसके पर्यायों का लेकर ऊपर जो विवरण प्रस्तुत किया गया है उससे इस शब्द के तीन प्रकार के अर्थ हमारे सम्मुख स्पष्ट होते हैं —

(क) किसी सुनिश्चित नियम पद्धति का नाम नियति है।

(ख) अखिल ब्रह्माण्ड में जो व्यवस्था व्याप्त है उसके मूल में कार्य चेतन सत्ता है जिसे नियति कहते हैं।

(ग) भाग्य के अर्थ में 'नियति' का प्रयोग अत्यन्त प्रसिद्ध है। यथा

प्राप्तव्यो नियतिबलाभयेण योय
सो वश्य भवति नणां शमो गभोवा ।
भूतानां महितं कृते पि हि प्रयत्ने
नामाध्य भवति न भाविनोस्ति नाग १

अर्थात् अनुपय के लिए जो कुछ भी शुभ या अशुभ नियति के बल पर होने वाला है वह होकर ही रहेगा। प्राणी चाहे कितना भी क्या प्रयत्न करे जो कुछ नहीं होने वाला है नहीं होगा और इसी प्रकार जो होने वाला होगा उसका नाश भी नहीं हो सकेगा।

आगे हम 'नियति' अर्थात् 'नियतिवाद' शब्दों का प्रयोग यथास्थान इन तीनों अर्थों में करेंगे।

नियतवाद विषयक कतिपय पाश्चात्य मत —

जिस प्रकार हमारे यहाँ नियतिवाद शब्द बहुत प्रचलित है वैसे ही पाश्चात्य दर्शन में डिटरमिनिज्म (Dete minism) शब्द व्यापक रूप से प्रयुक्त आता है डिटरमिनिज्म का अर्थ नियतवाद अथवा अविनाशक नियतिवाद अर्थात्

अनुभव का प्रमाण दिया जाता है। उक्त शब्द के पर्याय रूप में 'नियतवाद' (नियतिवाद नहीं) शब्द का प्रयोग समीचीन जान पड़ता है। नियतवादियों का अनुसार व्यक्ति निश्चित नियमों द्वारा अनुगमित होता है। बगानुक्रम, चरित्र, वातावरण आदि का पूरा प्रभाव उस पर पड़ता है और वह समान परिस्थितियों में एक समान व्यवहार करता है। परिस्थितियाँ बदल जाने पर उसका व्यवहार में भी परिवर्तन हो जाता है। जे० बी० वाटसन आदि व्यवहारवादी यह मानकर चलते हैं कि किसी मनुष्य के व्यक्तित्वनिर्माण तथा व्यवहार-पद्धति पर वातावरण का सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। यदि किसी का व्यक्ति के पूर्ववर्ती जीवन का जानना हो तो उसका व्यवहार के सम्बन्ध में एक प्रकार से भविष्यवाणी की जा सकती है। 'व्यक्ति हतुवाद' (Law of Causality) का अनुसार कार्य करने पर विचार है और उसे किसी भी प्रकार की इच्छा की स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं है। नियतवादियों की दृष्टि में हतुवाद और इच्छा स्वातन्त्र्य का विरोधी शब्द है। हमारे मतानुसार व्यक्ति किसी भी काम का स्वतन्त्रतापूर्वक महा कर सकता क्योंकि उसका निरपेक्ष इच्छा शक्ति का पूरा नियतिन करना संभव नहीं है। शासकीय भाँति हम भी नियतवाद का समर्थन या उमक मतानुसार मनुष्य का सभी कार्य अवश्यभाविता (Necessity) के बंधन नियमों का अनुसरण करते हैं और उसे किसी भी प्रकार का स्वातन्त्र्य प्राप्त नहीं है। स्वतन्त्रता का भी मापता भी का सीमा मानव स्वतन्त्र नहीं माना जा सकता स्वतन्त्र तो केवल स्वतन्त्र है। स्वतन्त्र इच्छा शक्ति कबल स्वतन्त्र का धारिता है जो धर्मों एवं धर्मों है।

दूसरा शब्द एम भी विचारक हैं जिन्हें अनियतवादी (Indeterminist) कहा गया है। उनका मतानुसार व्यक्ति जब को-चनाव अथवा नियम करता है तो वह किसी पूर्ववर्ती याजना अथवा अनुगत उद्देश्य का दृष्टि में रख कर ऐसा नहीं करता। उसके नियम में संयोग-सत्त्व का ही प्रमुखता देखी जाता है। जेम्स मार्टिन उक्त मत के समर्थक हैं।

नियतवाद और अनियतवाद का अनिश्चित एक-दूसरे मूहत्वपूर्ण निदान भी है जिसे आत्म नियतवाद (Self Determinism) का नाम में अभिहित किया जाता है। अस्तित्व का समय ही हम निदान का प्रचलन रहा है। हमारे अनुसार व्यक्ति भले या बुरे के चुनाव में स्वतन्त्र है। वह स्वतन्त्रता की चुनता है जो उसके उद्देश्यपरत रूप में सामर्थ्य रखता है। न प्रोजन मनुष्य मनुष्य प्रकृत विना विना प्रयाजन का तो मृग व्यक्ति का किसी

काम में प्रवृत्त नहीं होता। चुनाव की स्वतंत्रता होने के कारण ही सन् अमृत पाप-पुण्य तथा भले-बुरे का दायित्व उस व्यक्ति विनाप का माना जाता है। प्रसिद्ध जर्मन दार्शनिक काएंट के मतानुसार इच्छा स्वातंत्र्य का 'यावहारिक' मूल्य है। इच्छा की स्वतंत्रता ही ता नतिव्रता की आवश्यक मायता (Postulate) है। ब्रह्मा भी मनुष्य की स्वतंत्रता के पश्यापका म स है।

निष्पत्ति के रूप में हम कह सकते हैं कि नियतवाद तथा अनियतवाद दोनों में सत्याग निश्चि है। आत्म निर्णय अथवा आत्म नियतवाद द्वारा उक्त दोनों प्रतिवादों में सामग्रस्य स्थापित किया जा सकता है। यह कि ना यथाय के अधिक निकट होगा कि मनुष्य न तो भौतिक वस्तु के समान परत प्ररित (Determined) है और न वह स्वेच्छाचारी (Indetermined) अपितु अपनी आत्मा के प्रकाश में उसमें आत्म नियंत्रण (Self determination) की क्षमता है।

भौतिक विज्ञान और नियतवाद —

वैज्ञानिक दृष्टि के आलोक में यह विचारणीय है कि इस विश्व में काय कारण सिद्धान्त अव्यभिचरित रूप से लागू होता है अथवा कुछ ऐसे भी काय या ऐसी भी घटनाएँ हैं जिनकी परिणति केवल समाग की श्रृंखला है ?

वैज्ञानिकों के मतानुसार काय कारण सिद्धान्त और नियतवाद में थोड़ा अन्तर किया जा सकता है। रात के बाद दिन और दिन के बाद रात आती है किन्तु रात दिन का कारण नहीं और न दिन ही रात का कारण है। फिर भी दिन को देखकर हम भविष्यवाणी कर सकते हैं कि दिन के बाद रात अवश्य आती इसी प्रकार रात के बाद दिन अवश्य आता है। यह तो दृष्टा नियतवाद (Determinism) किन्तु यदि हम यह कह पृथ्वी के सप्रमण से दिन और रात आने हैं तो पृथ्वी का सप्रमण दिन और रात का कारण है—इसे हम हनुवात् (Causality) अथवा काय-कारण सिद्धान्त कह सकते हैं।

हम सम्बन्ध में हम पुराने भौतिक-शास्त्री 'न्यूटन और गैलिलियो के बहुराज में करणी हैं। वे यह मानकर चरन थे कि यन्त्रि कि-ही पारभिक भित्तिया का ज्ञान हा जाय तो किसी पत्ताय व कण (Particles) के सम्बन्ध में भविष्यवाणी का जा सकता है। 'न्यूटन यांत्रिकशास्त्र' (Newtonian Mechanics) के मनानुसार हनुवात् तथा नियतवाद माना ही सत्य मान गया। तबिन प्राग चरकर गणों के सम्बन्ध में उक्त यांत्रिकशास्त्र के सिद्धान्त से

बाम न चला । उसके स्थान में माटिपकी सिद्धांत (Law of Statistics) का प्रयत्न हुआ । प्रायः चलकर जब माटिपकूलस प्राटोस प्राणि का अध्ययन किया जाने लगा तो वे गतिगाली अग्नवीक्षण यथा द्वारा भी दृष्टि पय म न आ सके । इसकी व्याख्या क लिए सम्भाव्यता सिद्धान्त (Theory of Probability) की आवश्यकता पड़ी । प्रश्न यह था कि क्या हम किसी कण की स्थिति या वेग दोनों का एक साथ निर्धारण कर सकते हैं ? बड़ी वस्तुओं के लिए तो यह भल ही सम्भव है किन्तु छोटे कणों अथवा अणुओं के लिए यह असम्भव है । देखते के लिए प्रकाश अपक्षित है किन्तु प्रकाश भी तो सूक्ष्म-कणों की धारा का ही रूप है । जब हम विद्युत्कण का परीक्षण करते हैं तो प्रकाश का आश्रय लेते हैं लेकिन ऐसा करने से उस कण की स्थिति में परिवर्तन हो जाता है । इसलिए मूल स्थिति के स्थान में हम उसके परिवर्तित रूप का ही दान कर पाते हैं । इस प्रकार वस्तु निर्धारण में अनिश्चयात्मकता की स्थिति का आना अनिवार्य हो गया । हेजेनबर्ग (Heisenberg) ने अनिश्चयात्मकता का निर्धारण करते हुए कहा है कि प्रकृति में नियतवाङ्ग नही अनियतवाङ्ग पाया जाता है ।

यद्यपि भौतिक विज्ञान में किसी सूक्ष्म कण की स्थिति (Position) और वेग (Velocity) को एक साथ नहीं मापा जा सकता किन्तु हम निष्कर्ष करता हुआ कि दाना में से एक को चुनें । मस्तिष्क की भौतिक रासायनिक प्रक्रिया (Physico-Chemical Process) के परिणाम में भी यही बाधा आती । क्योंकि ऐसा करने पर माटिपक प्रक्रिया में भी बाधा पड़ेगी ।

भौतिक विज्ञान किसी भीमा तक माटिपक स्वातंत्र्य का स्वीकार करता है किन्तु पूर्ण स्वतंत्रता सम्भव नहीं । आइंस्टाइन ने यद्यपि यह माना कि अनियतवाङ्ग में सबाई है किन्तु उसने इसमें पूर्णतः विश्वास नहीं किया और न ही अपने विश्वास के लिए समने बाई तक ही प्रस्तुत किया ।

निष्कर्ष — नियतवादी दृष्टिकोण के समर्थक अपने मत की पुष्टि में तब देते हुए कहा करते हैं कि ऊपर फेंका हुआ पत्थर यह साच सकता है कि वह स्वतंत्र है किन्तु वस्तुतः वह गुरुत्वशक्ति के नियंत्रण में है । यहाँ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि यह प्राचीन तक उस युग से सम्बन्ध रखता है जब प्राचीन सप्तवादी नियतवाद (Laplacien Determinism) स्वीकार किया गया था । जसा ऊपर कहा गया है सन १९०० के लगभग उसका स्थान अकारमव नियतवाद (Statistical Determinism) ने ले लिया

जिसमें सत्याग की प्रधानता है और जो सद्भाविक रूप से इस बात को स्वीकार कर लेता है कि अस्थिरता में अन्ततः नियम के विरोध करने की क्षमता है। इस धारणा के अनुसार उक्त घटना में यह सोचा जा सकता है कि ऊपर फका जाना पत्थर नीचे न गिरे। किन्तु व्यवहार में ऐसा कभी नहीं होता। दार्शनिक और तार्किक दृष्टि से भी यह तर्क निरर्थक है। पत्थरी बात (पत्थर की गति) तो असन्निध्य और दूसरी बात (मनुष्य की गति) सन्निध्य है।^१ पत्थर चाहे कुछ भी सोच (यदि उसमें साचने की शक्ति दलील के लिए ही मान लें) हम प्रयोगात्मक रूप से जानते हैं कि उसमें लिए पत्थरी या खनाव का प्रश्न ही नहीं क्या कि हमने पत्थर को कभी गुरबा कपण के निद्रम के विरहीत काम करने देखा ही नहीं। मान लीजिए पत्थर साचना भी है तो उनमें अवश्य ही निष्पत्ति कर लिया होगा कि वह भूमि पर ही गिर। किन्तु मनुष्य के सम्बन्ध में यह सोचना होगा कि क्या उसका विकास भा यात्रिक तथा केवल परत प्रेरित है? प्रश्न यह है कि वह मात्र अपनी प्राकृतिक प्रवृत्तियों से प्रेरित होकर कार्य करेगा अथवा विवेक तथा स्वतंत्र चिन्ता शक्ति का आश्रय लेकर प्रगति के पथ पर आगे बढ़ेगा? यदि मनुष्य का कार्य यात्रा कवन यात्रिक ही हो तो भावी विकास की कल्पना ही नहीं की जा सकती किन्तु हम जानते हैं कि मनुष्य प्रगतिशील है उसके पास विवेक और स्वतंत्र चिन्ता शक्ति का बल है। यह सत्य है कि वह नियमों तथा परिस्थितियों से भी बंधा हुआ है किन्तु वह आत्म निष्पत्ति में स्वतंत्र भी है अथवा किमा धुरे कार्य के लिए उनका कार्य दायित्व नहीं रहता और न ही वह मानव विकास की मजिना को पार करता हुआ आगे बढ़ सकता है।

अस्तित्ववाद और नियमिवाद —

धूराप के बर्चचित और अन्ततः दान अस्तित्ववाद में भी नियमिवाद के सम्बन्ध में ध्यानाकर्षक विवेचना है। इसके व्याख्याता भी कोई गाद नाहता तथा जो पान साध प्रभृति दार्शनिकों के मतानुसार मनुष्य के लिए बर्चचित उपनिषदा का तब तक कोई महत्व नहीं जब तक वह अपने अस्तित्व का न पत्थर। विधान द्वारा उपनिषद सारे वास्तविक जीवन या भावात्मक अमूल वस्तुओं की अभिप्राय मानवीय जगत् का आधार भूमि के बिना निरर्थक ही रह जाती हैं। अतः अस्तित्ववाद मानवीय अस्तित्व की ममत्त्व स्वाकृति को अत्यन्त आवश्यक मानता है जो तभी सम्भव है जब मनुष्य अपने आप पर ही विश्वास और आस्था रखे। दूसरे

संस्था में अस्तित्ववाद पुरुषायवादी दान है और वह यह मानने को बदापि तयार नहीं कि मानव भाग्य अथवा नियति के हाथों को बठपुतली है। भाग्यवाद अथवा नियतिवाद की अपेक्षा अस्तित्ववाद मनुष्य की आत्म निर्णयता का बुद्धि और स्वतंत्र इच्छाशक्ति पर अधिक बल देता है।^१

हार्डी का नियतिवाद —

नियतिवाद (Fatalism) के विषय में हार्डी का उल्लेख यत्र-तत्र किया गया है। अतः यहाँ उसके विषय में दा'द कहना अप्रासंगिक न होगा।

हार्डी के उपन्यासों में शिल्प वस्तु और चरित्र सभी पर नियति का व्यापक प्रकोप फार फाम दि मॉडिंग क्राउड से लेकर जूड दि आ पवधोर तक देखा जा सकता है। यद्यपि ई'वर जसा किमी आलोचिक सत्ता में उसका वि'वास नहीं था किन्तु देव (Destiny) तथा समय (Chance) को वह पूणत स्वीकार करता था। उसके चरित्रों के लिए देव तथा समय ऐसी बुर गतियाँ हैं जो उनकी पढ़ीक और समझ के बाहर हैं तथा जिनके हाथों में वे बठपुतली के समान नाचते रहते हैं। उसके उपन्यासों में पात्र द्वारा नियति का निर्धारण नहीं होता अपितु नियति द्वारा पात्र निर्धारित होते हैं।^२

इस विषय में गंधीरानी गुट्ट की ये पत्तियाँ भी द्रष्टव्य हैं, प्रारम्भ से ही हार्डी की धारणा है कि मनुष्य केवल बम के लिए है बम चाहे छोटा हो

१ अस्तित्ववाद इतिहास और भाग्य की दृश्य मूल्यांकन नहीं करता और न सब के लिए सामान्यतया आवश्यकता पूर्ति की स्वतंत्रता पर ही जोर देता है यह तो सिर्फ इतना ही कहता है कि व्यक्ति अपने आप में स्वतंत्रता की आवश्यकता अनुभव करता है इसे मान लेना चाहिए यही अस्तित्ववाद की पहली और असली नीति है।

—पुष्पीनाथ गान्धी अस्तित्ववाद एक पुनरीक्षण माध्यम परचरते १९६६ पृ० ३५-३६

2 Character does not determine destiny in his novel but destiny claps character into a straight jacket

—N M Kulkarni (Thomas Hardy as a Novelist)
B H U Magazine Oct -Dec 1931

अथवा बड़ा मनुष्य के अधीन नही बरन् वह ही पूर्ण रूप से उनका अधीन है। इस और जड़ दि आत्मकयोर में मानव और परा शक्ति का अद्भुत द्रष्टव्य है मानो अक्षरलिपि के असीम आदेशों में उनकी समस्त क्रियाएँ और प्राणों का प्रवृत्तवाचक अस्तित्व निगडनिबिद्ध है।^१

— ० —

(१) गचीयरानी गुट्टू साहित्य बंगल भाग १ पृ० ३६६

भारतीय नियतिवाद का उद्भव और विकास

ऋग्वेद से लेकर वर्तमान कालीन साहित्य तक भारतीय नियतिवाद की अपनी सुदीर्घ परम्परा रही है। किन्तु प्रतिपाद्य विषय की सीमाओं के कारण हम केवल भारतीय-दर्शन (योगवासिष्ठकार) तक ही इसका पर्यवेक्षण कर सके हैं। उन स्थला की अधिक स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है जिनका सम्बन्ध प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में प्रसाद की नियति भावना से हो सकता है। इस विहंगावलोकन के आधार बिन्दु ये हैं —

- (१) वदिक साहित्य
- (२) उपनिषद साहित्य
- (३) पौराणिक साहित्य
- (४) महाकाव्य साहित्य
- (५) भारतीय दर्शन

वदिक साहित्य

वदिक ऋतवाद

विश्व के प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में सृष्टि सम्बन्धी समस्त घटनाओं का सञ्चालन एक ऐसे अलङ्कार नियम द्वारा माना गया है जो मूलतः नैतिक मिथ्याता पर आधारित है। ऋग्वेद में इस नियम का ऋत'क' नाम से अभिहित किया गया है।^१ वदिक ऋषियों ने इस तथ्य का अनुभव कर लिया था कि इस विश्व में अव्यवस्था नाम की कोई भी वस्तु नहीं है। सभी वस्तुएँ एक व्यापक नियम से आवद्ध हैं। इसीलिए कोई भी चीज यहच्छा से प्रवृत्त नहीं होता। दिन के अनन्तर रात्रि का आगमन, फिर नित्य प्रातः कालीन स्वर्णिम सविता का उदय रात्रि के समय चन्द्र रश्मियों का आविर्भाव और वृष्टि से पूर्व काले कजरारे मघा की उमड़ धुमड़ आदि प्राकृतिक दृश्यों की देतन वाले ऋषियों को यह पूरा विश्वास हो गया था कि समस्त ब्रह्मांड में कोई सुनिश्चित व्यवस्था का नियम अवश्य काम कर रहा है। उसी व्यवस्था को उन्होंने 'ऋत' की संज्ञा दी। विश्व में सबप्रथम उत्पन्न होने वाला 'ऋत' ही है, जिसे अपरिवर्तनीय नैतिक-व्यवस्था के नाम से अभिहित किया जाता है। वदण

(१) ऋत च सत्यवामिडातपतोभ्यजायत—ऋग्वेद १०-१६०-१।

‘ऋत का अधिष्ठाता देव है जो प्रत्येक प्राणी के कर्मों पर दृष्टि रखता है जो अत्यन्त बठोर कृत्यनिष्ठ है तथा सभी प्राणियों को उनके कर्मानुसार फल अवश्य देता है ।

ऋग्वेद के अनुसार ऋत समस्त चीजों का प्रकृतिस्य रखता है । ऋत के कारण ही अग्नि प्रवलित होती है हवा बहती है पानी प्रवहमान होता है और ऋतु चक्र चलता है । सूर्य चन्द्र और अर्य ग्रह उपग्रह भी इसी के कारण गतिवान हैं । ऋत ब्रह्मांड की सावभौम सत्ता है मनुष्यों के कर्मों का मूलाधार है तथा दृष्टि और समष्टि म गति सन्तुलन का कारण भी । इस प्रकार ऋत ही समस्त नियमों की आधार गिता है ।^१

वैदिक साहित्यानुशीलन से ऋत सत्य धर्म और कर्म की महत्ता पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है । दबवाद अथवा भाग्यवाद वैदिक साहित्य का स्वर नहीं है ।^२ वैदिक ऋषि हाथ पर हाथ धरे बठ रहने की अपेक्षा पुरुषार्थ और गतिशीलता की महत्ता पर बल देते रहे जसा कि वैदिक चरवेतिगान से स्पष्ट है —

चरथ मधुविदति चरस्वादुमुदवरम ।

सूर्यस्य पश्चभ्रमाणयोः तद्रयते चरन ।

चरवेति चरवेति ।

अर्थात् चलता हुआ मनुष्य ही मधु पाता है चलता हुआ ही स्वादिष्ट फल चखता है । सूर्य का परिभ्रम देखो जो नियम चलता हुआ कभी अतस्य नहा करता । सन्धि चरते रहो चलते रहो ।

वास्तव म ऋग्वेद की मूल आत्मा चरवेतिगान के रूप म लिया गया कर्म का सदेश है क्योंकि वैदिक ऋषियों ने कर्म को जीवन का आवश्यक अंग मानकर स्वीकार किया ।^३

(1) Swami Satprakasha Nand The Vedic Testimony and its Specialty 2 Prabudha Bharat (April 1962) P 175

(2) श्री परशुराम चतुर्वेदी के मतानुसार वैदिक साहित्य म भाग्यवाद के अर्थ नियति का कोई स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता ।

देसिए भारतीय साहित्य (आजीवकों का नियतिवादी संप्रदाय)
जुलाई १९५८ पृ ३७ ।

(3) The Path of Action (कर्मयोग) is as important according to the Vedas as the path of knowledge In later religious literature we find a tendency evil but in the Vedas action is accepted as an essential part of life

¹A C Bose The call of the Vedas Chapter V P 207

ज्ञान के अनुसार अच्छे काय का अर्थ और बुरे काय का उपाय मिलना है जिसके परिणाम स्वरूप बिना कहीं काद अथवा नष्टा रहा जाती। जो जस बोता है वह बसा ही पाता है। मम प्रतीति हाती है कि इसी कठोर ऋतवादा सिद्धांत ही अग चलकर कमवाद का नाम लिया। वदिक कमयोग वदिक ऋतवादी का ही विकसित रूप लगता है। वदिक ऋत के अधिष्ठाता देव वरुण हैं और वरुण ही कम दण्डना के रूप में सबत्र विरपात हैं। यहां नहीं कमवाद पुनजम का पापक भा है। यह साम्य दर्शाता है कि ऋतवाद ही अग चलकर कमवाद में विकसित हुआ। डा० ए० सी० बोस का भी यही मत है।^१

एक आनोफ में दखन पर भी ऋतवाद किसी दगा में भाग्यवादी नहीं कहा जा सकता। ग्रीकवातियों ने अपने दुखान्त नाटक में जिम अर्थ क्रूर और विनागकारी और ईश्वराधीन भाग्य को चित्रण किया है वह सत्या अभातीय है। वदिक साहित्य में वही भी उसना विचितमात्र उल्लेख भी नहीं मिलता। ही वेने के परवर्ती भारतीय साहित्य में अथय उमके दान यननत्र होते हैं।^२

उपनिषद् साहित्य

उपनिषद् साहित्य में भा नियति कम प्रारंभ प्राणि गत्या का प्रयाग यननत्र दखन को मिनता है।

श्वेताश्वतरापनिषद्कार ने जगत् के वारणा को दूते हुए नियति का उल्लेख किया है —

(1) In India however Rta never became foreordination it remained Eternal Law and Eternal Justice As a result however of the working of Eternal Justice there could be no escape from the consequences of our deeds, a man must reap as he sows So the conception of stern Rta led to the doctrine of Karma Ibid (introduction) P 50-51

(2) Like the Greek conception of Fate Rta does not derive its power from the will of the gods but above divinity

काल स्वभावो नियतिपदच्छा मूत्रानि योनिं पुरुष इष चिरया ।

सयोग एषां न स्वात्मभावादात्माव्यनीग सुखदुःख हे तो ।^१

अर्थात् काल स्वभाव नियति पदच्छा भूत और कारणय य सब पुरुष की भांति अचित्य हैं (अर्थात् उनके विषय में कुछ नहीं सोचा जा सकता) उनके सयोग के कारण न कि आत्मभाव के कारण आत्मा भी सुख दुःख के लिए स्वयं प्रभु नहीं है । कठोपनिषद् में कम फलभोग का स्वाकार किया गया है —

योनिमये प्रपद्यते गरीरत्वात् देहिन ।

स्यामप्येनुसर्पति यथाकम यथाश्रतम ।^२

अर्थात् अपन कम और अपने सत्य के अनुसार गरीर प्राप्ति के लिए कुछ देहधारी यानि प्राप्त करते हैं और अथ अचन भाव (वृक्ष पत्थर आदि) को प्राप्त होते हैं ।

ईशापनिषद् में कम का प्रतिपादन करते हुए स्पष्ट कहा गया है कि काम करत हुए सौ वष जान की इच्छा करा —

कुब-नेवेह कर्माणि जिजीवेष-द्धत समा

वृहदारण्यक उपनिषद् में उद्दालक के द्वारा अन्तर्यामी ईश्वर की याख्या चान्न पर मुनि यज्ञवल्क्य उस ममभाते है य पृथिव्या तिष्ठम पृथि य अतरो य पृथिवी न वेत्स्य पृथिवा गरीरे य पृथिवा मन्तरा यमयत्यप त आत्मा-तर्या म्यमृत्^३ — जा पृथ्वी में रहने वाला पृथ्वी के भीतर है जिस पृथ्वी नहीं जानना जिसका पृथ्वी गरीर है और जो भीतर रहकर पृथ्वी का नियमन करता है वह तुम्हारा आत्मा अन्तर्गता अमृत है ।^४

त्रिपाणिभूति महानारायणोपनिषद् के उत्तरकांड के पंचम अध्याय में मन्तरा मुक्ति पान के उपाय बनाते हुए पुनर्जन्म कमफला तथा प्रारंभ का सुन्दर विवेचन

But Greeks found in Fate a power which even the gods could not withstand. This led to the typical Greek conception of tragedy that man was a helpless victim of Fate. India too came near the Greek idea of Predetermination. But this was in later ages. In the Vedas there is no pre-determinism. Ibid p. 50-61.

सदभ १ २ ३ ४ देसिए-कल्याण उपनिषदांक (१९४६ई०) पृ० ६२५ ३०

किया गया है “निन्दनीय, अनन्त जन्मों में बार-बार किये हुए अत्यन्त पुष्ट अनेक प्रकार के विचित्र अनन्त दुष्कर्मों के वासना समूहों के कारण जीव को शरीर एवं आत्मा के पृथक्त्व का ज्ञान नहीं होता अनेक प्रकार के विचित्र स्थूल सूक्ष्म, उत्तम-अधम अनन्त शरीरों को धारण करके उन-उन शरीरों से विहित (प्राप्त होन योग्य) विविध विचित्र अनेक शुभ अशुभ प्रारब्ध का भोग करके उन-उन कर्मों के फल की वासना से वासित (लित) अन्तःकरण वाला जीव बार-बार उन-उन कर्मों के फल रूप विषयों में ही प्रवृत्ति होती है।^१

इसी स्थल पर भाग्य चलकर मसार पार करने के अनेक उपायों में एक उपाय पूवजन्म के पुण्यफलों की भी बताया गया है अनेक जन्मों के किये हुए अत्यन्त अशुभ पुण्यों के फलादय से सम्पूर्ण बंधनान्त्र के सिद्धान्तों का रहस्यरूप सत्यपुरुषों का जगत् प्राप्त होता है। तब सत्प्रचार में प्रवृत्ति होती है। सदाचार से सम्पूर्ण पापों का नाश हो जाता है। पाप नाश से अन्तःकरण अत्यन्त निमल हो जाता है।^२

नादविद्वान्निपद्म प्रारब्ध कर्मों की महिमा इन शब्दों में प्रस्तुत की गई है, इ महामत निरन्तर प्रयत्न करके आत्मा के स्वरूप का ज्ञान कर उसी के चिन्तन में अपना समय व्यतीत करो। समस्त प्रारब्ध कर्मों के भोगों को भोगते हुए तुम्हें उद्भिन्न नहीं होना चाहिए। आत्म ज्ञान पर ही प्रारब्ध स्वयं नहीं छोड़ता।^३

अक्षुपनिपद्म भगवान् आदित्य सावृत्ति मुनि की पूवजन्मों के कर्म फलों की महिमा समझाते हुए कहते हैं सब कुछ पूवजन्मों में किये हुए कर्मों के फल रूप में उपस्थित है अथवा सब कुछ ईश्वराधीन है।^४

अनाश्रयनिपद्म अपि ईश्वर का ही कर्म का अधिगता बताते हुए कहते हैं —

(१) यही पृ० ७२१

(२) यही पृ० ७२१

(३) यही, पृ० ६७०

(४) यही पृ० ६८७

एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतांतरात्मा ।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चैता ब्रह्मलो निष्कणः ॥^१

अर्थात् एक देवता सारे प्राणियों में छिपा हुआ है जो कि सर्वव्यापी है सारे प्राणियों का अनन्तरात्मा है कर्मों का अधिपति है सारे प्राणियों में समान रूप से विद्यमान है सर्वद्रष्टा है अकेला है और निष्कण है ।

पौराणिक साहित्य

वेदा तथा उपनिषदों के पश्चात् पुराणों में भी नियतिवादी भावनाएँ व्यक्त की गई हैं । कम, कम फल भाग्य देव प्राप्ति की चर्चा रूप में यह भावना पुराणों में अनेक स्थलों पर मिलती है ।

मत्स्यपुराण में पुरुषाय और काल के अतिरिक्त फल प्राप्ति का तृतीय कारण भाग्य को माना गया है । मग को समझाते हुए मत्स्य भगवान् कहते हैं —

देवः पुरुषकारश्च कालश्च पुरुषोत्तमः ।
अयमेतन्मनुष्यस्य पिश्रितः स्यात्कलावहम् ॥^२

अर्थात् यह पुरुषोत्तम देव पुरुषाय और काल य तीनों मिलकर ही मनुष्य को फल प्राप्त करते हैं ।

मनु के यह सूत्र पर कि 'जब बड़ा है अथवा पुरुषाय मत्स्य भगवान् कहते हैं —

स्वमेव कम देवास्य विद्धि देहांतराजितम् ।
तस्मात्पौरुषमेवेह श्रेष्ठमाहुर्मनीषिणः ॥^३

अर्थात् स्वयं कम देवों का ही देव समझा । इसलिए बुद्धिमान व्यक्तियों ने पौरुष को ही श्रेष्ठ बताया है ।

भाग्य यदि प्रतिकूल हो तो भी पुरुषाय से उभर सकता जा सकता है —

प्रतिकूल तथा देव पौरुषेण विहयते ।
मगलाचारयज्ञाना नित्यमभत्यानगालिनाम् ॥^४

(१) वेदान्तसूत्रोपनिषद् ६-११

(२) मत्स्यपुराण २२१-८

(३) वही २२०-२

(४) वही २२०-३ ।

अर्थात् नित्य उत्पत्तिगाल तथा नित्य मासिक प्राचरण करने वाले व्यक्ति पुरुषाय द्वारा प्रतिकूल देव का भी नष्ट कर सकते हैं ।

प्राये मत्स्य भगवान् मनु को समझाते हैं —

येषामूच कृतं कर्म सात्त्विकं मनुजोत्तम ।

पौरुषेण विना तेषां केषांचिद् दृश्यते फलम् ।

हे मनुजश्रेष्ठ, जिनके पूर्वकृत कर्म सात्त्विक हैं ऐसे कुछ लोगों का बिना पुरुषाय किए हुए भी फल प्राप्ति होते हुए देखा जा सकता है ।

पुरुषाय की अनन्त महिमा का बखान मत्स्य भगवान् ने आगे और दो श्लोका में इस प्रकार किया है —

वृष्टिर्बृष्टिं समा योगा बध्मते फलं सिद्धयः ।

तास्तु काले प्रदृश्यन्ते नवा काले कथञ्चन ।

तस्मात्सदस्य कतश्च सधमं पौरुषं नरः ।

विपतायपि यस्मेह परलोकं भुव फलम् ।^२

अर्थात् वृष्टि और वृष्टि के योग के समान फल निश्चि के योग वृष्टिगोचर होत हैं । वे तो (वृष्टि और वृष्टि) काल पाकर ही फल प्रदर्शित करते हैं तत्काल कर्मापि नष्ट । इसीलिए मनुष्य को विपत्ति में रहते हुए भी धर्मयुक्त पुरुषाय सन्तुष्ट करना चाहिए क्योंकि परलोक में उसे निश्चित रूप में फल मिलेगा ।

स्कन्द पुराण में अधम वृत्ति वाले देवल नायक दाक्षिणात्य ब्राह्मण का उल्लेख करते हुए कर्मविपाक के विषय में कहा गया है —

घाण्डालघं गिठतोभूमावितश्चेत् स्वपाकिम्नि ।

तेनकर्मविपाकेन रौरव नरकं गतः ।^३

अर्थात् वह (देवल ब्राह्मण) भूमि पर अधम उधर चाटाला द्वारा घमाटा गया और उस कर्म विपाक के कारण रौरव नरक का प्राप्त हुआ ।

ब्रह्मवैवर्त पुराण में भगवान् श्री कृष्ण नन्द का कर्म फल भोग की अनिवाधता समझाते हैं —

प्रापश्चित्तेन पुण्येन न हि शूद्र्याति मानवाः ।

सर्वारम्भेण च श्रेष्ठं दानेन योगतोपि वा ।

(१) वही, २२०-४

(२) वही २२०-६, १०

(३) स्कन्द पुराण, ५-६४-४२

गमागुभञ्ज यत् कम विना मोक्षश्च क्षय ।
भोगेन शब्धि माप्नोति ततो मक्तिभवेन्नयाम ।^१

हू वय राजा प्रायश्चित और पुण्य से मनुष्य गढ़ नहीं होता और न ही सब प्रकार के आरम्भा (प्रयत्ना)—दान और योग—से ही वह मुक्त होता है गुण या अशुभ जो भी कम है याग के बिना उनका नाश नहीं होता । योग से गुण प्राप्त होती है उसके बाद मनुष्या की मुक्ति होती है ।

श्रीमद्भागवत में भी कम करने में तथा उसके फल भोगने में मनुष्य को परतंत्र बताया गया है —

भवाय नागाय च कम वतु शोकाय भीहाय सदा भयाय ।
मुखाय दुःखाय च देहयोगमव्यक्तद्विष्ट जनतामपते ।^२

अर्थात् सत्कार में जन्म देने में मृत्यु में कम करने में शोक में, मोह में भय में सुख दुःख प्राप्ति में शरीर प्राप्ति का याग अथवा और अनिष्ट है । (अर्थात् मनुष्य का किसी बात पर वश नहीं ।)

महाकाव्य साहित्य

भारतीय सस्कृति के अथ भंडार रामायण और महाभारत में भी अनेक स्थानों पर नियति भावना का स्फोट सुन पड़ता है । आत्कवि वाल्मीकि की पावन पुनीत वाणी निदति का स्तुति गान उन गानों में कर उठती है —

नियति कारण लोक नियति कम साधनम् ।

नियति सबभूताना नियोगेतिह कारणम् ।^३

नियति ही सत्कार में कारण है नियति ही कर्मों का साधन है और नियति ही समस्त प्राणियों का वायव्य करने में प्रेरक है ।

नक्षत्रों का देव की अथ्य शक्ति से परिचित कराते हुए भगवान राम की उक्ति है—हृत्स्मरण जिसका ग्रहण कमपन्न भोग के अनिश्चित अथ किसी साधन से नहीं हो सकता उस देव से कोई भी मनुष्य सधन नहीं कर सकता —

(१) ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्ण—अम-खंड ८५-३६ ४०

(२) धीमद्भागवत ५-१-१३

(३) वाल्मीकि रामायण कि० का० २५-४

कश्चिद् द वेन सौमित्रे यौद्धमुत्सहते पुमान् ।

यस्य न ग्रहणं किञ्चित्कमणो यत्र द यत ।^१

पुन राम भाग्य व सम्मुख बचे से बड़े पुरुषाय का यथ वताए हुए कहते हैं —

श्रुपमोऽप्युपगतपसो दवेनानि प्रपीडिता ।

उत्सज्य नियमास्तीक्ष्णान्यते कामम युभि ।^२

अर्थात् उग्रनपवाले श्रुपि भी दव से पीडित होकर कठोर नियमों का परित्याग कर काम और क्रोध के कारण पतनाभिमुख हो जाने हैं ।

एक अन्य स्थल पर राम पुन भाग्य का महात्म्य वर्णित करते हुए लक्ष्मण को समझाते हैं कि भाग्य ही उनके प्रवास का श्रेय मिले हुए राज्य को पुन लौटाने का कारण है —

कृतातस्त्वेव सौमित्र दृष्टव्यो मत्प्रवासेन ।

राज्यस्य च वितीणस्य पुनरेव निवतने ।^३

बालि वध के पश्चात् व शोकाकुल तारा का विधि विधान की महत्ता का बोध कराते हैं —

त्रयो हि लोका विहित विधान नातिश्रमते वग्गा हि तस्य ।

प्रोति परा प्राप्स्यति ता तथैव पुत्रस्तु सं प्राप्स्यति योवराज्यम् ।^४

अर्थात् तीनों लोक विधि विधान व वगीभूत हैं और उसका अनिर्क्रमण करने में सबथा श्रममय है । तुमको पुन वसी ही प्रसन्नता प्राप्त होगी और तुम्हारा पुत्र योवराज्य को प्राप्त करेगा ।

इसी प्रकार महाभारत में भी अनेक स्थला पर दव भाग्य पुरुषाय आदि का बखान मिलता है । महाभारतकार न भाग्य का जिनकी महिमा गाई है रामायणकार न उतनी नहीं । युधिष्ठिर ता सबथा भाग्यवाणी वा हुए हैं । उनका कहना है —

नाभागधय प्राप्नोति धन सुखलवानपि ।

भागधया वतस्त्वया कृणो बालश्च विदति ।^५

(१) यही अयो० का०, २२-२१ ।

(२) यही २२-२३ ।

(३) यही २२-१५ ।

(४) यही कि० का०, २३ ४३ ।

(५) महाभारत, अनु० ५० अध्याय १६३ ।

अर्थात् भाग्यहीन पुरुष चाहे कितना भी अधिक धन गाली क्यों न है भी वह धन प्राप्ति नहीं कर सकता किन्तु भाग्यवान् मनप्य दुबल और अज्ञानी होते हुए भी अनक प्रकार के धन उपन ध कर सकता है ।

मृत्यु को सबथा दबाधी मानकर वे कह उठते हैं —

नाप्राप्तकालो अघते विद्ध शरणातरति ।

तृणाप्रणापि सपृष्ट प्राप्तकालो न जीवति ।^१

अर्थात् जिस मनप्य का काल (मृत्यु) नहा आया है वह सबडा बाणो से विद्ध होत हुए भी न । मरना किन्तु काल आ जाने पर तृण के अग्रभाग से स्पग करन पर भी मर जाता है ।

^१ युधि र क भाग्य सम्बन्धी दृढ विश्वास को महाभारतकार न न इन दोको म भी प्रक किया है —

कृतवत्नाफलाश्च य द य ते गतगो नरा ।

अपत्नेन धमाना च द य ते बहवो जना ।

यदि यत्नो भवेत्स्य स सब फलमाप्नुयात् ।

नात्म्य चोपनयेत नणा भरतसतम ।

प्रयत्न कृतव तोपि द यते ह्यफला नरा ।

भागत्यामनरथनिमाग आपर सुखी ।

एक अय स्थान पर महाभारतकार की उलनी न बडे ही सुन्दर ग । म कमफन की चर्चा की है —

यथा यथा कमगुण फलार्थो करोत्यय कमफले निविष्ट ।

तथा तथाय गुणसप्रयक्त गभागभ कमफल भनक्ति ।^२

अर्थात् जैसे जस फन चाहने वाना मनुष्य कमफन म रत हाकर कम के गुणा का करता है वस वस कमगुणा से प्रेरित होकर वह गुभागुभ फल कमफल को भागता है ।

महाभारत क साथ साथ यहाँ गीता की नियति विषयक मायताशा का विस्मायनावन करना भी अनचित न होगा । गीताकार ने यद्यपि निष्काम कमभाग का मुक्त कठ स प्रणमा की है फिर भी दव का किसी काय सिद्धि के लिए पाँवधा और आवश्यक कारण माता है —

(१) वही अध्याय १६३ ।

(२) वही अध्याय १६ ।

() वहा गा० प० २०१ २२ ।

अधिष्ठान तथा कर्ता करण च पृथग्विधम् ।

विविधात्क पृथक्चेष्टा ब व चवात्र पञ्चमम् ।^१

—अर्थात् अधिष्ठान कर्ता विभिन्न इन्द्रियो विविध चष्टार् और पाँचवीं कारण देव मनुष्य का शुभाशुभ कम म प्ररित करने वाला है ।

गीताकार की यह भी मायता है कि कल्याण करनेवाला व्यक्ति कभी भी दुर्गति का प्राप्त नही होता —

पाप नचेह नामुत्र विनागस्तस्य विद्यते ।

। हि कल्याणकृत्कश्चिदुर्गतिं तात गच्छति ।^२

—ह अर्जुन उम पुरख का न ता इस लोक म और न परलोक म ही नाग हाता है क्याकि (ह प्यार) काइ भी शुभ कम करनेवाला दुर्गति की प्राप्त नही हाता है ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि रामायण महाभारत और गीता मे भी नव भाग्य कतात और कम के शुभाशुभ फला की ध्यानावयक विवचना हुई है ।

भारतीय दर्शन

चरित्र साहित्य स लेखर श्रीमद्भगवद्गीता तक सभेप म 'नियतिवाद' का श्रुत्यनावद्ध इतिहास देखने के पश्चात् अब हम भारतीय दर्शन मे इसकी परम्परा का पयवेशन करना है । भारतीय दर्शन म नियतिवाद का अध्ययन निम्न निम्नित क्रम स हा सजता है —

- (१) चार्वाक दर्शन
- (२) जन दर्शन
- (३) वीड दर्शन
- (४) मरुति गोगाल
- (५) पट दर्शन
- (६) आगम दर्शन
- (७) वाकर वेगल
- (८) मागवातिष्ठ

(१) धामद भगवद गीता १८ १४

(२) वही ६-४०

इन दानो म प्रथम तीनो नामितक दान कह जाते हैं क्यकि य वेणो को नही मानते ।^१ पङ्गना म सभी आस्तिक हैं क्यकि सभी वेणो का स्वीकार करते हैं किन्तु साध्य बशेषिक और भीमामा दान ईश्वरवाणी नही ।

चार्वाक दर्शन —

यह सवथा भौतिकवादी दान है । चार्वाक के अनुसार शरीर ही आत्मा है और ईश्वर नाम का किसी वस्तु का आस्तित्व नही है । आँसो स जितना दिखलाई पडता है उतना ही ससार है । सत्यता की कसौटी इन्द्रिय तेचरता है अर्थात् इन्द्रियो क द्वारा जिन वाता का अनुभव हम होता है वही वस्तुए सत्य हैं । उनके अनिरिक्त कोई वस्तु है ही नही ।^२ इसस स्पष्ट हो जाता है कि चार्वाक दान नियति भाग्य ईश्वर अथवा अदृष्ट किसी म भी विश्वास नही करता ।

जन दशन —

जन दान यद्यपि ईश्वर म विश्वास नहा करता और न ही वेदो की मायता को स्वीकार करता है पर कम और उनके फलो क भोग पर अदृष्ट विश्वास करता है । जन दान जीव और कम का अनन्त सम्बन्ध बगित करता है । आचार्य कुन्दकुन्द का मत है जो जीव इस ससार म स्थित है अर्थात् जन्म मरण के चक्र म पडा हुआ है उसक राग रूप और द्वेष रूप परिणाम हात हैं । उन परिणामो से नए कम बधने हैं । कर्मो से गतिया म जन्म नना पडता है । जन्म नन से शरीर मिलता है शरीर म इन्द्रियाँ होती हैं और इन्द्रिया स विषया का ग्रहण करता है । फलन इष्ट विषया से राग और अनिष्ट विषयो से द्वेष करता है । इस प्रकार ससार चक्र म पडे नए जीव के भावो स कर्म-बन्ध एव उससे राग-द्वेष रूप भाव हाते रहते हैं । यह चक्र अन्ध-भावन का अज्ञानता स अनादि सात है ।^३ इस प्रकार जन धम धार कम वादी दान है जो कि भारतीय परम्परानुकूल भी है ।

बौद्ध दर्शन —

जन मतानुसार ही बौद्ध मत भी कम की महता को बखित करता है ।^४ बौद्ध लोग भाग्यवाण को लिङ्गवाद या दष्टिकता के रूप म मानते हैं और

(१) नास्तिको वेद निन्दक

(२) बलदेव उपाध्याय भारतीय दशन पृ० ११६ ।

(३) कृताञ्जल इ शास्त्री जन धम पृ १४२ ।

(४) दध पुरातन कम

द्विष्टि का चलन कई स्थानों पर 'धम्मपद' में आता है। डा० वासुदेव गरण
अप्रवाल के अनुसार धम्मपद के अनेक स्थानों की तुलना प्रभावद या नियति
वाद के दृष्टिकोण से की जा सकती है। (धम्मपद ८१) १

बौद्ध के प्रतीत्य समुत्पाद के अनुसार प्रत्येक वस्तु का कोई कारण
अवश्य होता है। अमृतसार में यह है और दुःख का कारण है जन्म ग्रहण
जो सबथा तृपणा जय है। जन्म मनुष्य तृपणा छोड़कर निर्मित हो जाता
है ना वह दुःख से छुटकारा पाता है और निर्वाण का अधिकारी बन
जाता है।

स्पष्ट है कि बौद्ध धर्म भी कम फल और नियति को मानता है तथा
दुःखवाद का मौलिक सिद्धांत प्रतिपादित करता है जिसका परवर्ती साहित्य
पर व्यापक प्रभाव देखने का मिलना है।

बौद्ध का कमवाद उपनिषदों और जन साहित्य से मेल खाता है।
किंतु जहाँ जन मनावलम्बी यह मानते हैं कि कम अनिवाय है वहाँ बौद्ध
के अनुसार यदि मनष्य तृपणा का छोड़ दे तो कमफल भोग से बच भी सकता
है क्योंकि तृपणा ही कम विपाक का एतन्मात्र कारण है।

मकखलि गौशाल का मत

महाभारत के शान्तिपर्व में गौशाल का मत गवि ऋषि के नाम से
वर्णित किया गया है। ये आजीवक थे तथा 'आजीवक सम्प्रदाय' के
सम्पादक थे। आजीवक उह कहा जाता है जो कम को सबथा त्याग कर
जीविका के लिए भार्यापत्नीरी है। पाणिनी ने उन्हें 'मत्करी' तथा इस मत
का मानन वालों का 'निष्ठावादी' अथवा 'दण्डिक' कहा है। २

मकखलि गौशाल का मुख्य उपदेश था कि मनुष्य को यदि मांस पाना
है तो उस काई भी कम नही करना चाहिये। कमहीन हान से ही चरम
कामिनि मिल सकती है। गौशाल का मूलमंत्र इस प्रकार है —

(१) वासुदेवगरण अप्रवाल भारत साहित्यी भाग २ पृ० ४५।

(२) The third category of thinkers who are mentioned
as Daishuka by Panini certainly refer to the followers of
the deterministic philosophy preached by Makhali Gosala
who repudiated the efficacy of Karma as a means for im-
proving lot of human beings

माकृत कर्माणि माकृत कार्माणि गार्ति तय ।

अयसी व्यात तु मस्करी परिप्राजक ।^१

यदि मो १ मिनन वाता है ता उमक लिए हाथ पर चनाने की आवश्यकता नहीं वह गान्ति या वृपत्राप बठ रदने स ही मिन जायेगा अन कम मत करो कम मत करो । सोप म गोगाल का यदी मदेग था ।

कम का इतना घोर विरोध गायद ही भारतीय दान म किसी ने किया हो जितना गोगान ने किया । इसी कारण ये पत्रके नियतिवादी कहे जाते हैं । इहोन कहा कि न तो कम ही किसी घटना का कारण है और न ईश्वर ही अपितु समस्त घटनाएँ स्वतः पटित होती हैं क्योंकि वे नियति हैं । नियति ही वह गक्ति है जो समस्त जीवो और पदार्थों को नियत रखती है ।

गोगान इतने कट्टर नियतिवाद कसे बने इसके पीछे एक बड़ी ही रोचक कथा महाभारत के गार्तिपत्र म वर्णित की गई है । वस्तुतः प्रारम्भ म वे पुरुषाथवादी थे किन्तु जितना भी कम करते तो भी पत्र प्रति नहीं होती थी भाग्य साथ न देता था । अतः म उहोने हठ घत लिया कि इस बार अपनी पूरी गक्ति लगाकर कम करूंगा और अवश्य सफलता मेरे कदम चूमेगी । अन अपना सबस्व बेचकर उहोने दो हट्ट कट्ट बल खरीदे और उन्हें एक रस्सी से बांधकर खत की ओर चन पडे । रास्ते म एक ऊट बठा हुआ था और वह एकाएक उन बलो को देखकर भडक गया । वह उठकर भागा और दोनो बलो के बछडे उसकी गदन म लटक गये । मकि ऋषि विलाप करते हुए उनके पीछे पाछे भाग और उहोने ये गान कहे —

मणीरोष्ट्रस्य लम्बेते प्रिय शस्त्ररोमम ।

गद्धि व शमेवे हठ नशास्ति पौरुषम ।^२

अर्थात् जस माना के दो मनके मूलते हैं ठीक वसे ही ऊट के गदन मे मरे दोनो बछडे मूल रह हैं । हठ पूर्वक किया गया कम कभी सफल नहीं हाना भाग्य ही अन्तिम सत्य है । वस्तुतः ऊट ही वह भाग्य है जिसकी ऊबड खाबड चाल का कोई टिकाना नहीं पता नहीं वह कब भडक जाए । यह ऊट सब के माग घेर कर बठा हुआ है । य दा बछडे पान और कम हैं पर भाग्य रूपी ऊट उन्हें कब उठा ले जाएगा यह कोई नहीं बता सकता ।

(१) माध्य ६-१-१५४ ।

(२) महाभारत (गार्तिपत्र) १७१-१२ ।

उपरोक्त कथा प्रसंग से मन्वलि गोगाल घोर नियतिवादी (भाग्यवादी) सिद्ध होते हैं। यही नहा वे आजीवको के सुप्रसिद्ध सिद्धान्त नियतिवाद के प्रवक्तक भी माने जाने हैं। वे बहुत समय तक भगवान महावीर के साथ रहे किन्तु बाद में मतभेद हो जाने के कारण उनसे पृथक हो गये। भगवती मूत्र तथा भावश्यक मूत्र की चूणि में दोनों के पाथक्य का विवरण उपलब्ध है। कहा जाता है कि एक दूसरे से पृथक होने पर ये दोनों सोलह वर्ष तक अपने अपने सिद्धांतों का प्रचार करते रहे। इस अवधि में मन्वलि गोगाल की प्रतिष्ठा बेहद बढ़ गई और श्रीवस्ती में उनके अनेक अनेक अनुयायी हो गए। उन्होंने अपने भाप को तीथकर भी घोषित कर दिया। विष्णु की मत्तानुसार भगवान महावीर से उनका मौलिक मतभेद नियतिवाद के सम्बन्ध में ही था। जहाँ गोगाल एकांत नियतिवादी थे वहाँ महावीर अनेकान्तवाद के समर्थक थे।^१

गोगाल की नियतिवादिता के विषय में श्री परशुराम चतुर्वेदी ने आजीवका का नियतिवादी सम्प्रदाय गोपक अपने एक लेख में लिखा है 'नियति की चर्चा करते समय मन्वलि गोगाल का कथन कुछ इस प्रकार का था कि 'जिस प्रकार कोई सूत से बरी रील फेंकने पर बराबर उभरती चली जाती है और वह उमकी पूरी लवाई तक एक ही प्रकार से बढ़ती जाती है उसी प्रकार चाहे कोई मूल हो चाहे कोई पठित ही क्या न हो सभी को ठीक एक ही नियम का अनुसरण कर अपने दुःख का अन्त करना है मन्वलि गोगाल के इस नियतिवाद की धारणा को उनके दक्षिणी अनुयायियों ने कुछ और भी विवसित किया।^२

मन्वलि गोगाल के विषय में इतने तथ्यों को प्राप्त करने के पश्चात् हमारी यह निश्चित धारणा बनती है कि भारत में भी भाग्यवादी दान का प्रचार प्रसार रहा है जिसके प्रवक्तक गोगाल स्वयं थे। पाणिनी ने भी जिन चित्तों का दण्डिक नाम से उल्लेख किया है वे निश्चित रूप से गोगाल द्वारा प्रचारित नियतिवादी ही हैं जिन्होंने मनुष्यों के भाग्य सुधारने के लिए धर्म की प्रभावोत्पादकता को निःसार ठहराया।

(१) डॉ० कन्हैयालाल सहस्र मुनि की हजारीमल स्मृति-ग्रन्थ (नियति का स्वरूप) पृ० ४१६।

(२) परशुराम चतुर्वेदी भारतीय साहित्य (जुलाई १९५८), पृ० २६-३०।

माकृत कर्माणि माकृत कामाणि गातिम ।

श्रयसी ध्यात तु मस्वरी परिप्राजक ।^१

यदि मो । मिलन वाता है तो उसके लिए हाथ पर चढ़ाने की आवश्यकता नहीं वह गाति या बुध्वाप बठ रहने स ही मिन पायेगा अत कम मत करो कम मत करो । सत्पेप म गोपाल का यी मदेग था ।

कम का स्तना धार विरोध पायद ही भारतीय दान म किसी न किया ही जितना गोपाल ने किया । इसी कारण ये पक्के नियतिवादी कहे जाते हैं । इन्होंने कहा कि न तो कम ही किसी घटना का कारण है और न ईश्वर ही अपितु समस्त घटनाए स्वत घटित होती हैं क्योंकि ये नियति हैं । नियति ही वह शक्ति है जो समस्त जीवों और पदार्थों को नियत रखती है ।

गोपाल स्तने कट्टर नियतिवाद कैसे बने इसके पीछे एक बड़ी ही रोचक कथा महाभारत के गातिपथ म वर्णित की गई है । वस्तुतः प्रारम्भ म वे पुम्पायवादी थे किन्तु कितना भी कम करते तो भी फल प्रति नहीं होती थी भाग्य साथ न देता था । अत म उन्होंने दृढ द्रत लिया कि इस बार अपना पूरी शक्ति लगाकर कम करूंगा और अवश्य सफलता मरे कदम चूमोगी । अत अपना सबस्व बचकर उन्होंने दो हट्ट कट्ट बल खरीदे और उन्हें एक रखी स बांधकर सत की और चन पडे । रास्ते म एक ऊट बठा हुआ था और वह एकाएक उन बत्ता को देखकर भडक गया । वह उठकर भागा और दोना बत्तो के बछडे उसकी गदन म लटक गये । मकि ऋषि विलाप करते हुए उनके पीछे पीछे भाग और उन्होंने ये शब्द कहे —

मणीघोष्यस्य सम्बेते प्रिय शत्सरोमम ।

गड्डि द शमेवे हठे नगास्ति पौरवम् ।^२

अर्थात् जैसे माला क दा मनके भूलते हैं ठीक वैसे ही ऊट के गदन म मरे दोनो बछडे भूल रहे हैं । हठ पूर्वक किया गया कम कभी सफल नहीं होना भाग्य ही अतिम सत्य है । वस्तुतः ऊट ही वह भाग्य है जिसकी ऊबड खावड बाल का कोई ठिकाना नहीं पता नहीं वह कब भडक जाए । यह ऊट सब के माग घेर कर बठा हुआ है । य दो बछडे पान और कम हैं पर भाग्य रूपी ऊट उन्हें कब उठा ले जाएगा यह कोई नहीं बता सकता ।

(१) भाष्य ६-१-१२४ ।

(२) महाभारत (गातिपथ) १७१-१२ ।

उपरोक्त कथा प्रसंग से मक्खलि गोगाल घोर नियतिवादी (भाग्यवादी) सिद्ध होते हैं। यही नहीं वे भ्राजोवकों के सुप्रसिद्ध सिद्धांत नियतिवाद के प्रवक्तव्य भी माने जाते हैं। वे बहुत समय तक भगवान् महावीर के साथ रहे किन्तु बाद में मतभेद हो जाने के कारण उनमें पृथक् हो गये। 'भगवती सूत्र तथा श्रावक्य सूत्र' की चूणि में दोनों के पाथक्य का विवरण उपलब्ध है। कहा जाता है कि एक दूसरे से पृथक् होने पर ये दोनों सोलह वर्ष तक अपने अपने सिद्धांतों का प्रचार करते रहे। इस अवधि में मक्खलि गोगाल की प्रतिष्ठा वेहद बढ़ गई और श्रोवस्ती में उनके अनुकूल भक्त भक्तियायी हो गए। उन्होंने अपने आप को तीर्थकर भी घोषित कर दिया। विज्ञानात्मक मतानुसार भगवान् महावीर से उनका मौलिक मतभेद नियतिवाद के सम्बन्ध में ही था। जहाँ गोगाल एकांत नियतिवादी थे वहीं महावीर अनन्तवाद के समर्थक थे।^१

गोगाल की नियतिवादिता के विषय में श्री परशुराम चतुर्वेदी ने भ्राजोवकों का नियतिवादी सम्प्रदाय भीषण अपने एक लेख में लिखा है नियति की चर्चा करते समय मक्खलि गोगाल का कथन कुछ इस प्रकार का था कि जिस प्रकार कोई सूत से भरी रील बेंकन पर बराबर उभरती चली जाती है और वह उमकी पूरी लंबाई तक एक ही प्रकार से चलती जाती है उसी प्रकार चाहे कोई मूख हो चाहे कोई पंडित ही क्या न हो सभा का ठीक एक ही नियम का अनुसरण कर अपने दुःख का अन्त करना है, मक्खलि गोगाल के इस नियतिवाद की धारणा को उनके दक्षिणी अनुयायियों ने कुछ और भी विकसित किया।^२

मक्खलि गोगाल के विषय में इतने तथ्यों का प्राप्त करने के पश्चात् हमारी यह निश्चित धारणा बनती है कि भारत में भी भाग्यवादी दर्शन का प्रचार प्रसार रहा है जिसके प्रवक्तव्य गोगाल स्वयं थे। पाणिनी ने भी जिन चिन्तकों का दक्षिण नाम से उल्लेख किया है, वे निश्चित रूप से गोगाल द्वारा प्रचारित नियतिवादी ही हैं जिन्होंने मनुष्यात्मक भाग्य मुधारने के लिए धर्म की प्रभावोत्पादकता को निःसार ठहराया।

(१) डॉ० जे. हेयालाल सहल मुनि श्री हजारीमल स्मृति-ग्रन्थ (नियति का स्वरूप) पृ० ४१६।

(२) परशुराम चतुर्वेदी भारतीय साहित्य (जुलाई १९५८), पृ० २६-३०।

पाँच अथ भाग्यवादी सम्प्रदायो का उल्लेख महाभारत में मिलता है जिनकी पुष्टि वासुदेव गरण अध्याय में भी एक सप्तम का है। ये सम्प्रदाय निम्नलिखित हैं —

- (क) सबसाम्य (सबको समान समझना)
- (ख) अनायास (हाथ पर न हिलाना परिश्रम न करना)
- (ग) सत्यवाक (सत्य बोलना)
- (घ) निर्वेद (कर्म के प्रति नितांत उपेक्षा)
- (ङ) अविस्त्या (किसी वस्तु प्राप्ति की इच्छा न रखना)

उपरोक्त पुष्ट प्रमाणों के आधार पर यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि हमारे यहाँ अति प्राचीन काल से भाग्यवादी सम्प्रदायों का अस्तित्व रहा है।

किन्तु मानविकी पारिभाषिक काग में डा० नरवणे का कथन है भाग्यवाद एक वृत्तिक प्रवृत्त मात्र है न कि दार्शनिक सिद्धांत'।^१ मकखलि गोगाल के भाग्यवादी सम्प्रदाय और महाभारत में वर्णित उपरोक्त सद्धर्म के अन्तर्गत हम और नरवणे का यह मत सर्वथा भ्रामक प्रतीत होता है।

पडदशन

(१) साम्य — पडदशना में सब प्रथम साध्य दशन है जिसमें व्याख्याता कपिल मुनि ने आत्मा को निद्रिय माना। कपिल ईश्वरवादी नहीं थे प्रकृतिवादी थे। कपिल कन्ते थे कि पुरुष की समीपता मात्र से और उसके लिए ही प्रकृति में त्रिया उत्पन्न होती है जिससे विश्व की वस्तुओं का उत्पादन एक दिनाग होता है। ' इस सम्बन्ध में गाना का निम्नलिखित श्लोक भी उल्लेख है —

(१) डा शामुदेव गरण अध्याय (प्राचीन भाग्यवादी दशन) साप्ताहिक भारत रविगार २२ मई १९६० ई०।

(२) महाभारत गा० प १७१-२ तथा उद्यो० प० ३९-१ ७ ४४।

(३) मानसिकी पारिभाषिक कोश (स डा नयेद्र) दशन खड पृ ८३।

(४) राहुल साहू-याचन दान दिग्दशन पृ ५४२।

न कतत्वा न कर्माणि लोकस्य सजति प्रभु ।

न कमफलसयोग स्थभाद्यस्तु प्रवतत ।^१

सारय दगन म 'सत्त्वायवाद का सिद्धान्त माय है जिसके अनुसार उत्पत्ति से पूर्व भी वाय कारण म अवश्यमेव अव्यक्त रूप मे विद्यमान रहता है । इस प्रकार वाय तथा कारण म वस्तुतः अभिन्नता है । वाय की अयत्ता वस्था का ही नाम कारण है और कारण की यत्तावस्था ही वाय है । इन प्रकार वाय कारण का भेद व्यावहारिक है परन्तु अभेद तात्त्विक है । इस सिद्धान्त का परिणामवाद भी कहते हैं ।^२ दही म भक्षण पहले मे ही है । उस ही बिलो कर प्रकट कर दिया जाता है । सिक्का से तेल नहीं निकाला जा सकता क्योंकि उसमे तेल ही नहीं है किन्तु तिला से तेल निकाला जाता है क्योंकि उनमे तेल पहले ही अव्यक्त रूप म यत्ता रहता है । इसी प्रकार वस्तु से वस्त्र तथा स्वर्ण मे कुण्डल आदि के निर्माण म भा मात्र रूपान्तर होता है वस्तुन कोई नई वस्तु नहा बनती ।

सारय दगन वाय और कारण म समवाम सम्बन्ध मानता है जिससे सिद्ध होता है कि चाहे जिस कारण से चाहे जिस वाय की उत्पत्ति नहा होती ।

(२) वशेषिक — वणाद वशेषिक मत के सस्थापक थे । ये आत्मवादी थे और अदृष्ट को मानते थे । विश्व का नियमन कौन सी शक्ति करता है यह दिखाई नहीं देता अतः वणाद ने उसे अदृष्ट की मता दी । वणाद के लिए राहुन जो नियते हैं उन्हें कमफल आदि अदृष्ट देता है । यह फल देनेवाला अदृष्ट सुदृष्ट दुष्ट की वासना या सत्कार है । इसे ईश्वर नहा कहा जा सकता ।^३ अतः वणाद ने ईश्वर की मता के विरुद्ध अदृष्ट की सत्ता स्वीकार की ।

(३) भीमामा — हमके प्रवक्तव्य जमिनी थे । भीमामा म कम और फल की गणना अपूर्व क माध्यम से इस प्रकार श्रुतलित कर दी गई है कि उममे किना पृथक् व्यक्ति का नियन्ता अथवा फल दाता क रूप म आवश्यक मता नहा रह गई । शास्त्र द्वारा विहित विधान के अनुसार जब हम विधि पृथक् विधी कम का पूर्ण अनुष्ठान करते हैं तो वह कम स्वतः ही अवश्य

(१) श्रीमद्भगवद्गीता ५-१४ ।

(२) बलदेव उपाध्याय भारतीय दगन, पृ ३२४ ।

(३) राहुन साहित्यायन दगन दिग्दगन पृ ५६३ ।

फल देगा। वे विहित अनुष्ठित कर्म ही स्वयं फलदाता है। घट के पदा होने के संपूर्ण साधना का जुटा कर जब एक कुम्भवार उसकी उत्पत्ति के अनुकूल समस्त यापार करता जाता है तो फिर घटा स्वयं ही पदा हो जायेगा। तत्तुष्ठा का विधि विधान के अनुसार संयोग करते-करते घट स्वयं उत्पन्न हो जायेगा।^१

वेद प्रतिपादित कर्म तीन प्रकार के माने गये हैं—(क) काम्य कर्म किसी कामना विरोध के लिए किए जाने वाले कर्म जस स्वयं की कामना के लिए यज्ञानुष्ठान। (ख) प्रतिषिद्ध कर्म अथवा उररादक निषिद्ध कर्म जैसे विपत्तिग्रस्त से मारे गये पशु के मांस भक्षण का निषेध। (ग) बिरय नमितिक कर्म, अहेतुक कारणीय कर्म जस सध्यावदनादि नित्य कर्म तथा भवसर विरोध पर किये जाने वाले श्राद्धादि नमितिक कर्म। अनुष्ठान करते ही तुरन्त तो फल मिल नहा जाता फिर फलोत्पत्ति कस होती है? जसा ऊपर कहा गया है प्रत्येक कर्म में मीमांसकों के मतानुसार अपूर्व (पुण्यापुण्य) उत्पन्न करने की शक्ति रहती है —

योगदेव फल तादृ गक्तिद्वारेण सिध्यति ।

सूक्ष्मवत्पारमकं चा तत फलभेदोपजायत ।^२

कर्म से अपूर्व और अपूर्व से होता है फल। अतः अपूर्व फल तथा कर्म के बीच की दशा का सूचक है। इसीलिए शंकराचार्य ने अपूर्व को कर्म की सूक्ष्मा उतरावस्था या फल की पूर्वावस्था माना है —

कर्मणो या सूक्ष्म काचिदुतरावस्था

फलस्य चा पूर्वावस्थापूर्वा नामास्तीति तद्वयत ।^३

जमिनि यद्यपि विधिविहित यज्ञ को ही फलदाता मानते हैं तथापि ब्रह्म सूत्र के तृतीय अध्याय के तृतीय पाद के अन्तिम फलाधिकरण में आचार्य वाद रायण ईश्वर को कर्म फल का दाता मानने हैं। परवर्ती मामासका न भा ईश्वर को यज्ञपति के रूप में स्वाकार कर उस ही एक प्रकार से कर्मफलता स्वीकार किया। प्राचीन मीमांसा अव्यय निरीश्वरवादी जान पड़ती है।^४

(१) मडन मिश्र मीमांसा दशम पृ० ३२५ ।

(२) तत्त्ववार्तिक पृ० ३६५ ।

(३) शांकर भाष्य ३-२-४ ।

(४) बलदेव उपाध्याय भारतीय दशम पृ० ३६८ ।

(४) याय — गौतम ने याय दान की स्थापना की। उनके अनुसार प्रत्येक काय का कारण होता है। कम नियामक और कम फल दाता के रूप में गौतम ने ईश्वर को स्वीकार किया। वे कहते हैं कि मनुष्यों के कर्मों का द्रष्टा और कम फल संयोग कराने वाला कोई न कोई अवश्य है। वह मनष्य नहीं हो सकता, ईश्वर ही हो सकता है।

इस दृष्टि से देखने पर याय दान जडवादी दान नहीं रह जाता क्योंकि वह काय कारण श्रृंखला को पूराने स्वीकार करता है और उसमें भाग्यवाद का वह रूप नहीं माना जा सकता जिसमें काय कारण परम्परा का अभाव है तथा जो स्वराचार का लेकर प्रवृत्त होता है।

(५) योग — योग दर्शन के वाक्यांश पतञ्जलि थे। योग दान का सूत्र है ते ह्यत्परितापफला पुण्यापुण्यहेतुत्वात्।^१ अर्थात् पुण्य और पाप से हो सुख दुःख प्राप्त होते हैं। पतञ्जलि के अनुसार ईश्वर सृष्टि और प्रलय के अन्तर पुण्य के कर्मानुसार उन्हें नित्य विरास के लिए अवसर प्रदान करता है और उस उद्देश्य-हेतु प्रकृति-सुख के संयोग का नियंत्रण करता है। पुण्य कर्मों के फल अथवा विपाक का सहन करता है किन्तु ईश्वर सब प्रकार के विकारों से रहित होता है। सृष्टि और प्रलय के व्यवस्थापक रूप में योग ने ईश्वर को स्वीकार किया है।

(६) वेदान्त — इसके संस्थापक बादरायण थे जिन्होंने जीव को नित्य चेतन एवं ब्रह्म का अंग माना। ये उपनिषदों से प्रभावित थे और यह मानते थे कि जीव स्वयं-कृत कर्मों का फल भोगने में विवश है। फिर भी वे यह स्वीकार करते थे कि जीव में कम करने की क्षमता है। जीव को यह श्रुति-शक्ति परमात्मा से मिली है यह श्रुति सिद्ध है। शक्ति के ब्रह्म से मिलने पर वह काय परायण होती है। इसलिए पाप पुण्य के विधि नियम फलहीन नहीं और न जीव को बेवसूर दण्ड भागने का वान उठ सकती है।^२ निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि पंडितगणों में एक दो धारणाओं में अतिरिक्त अन्य सभी दानों में नियति की मता का किसी न किसी रूप में स्वीकार किया गया है।

(१) योगदर्शन २-१४।

(२) राहुल सांकृत्यायन, दर्शन विवेकन पृ० ६७६।

आगम दर्शन —

पाचरात्र गव और गार्क आदि दानों को आगम कहा जाता है। इनमें गार दशन प्रमुख है। इन दानों में गार को ही समस्त मृष्टि का नियन्ता और संहारक माना जाता है। गार सवागत्किमान है सवतत्र स्वतत्र ३ और प्राणिया के मुख दुख का नियामक है। नियतियोंनामधते विगिष्टे कायमगुण^१ के अनमार विश्व के विंगष्ट काय कदापो की योजना नियति गारा हाता है। गवागमो का नियति पौच वचक म स एक वचक मात्र है बही सब कुछ ननी है। उनक अनमार नियति गिव व रूप म समस्त विश्व क कमचक की योजना करती है। गिव क गवा न १ रूप माने ३ जो-वामत्व गव भव उद्भव वज्रदेह प्रभ धाता नम विक्रम तथा सुप्तभेद-हैं। गहा रूपो को धारण कर गिव विश्व का नियमन करत है। गवा का गड्ड निक व्याख्या श्री बनत्व उपाध्याय के गगा म सुनिए मरुतर अपरिमित पान गवन म जीवो का प्रत्यक्ष करते हैं और अपरिमित प्रभग्विन मे जीव का पालन करत है वह परमस्वतत्र एवय वान तथा एक कर्ता है। उमी की इच्छागक्ति से जीवो को रूष्ट अनिष्ट, गरीर विषय तथा इय की प्राप्ति हुआ करती है एसीलिए गह स्वतत्र कर्ता कहलाता है।^२

शक्व वेदान्त —

वेदान्त क अनुसार कम व धन क कारण ह नान स हा मक्ति प्राप्त होता है।^३ गीता क अनमार नान की अग्नि सब कर्मों का भस्म कर डालती है। टीनागारा क मतानुसार सब कर्मों से नालय कमपना स है कयोकि नान की अग्नि म मवन और त्रियमाण कम तो नष्ट हो जात ३ निनु

(१) तत्रानोक आहनक १ ।

() र्दा सात्रिय का यज्ञत इतिहास (स राजवली पाडय) भाग १ एण्ड (ल० वनदेव उपाध्याय) प ५१

() (क) कमणा दध्य जनुविद्यया तु प्रम यत । (महाभारत गा० १० १४ -७)

(स) ऋते ज्ञानात्प्र मक्ति ।

प्रारब्धकर्म नष्ट नहीं होता। प्रारब्ध कर्मों का तो भोग स ही क्षय होता है।^१

कायकारण के सम्बन्ध में वदात भी 'परिणामवाद' का पक्षपाती प्रतीत होता है जसा कि भात्महृत परिणामान् (प० सू० १-४-२६) से प्रकट है।

सावमाय तिनक न अपन भाव्य मे कमयोग क महत्त्व का प्रतिपादन किया है। मनुष्य कम किये बिना नहीं रह सकता तिनु कम निर्याम भाव से किय जान चाटिए जिसस व बंधन-द्वन्दु न बनें। जो सध्यावन्नादि नित्य कम करता है, उसका वित्त सस्त्रियमाण होकर विगुद्ध हा जाता है। वित्त की विगुद्धि होने पर वह आत्म साक्षात्कार क योग्य हा जाता है। उस स्थिति पर 'नियति का उभ पर कोर्ष वग नरी चलना। यत्र नित्य गुद्ध बुद्ध रूप में स्थित हाकर अपन को पहचानकर ब्रह्मवित् ब्रह्मव भवति ब्रह्मवेत्ता बनकर ब्रह्म ही हा जाता है।

हमसे स्पष्ट है कि कम मनस्य को तभी तक बाँध पाते हैं जब तक मनुष्य कामना से कम में प्रवृत्त होता है।

योगवासिष्ठ —

योगवासिष्ठ ने नियति और पुण्य का बहुत हा सुन्दर विवचन किया है। कुछ श्लोक द्रष्टव्य है —

यथाऽस्य ब्रह्मसत्य सत्ता नियतिरुच्यते ।
 सा विनतुर्विनयतव सा विनेयविनयता । २-१०-१ ।
 आदिसर्गे हि नियतिर्भावय चिप्रयमक्षयम् ।
 धननाथ सदा नाथ्यमिति सद्यत परम् । -६२-६ ।

सर्वात् मयत्र सम रूप से स्थित जा यापक शक्त का सत्ता है उमी का नाम नियति है वही काय कारण के नियम्य और नियामक रूप में स्थित है। कारण ज्ञान पर काय अत्राय होता है और काय ज्ञान पर उसना काय कारण प्रत्यय हागा है। इसी नियम का नाम नियति है। वही कारण आदि की नियामकता है और वही काय आदि की नियम्यता भी है।

(१) प्रारब्धकर्मणा भोगादेव क्षय ।

‘दव नाम न किचन (११-५-१८) और दव न विद्यते’ (११-५-११) बह्वर योगवासिष्ठ ने पुरुषार्थ की महिमा गाई —

यो यो यथा प्रयत्नते स स तत्तत्फल कभाक् ।

न तु तूष्णीं स्थितेनह केनचित्प्राप्यते फलम् ।

इस प्रकार ऋग्वेदिक काल से योगवासिष्ठकार तक भारतीय साहित्य और दर्शन में नियतिवादी धारा अलख और अविच्छिन्न रूप से प्रवहमान हानी हुई दृष्टिगोचर होती है ।

प्रसाद के नाटकों में 'नियति' का स्वरूप

नियति नाम की श्रुत्युत्त उसके पर्याय उसके स्वरूप तथा उसके उदभव और विकास का विवेचन करने के पश्चात् अब हम कालक्रमानुसार प्रसाद के नाटकों में नियति के स्वरूप का अध्ययन करना है।

प्रसाद ने अपने संपूर्ण साहित्यिक जीवन में चौदह नाटक पूरे किए किन्तु इन में से प्रयोग्य केवल प्रकाशित नहीं हो सके। इनके अतिरिक्त 'अग्निमित्र' तथा 'इंद्र' नामक नाटकों का भी संयोजन मात्र ही कर सके। इस प्रकार उनके समस्त प्रकाशित नाटकों की संख्या तोरह ही रह जाती है जिन्हें हम इस प्रकार रखा जा सकता है —

(१) सज्जन	सन १९१०-११
(२) प्रायश्चित्त	' १९१२
(३) बन्ध्याणी परिणाम	१९१२
(४) बरुणालय	१९१३
(५) रायश्री	१९१५
(६) त्रिणाथ	१९२१
(७) अज्ञातगुरु	१९ २
(८) जनमेजय का नागयज्ञ	१९२३
(९) कामना	१९२०-२४
(१०) सवन्तगुप्त	' १९२८
(११) चन्द्रगुप्त	१९२८
(१२) एकपूट	१९२९
(१३) ध्रुव स्वामिनी	१९२३

उपरोक्त नाटकों में से बन्ध्याणी परिणाम को विवेचन का विषय नहीं बनाया गया है, क्योंकि 'सवन्तगुप्त' नाटक में इसका समाहार हो जाता है। अन्य सभी नाटकों की नियति भाषणा का विवेचन विशेषण हम निम्नलिखित तीन विन्दुओं के आधार पर करेंगे —

अतः कहा जा सकता है कि कमवाङ् के अनिरक्त म नाट्य रचना में प्रसाद का ध्यान दबवाव की भार भी गया है।

तुय ह य म चित्रसन जब युद्ध करते करते एकाएक अपन मित्र भजन का पहचान नेता है तो युद्ध बंद कर देना है। भजन उसे बताता है कि वह युद्ध विघ्नक म उसे पहचान नहीं सका था इस पर चित्रसेन की यह उक्ति द्रष्टव्य है मित्र कुछ नहीं वह केवल मयोग था। यहाँ संयोग का अर्थ आकस्मिकता अप्रत्यागित बात अचित्य बात आदि से है। किन्तु इससे यह भी जान पड़ता है कि संयोग से अनेक घटनाएँ घटित होती हैं। वैसे संयोग का साधारण अर्थ है किन्तु अप्रत्यागित घटना के अर्थ में प्रयुक्त होने के कारण यह भाग्य के समकक्ष प्रतीत होता है जिसमें कारण-परम्परा की अस्पृष्टता की प्रतीति भी होती है।

पंचम अंश में युधिष्ठिर और द्रौपदी चन्द्रमा के प्राकृतिक सौन्दर्य के विषय में वार्तालाप करते हुए दृष्टिगोचर होते हैं। युधिष्ठिर कहते हैं चन्द्रमा के चारों ओर तारागण एकत्रित हो गए हैं जिमि शुभ फल आनें सज्जना प घनरे।
—अर्थात् तारागण चन्द्रमा के चारों ओर ऐसे ही एकत्रित हो गये हैं जैसे सनन के चारों ओर शुभ फल। द्रौपदी की इस उक्ति में भी वक्र फल के रूप में कमवाव की छाप दृश्य है।

नाटक के अन्त में विद्याधरी-गण के द्वारा भरत-वाक्य के रूप में धर्म की जो स्तुति की गई है उसमें भी यह कहा गया है कि सज्जन अथवा धर्मानुसार आचरण करने वाले व्यक्ति की ही विजय होती है। इससे भी अल्प कम करने का न व्यक्ति की शुभ फल मिलने का सचेत स्पष्ट है।

निष्कर्ष —

सज्जन प्रसाद की प्रथम नाट्य-कृति है अतः इस नाटक में उनका ध्यान घटनाओं के संयोजन और चरित्र चित्रण तक ही सीमित रह गया है। इसी से इस नाटक में किसी दार्शनिक सिद्धान्त का प्रतिपादन नहीं हो सका है। किन्तु फिर भी इतना तो कहा ही जा सकता है कि इसमें प्रसाद जो कम-सम्बन्धी और दब विषय दाना प्रकार की आंगिक अनुभूतियाँ से प्रभावित दृष्टिगोचर हात हैं। नकुल तथा सहदेव की प्यास से उत्पन्न दगा विषय देख कर युधिष्ठिर का ध्यान ता उनके स्वभावतः दब की ओर जाता है और मूय तथा चन्द्रमा व सम्बन्ध में वार्तालाप करते समय द्रौपदी का ध्यान पुद्गल की ओर

आकृष्ट हो होता है। वही प्रकार क्या भी इस नाटक में पुरुषाय की महिमा का पान कई स्थानों पर भरता है। बिनास न सयोग गद को प्रयुक्त कर भाग्य का और साधारण सा सकेत किया है। किन्तु नाटक का समग्र प्रभाव कम की प्रधानता पर ही बल देता हुआ सा प्रतीत होता है क्योंकि क्या और द्रौपदी क अनिर्दिष्ट अज्ञान का चरित्र भी पुरुषायवादिता का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करता है। इसी पुरुषाय के कारण वह दुर्योधन का मुक्त कराने में म सफल होता है और अपनी वीरता तथा कृतव्य भावना का प्रदर्शन करने में भी।

प्रायश्चित्त

नियति विषयक सदभ

(१) दूसरी (विधाधरी) —

सीधी वस रही सही - तिहिंसा की भी भारतवासियों के लिए ईश्वर की दया समझ। जिस दिन इसका सोप होगा उस दिन से तो इनके भाग्य से दासत्व करना निखा ही है।

—दृश्य १ पृ० ७८ (चित्राधार),

(१) आकाशवाणी —

पहिले अपने लगाये हुए विष-वृक्ष के पत्र को बख फिर तू उसी सक्डी में जलामा जा मगा कि नही हमकी खोज पीछ करना।

—दृश्य १ पृ० ८२

(३) जयचन्द्र —

हाय हाय मुझसे घोर दुष्कर्म हुआ।

—दृश्य १, पृ० ८३

(४) जयचन्द्र —

मन्त्रीवर क्या सारे पाप का यही परिणाम हुआ।

—दृश्य ३ पृ० ८३

(५) मन्त्री —

महाराज क हाथों भारत-भूमि में सब कुछ कराया। क्या आश्चर्य है कि यह भी हो जाय।

—दृश्य ३ पृ० ८३

(६) जयचन्द्र —

मैंने प्रायश्चित्त करने की प्रतीणा की है।

अथवा निपति विषयक मायता व विषय म विस्तार स कुट्ट मितना सभन भी नहा या क्याकि नाटकार का ध्यान इस वृति म एतिहासिक इतिवृत्त का भावी प्रस्तुत करन के पीछे अविक्त रहा है। फिर भी क स्थाना पर भाग्य का साधारण अर्थों म प्रयोग हुआ है और कम के विषय म ता स्पष्ट रूप स कई वार मकेत प्रस्तुत किये गए हैं। जयच न अनेक स्थाना पर स्वय स्वीकार किया है कि उसकी इतनी बुरी दगा उमके पापा और दुष्कर्मों का ही फल है जिनका बोझ इतना भारी है कि मत्री व उठाए भी नही उठ सकना।

आकाशवाणी के द्वारा भी कमवाद का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया गया है— पहले अपने विप वृक्ष के फल का चख। इस कथन म कम फल की अनिवायता की स्पष्ट प्रतीति हाती है।

कम सिद्धांत के परिप्रेक्ष्य मे देखने पर इस नाटक की सबसे बड़ी विषे पना इसका शीषक और जयच द द्वारा वार वार प्रायश्चित की भावना यक्त करना है। हमारे देग म अनादिकाल म यह धारणा याप्त रही है कि अगुभ कम फलों से वचन का एक उपाय यह भी है कि यक्ति प्रायश्चित करे इसीलिए जयच—जोकि हिंदू समाज के सस्कारा म पला हुआ पात्र है—के मन म भी रह रहकर यहां विचार उठना है कि उसन देग के प्रति जा गदारी का है वह एन जघय अपराध है जिसके बुरे परिणाम स वह बच नहा सनता। उसके अचतन मन म यह विचार भी घर भर गया है कि पणित पावनी गगा व अतिरिक्त नस पाप स उसे कोई भी मुक्ति नही ाला सक्तता और इसीलिए वह अपने समस्त पापों की स्वीकार करता हुआ पतितावनी गगा का नामाचारण करता है तथा उसम बूद कर अपन प्राण त्याग देता है। निष्कपत हम नाटकार का म्हा कमवाद से प्रभावित हुआ मानते हैं।

एक अम बात की ओर भी हमारा ध्यान आवृष्ट होता है। इतिहास म वगित है कि जयचद ११६४ ई म यमुना के किनारे किरोजावाण के पास उड़ाई म मुम्मम गोरी स परास्त किय जान पर हाथी से गिर कर मरा था^१ फिर प्रसाद जी न उस नस प्रकार अपने दुष्कर्मों के विषय म घुट घुट कर पश्चानाप करते हुए और गगा म डबकर प्रायश्चित करते हुए क्या विचिन किया है? हमारी दृष्टि म नसके पीछे अय कारण के साथ साथ उन पर कम सिद्धांत का प्रभाव भी एक कारण है।

उपरोक्त तर्कों के आधार पर हम प्रायश्चित्त को कमवादी प्रभाव से युक्त नाटक कह सकते हैं। जहाँ सज्जन में प्रसाद जी द्वारा प्रकारांतर से कमवादिता अभिव्यक्ति हुई है वहाँ प्रायश्चित्त में वह स्पष्ट रूप से मुखरित हो उठी है।

करुणालय

नियति विषयक सद्भ

(१) हरिश्चन्द्र — हे समुद्र के देव, देव आकाश के,
गा त हूँजिए क्षमा कीजिए दीन को।

दृश्य १, पं० १५।

(२) नेपथ्य से — चला सदा चलना ही तुमको श्रेय है
खड़े मत रहो कम माग विस्तीर्ण है।

दृश्य १, पं० १६।

(३) रोहित — देव आप यदि हैं प्रसन्न तो माग्य है
प्रभो सदा आदेश आपका ध्यान से
पालन करता रहे दास वर धीजिये
दक कम पय म न कमी यह भीत हो

दृश्य २ पं० २०।

() वसिष्ठ — फिर क्या तुम को यह सब स्वीकार है ?

गुन दोष — जो बुद्ध होगा भाग्य और निज कम में।

दृश्य ४, पं० २६।

(५) गुन दोष — हे हे करुणा सिन्धु निपन्ता विषय क
हे प्रतिभासक तृण विरूप के सप के
हाथ प्रभो क्या हम इस तेरी सधि के
नहीं, दिखाता जो मुझ पर करुणा नहीं।

दृश्य ५ पं० ३१।

(६) सुत्रता — रे रे दुष्ट बना है ऋषि क रूप में
निरावधिक रे नीचे धरे घाण्डान सू
मूस गया बुद्ध व सहज उस बात को।

दृश्य ५ पं० ३४।

(७) वसिष्ठ — यय सुव्रते साधु सुशीले यय तू
पाया पति सुत फिर अपन सोभाग्य से ।

दृश्य २ प ६३७ ।

(८) विश्वामित्र — गनियता का यह सच्चा राज्य है
सब का ही यह पिता न दता दुल है ।

दृश्य २ प ७७ ।

(९) विश्वामित्र — वह प्रकाशमय देव न दता दुल है
अस्तु [समा तुम गतिहीन हो गये
सम स्वर से सब करो स्तवन उस देव का
जो परिपालक है इस पूरे विश्व का ।

दृश्य ५ प ७-३८ ।

(१०) विश्वामित्र —

जय जय विश्व के आधार ।

अगम महिमा मिथु सी है कौन पाव पार ।

दृश्य ५ प ८

समीक्षण

नाटक के आरंभ में ही जब राजा हरिश्चंद्र सरयू नदी के किनारे नौका विहार कर रहे होते हैं तो नेपथ्य में देववाणी होती है मिथ्या भाषी यज्ञ राजा पालक है । इससे राजा को अपना वह वचन याद आता है जो उसने वरुण का लिया था ।^१ अपने पुत्र की धनि देने का वचन याद आने ही राजा वरुण का प्रसन्न बरन के लिए कष्ट स्वर में गा उठता है —

(१) ऋग्वेद १२४३ ऐतरेय ब्राह्मण ७३ नीतिमजरी पृ २० २५ आदि में विस्तार से यह कथा वर्णित है । हम सन्ध्या में इसे यहाँ इस प्रकार रख सकते हैं —

इक्ष्वाकुवश में राजा हरिश्चंद्र पुत्रगोक में ध्यातुन होकर नारद के कहन पर वरुण से पुत्र प्राप्ति के लिए प्रार्थना करते हैं । वरुण उक्त इस गत पर पुत्र दते हैं कि यह बाद में उस बनि के रूप में वरुण को समर्पित कर दोगा । राजा वरुण को वचन दता है । पुत्र होगा तो आपको ही समर्पित कर दूंगा । (यहाँ इसी वचन की चर्चा प्रसाद जी न की है ।)

— पूरा कथा के लिए देखिए — ज्ञान की गरिमा (बलदेव उपस्थाय)
५६ नौ सोन का प्यास ।

हे समुद्र के देव देव आकाश के
गान्त हुआए क्षमा कीजिए दीन को ।

यहाँ प्रसाद जी न जिन विनेपणा स वरुण को आनकृत किया है वे वही विनेपण हैं जिनका प्रयाग वरुण सम्बन्धी ऋग्वेद की ऋचाओं म मिलता है । वरुण को ऋग्वेद म ऋत का अधिष्ठाता देव माना गया है और समस्त प्राणियों के कर्मों का नियामकभी । और यहाँ भी राजा न वरुण सम्बन्धी इस उक्ति म उसे उसी रूप में वर्णित किया है । अतः प्रसाद जी पर नाटक के प्रारम्भ म ही ऋतवादा मान्यता की छाप दीख पड़ती है ।

द्वितीय दशम म रोहित वानन म बड़ा दुःसा विचार मथन म व्यस्त है । उसे वरुण पर शोध आ रहा है कि उसने उसके पिता से ऐसा क्रूर वचन क्यों लिया । अतः यह इंद्र की स्तुति करता है । तभी देववाणी सुन पड़ती है —

चना सग चलना ही तुमको श्रम है
सह मत रहो कम माग बिस्तीण है ।

इन पक्तियों म चरन्वित चरवति गान की प्रतिबन्धि स्पष्ट है । ऐतरेय ब्राह्मण म इंद्र न हरिश्चन्द्र क पुत्र रोहित को सदा चलते रहने की गिमा दी है और यही भी हरिश्चन्द्र क पुत्र रोहित द्वारा इंद्र की प्रार्थना करने पर ही उपरोक्त पक्तियाँ देववाणी के रूप में सुनाई पड़ती हैं । अतः दोनों की तुलना स ऋग्वेद का प्रभाव स्पष्ट रूप स परिलभित होता है । उपरोक्त उक्ति का चरवेति-गान म भाव सामजस्य भाँ देखिए —

चरवेति चरवेति

नानाधाताय श्री रस्ति इति रोहित गृध्रम ।

पापो नपद्वरो जन इंद्र इन्वचरत सखा ।

चरवेति चरवेति

ह रोहित मुनत है कि श्रम से जो नहीं बचा ऐसे पुरुष का श्री मिनती है । बड़ हुए आत्मी को पाप धर देता है । इंद्र उसी का मित्र है जो बराबर चलता रहे । अतएव चलते रहो चलते रहा

आस्ते भग आसीत्स्य ऊर्ध्वस्तिष्ठति तिष्ठति ।

गेने निपद्य मानस्य चरति चरतो भग ।

चरवेति चरवेति

बूट हुए का भाग्य बड़ा रहता है सके हान वान का भाग्य सग ही जाता है पड़ रत्न बाने का भाग्य मोटा रहता है और उठकर चलनवाल का भाग्य चल पता है । इतएव चलते रहा, चलते रहा

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'कृष्णालय' के रोहित का उपरोक्त कथन और ब्रह्मवैवर्त गान दोनो म कोई भी अन्तर प्रतीत नहीं होता। प्रसाद ने मानो अक्षरगत इसी का अनुवाद यह प्रस्तुत किया है। इस ब्रह्मवैवर्त गान की आत्मा यही है कि नित्य चलते रहो। जैसे ठहरा हुआ पानी सड़ जाता है और बहते पानी म जीवन रहता है उसी प्रकार कम गूथ व्यक्ति भी सड़े हुए पानी के समान है और कमगुण व्यक्ति म जीवन संचरित होना रूना है। गतिगुण जन जिस प्रकार वायु और सूय व प्राण भांडार से जीवन अपनाता रहता है ठीक उसी प्रकार कमरत व्यक्ति भी जीवन गति एकत्रित करता रहना है। पडाव डालने का नाम जिन्दगी नहीं है। जीवन पथ पर थक कर सो जाना या आलस्य का दास हो जाना ता भूर्त्ता के समान है। अत मानव को अपने माग मे सदैव बढ़ते रहना चाहिए। ठीक उसा प्रकार जैसे सूय और चन्द्रमा सदैव आकाश को पार करते हुए अपरिमित लोका का परिभ्रमण करते रहते हैं और फिर भी कभी थकते नहा। नित्य प्रात कान सूय आकर हममे से प्रत्येक के द्वार पर यही अलख जगाता है मरे धम का देखो मैं कभी चलता हुआ थकता नहीं। ^१ इस आलोक म रोहित के उपरोक्त कथन की विवेचना स निश्चितरूपण कहा जा सकता है कि इस नाटक मे प्रसाद जी ने उहाँ पौराणिक कथा का आश्रय लिया है वही ब्रह्मवैवर्त और भारतीय कमवाद स भी व यापक रूप से प्रभावित हुए हैं।

जब रोहित नेपथ्य से देववाणी द्वारा कम माग की विस्तीर्णता का उपरोक्त घोष मुनता है तो इन्द्र से करबद्ध होकर कहता है कि हे देव मेरे लिए आपकी प्रसन्नता ही माना भाग्य है। हुआ कर मुझ केवल आर्णवचन दीजिए कि मैं सदैव आपके आदेश का पालन ध्यान से करता रहूँ और इस दास को यह भी वरदान दीजिए— 'रखे कम पथ मे न कभी यह भीत हो।

यहाँ देव शत्रु इन्द्र और 'भाग्य' उनकी प्रसन्नता के पर्याय के रूप मे प्रयुक्त हुआ है जो कि ब्रह्मवैवर्त गान की अन्तर पुन हमारा ध्यान आकृष्ट कर देता है। रखे कम पथ मे न कभी म भी सदैव चलते रहने का भाव है और इसमे भी ब्रह्मवैवर्त गान की स्पष्ट ध्वनि सुनी जा सकती है। कमवाद के प्रतिपादन म भी यह पक्ति अत्यन्त साधक है। नेपथ्य के कथन

(१) वामुदेव दारण अग्रवाल ब्रह्मवैवर्त-गान, भा० प्र० प्र० अ० पृ० ४८ अ०

में जहाँ कमभाग को अत्यन्त विस्तीर्ण बताया गया है वही रोहित का यह कथन भी कम के प्रति अनुपम आस्था का प्रकटाकरण करता है। कम के सम्बन्ध में हमारे दृग्गण में विस्तार से विवेचन मिलता है। मनुष्य की कम गति को ही हमारे यहाँ उसका मरदण्ड माना गया है और इस शक्ति की नाव पर ही मानव जीवन का प्रसाद राडा है। डुकृज करणे या करना धातु का मेण्ड ही गल या सक्ना धातु है। गल धातु के जिं लकारों का हमारे जीवन में पारायण हो पाता है वही हमारी गति के स्तम्भ हैं। जीवन के गान्त मुर्तों में जज हम सोवते हैं वृत्तो स्मर वृत्तो स्मर—अर्थान् अपने सकल्प का स्मरण करो और अपने से उनका मिलान करो तो यही निष्कप निवृत्ता है कि सक्ना ही करना है। हमारे दृग् मकल्य की गति बाहु में अवलीण हाकर हम कम की ओर प्ररित करता है। गति और कम हीन जीवन के सकल्प तो वीर कागज की भांति है।^१

पत्रम दृश्य के पूर्वा में डा पाठक गुन गफ को यूप में बधा हुआ पाता है। जब अजीगत धरुन उठाकर उसका ग्रह करने लगता है तो गुन गफ 'हृ हृ करुणा सिधु नियता विन्व के वह कर विन्व का नियमन करने वाली गति का स्तुति-गान कहता है। यहाँ वरण (ऋत के देवता) को विश्व नियता बट कर सम्बोधित किया गया है यही पर ज्योति पथ स्वामी दा भी प्राग प्रवृत्त हुआ है जो कि वदिक साहित्य में वरण के नामों में से ही एक है। इस प्रकार प्रस्तुत उक्ति में भी ऋत सम्बन्धी मायता का प्रतिपादन दृष्टिगोचर होता है।

इसी दृश्य में सुव्रता और वशिष्ठ ने भी भाग्य का साधारण अर्थों में 'दुर्देवे और सौभाग्य वह कर प्रयोग किया है।

अतः में विश्वामित्र भी अपनी गधव विवाहिता पत्नी सुव्रता और गुन शफ का पाकर जगन्निष्ठा ईश्वर को साधुवा देते हैं। भरत वाक्य के रूप में जो सहगान प्रस्तुत किया गया है उससे भी यह ध्वनित होता है कि इस विन्व के पीछे एक नियामिका गति है जिसका सभी पात्र अत में स्तवन करते हैं।

निष्कप

इस नाटक पर प्रमाणों के वदिक अध्ययन की छाप स्पष्ट है। कथानक भी विन्व है और विचारधारा भी वदिक ऋतवा में प्रचुरमात्रा में प्रभावित

(१) वही पृ० २५-२६।

है। प्रसाद के प्रारम्भिक दोना नाटको म जहाँ घटना प्रवाह म दगन पक्ष गीम हो गया है वहाँ इसम घटना क सजाजन क साथ गाय स्पष्ट रूप स नियति सम्बन्धी ऋतवादी मायता का विवेचन भी हुआ है। नियति की इतनी साफ तस्वार प्रकट करने वाला प्रसाद का यह पहला ही नाटक है। दगन पक्ष का इतना उभार सनन और प्रायः नवन म नहा मिलता। प्रारभ स अत तक नाटककार ने इन्द्र और वरुण की स्तुति मुक्तकठ से पात्रो के मायम परा की है। दाना ही दवता बदिक् ऋत स सम्बन्धन हैं वरुण तो ऋत क प्रधिष्ठाता ही मान गए है। वना म उन्द्र ऋतवग के नाम स भी वर्णित किया गया है। उन्द्र के नियमो का प्रसार प्रकृति के सज कार्यों म दर्शाया गया है। दिन और रात क क्रम म ऋतवगो के परिवर्तन म नशिया के चत्वार उतार म समुद्र क चत्वार भाग म तागो की चमक म तथा भौतिक तथा ननिक समस्त सामारिक नियमो म उन्द्रा का सत्ता मानी गई है। जब यमी यम का अपने निवृत्त पति रूप म वरुण कसती हुई पुकारती है ता यम वरुण का हवाता दना है और वन्ता है यमा वरुण क चर अपलक प्राणिया क दापो को देखत रहत हैं।^१ एम सम्बन्ध म ऋतवद की यह पविन भी दगनीय है -

ऋतन मिया वरुणावता वृधावनस्पगा ऋतु वृहतमागाथ।^२

अर्थात् हे मित्र और वरुण ऋत को बढ़ाने वान तथा ऋत को स्पग करने वाने माननवाने (तुम दाना न) ऋत के द्वारा वृहत ऋतु (प्रसा) का पाया।

एस प्रकार कर्णागम म जगह जगह वरुण और उन्द्र का प्रास्तिया चरवनिगन का अनुवाद तथा एम का महत्तापरक उक्तिया पत्रकर हमारी यह दृष्ट मायता है कि प्रसा जो अपनी नियति भावना के सदभ म ऋतवाद से पूरात प्रभावित हुए हैं।

वरुण विषय विवेचन का सहारा लेकर उन्द्रा ऋतवाद कर्णागम म आ गया है वही कम की महत्ता पर भी एसमें काफी कुछ कहा गया है। रोहित अपन स्पष्ट श्रेव स यही वरदान माहता है कि वह कभी अपन कम पय में रन नहा। कम माग का अयन्त विस्तीण भी कहा गया है। वस्तुत यह भी एस नाटक पर वरुण की छया का ही उगतरण है। वरुण ऋत क देवता ता है तो प्रत्ये प्राणी क कमानसार उस गुनागुभ पन दना भी उहा के अवान है। व इत काय म कित्ता क साथ काइ पदापान गी एत न ही

(१) ऋग्वेद - १०।

(२) ऋग्वेद १-२-२।

को उतम बच हा सकता है। कोई भी त्रास कितना भी छिपा कर बिया जाय वह वरुण की दृष्टि में धोकेल नहा ही सकता। इस ब्रह्माट के सचालन तथा नियमन का सूत्र उही के हाथ में है।^१ इस प्रकार कमवाद भा नाटक का प्रतिपाद्य बन कर प्रस्तुत प्रा है।

अन के सबान्त में विश्व नियन्ता को मानव क्यागमय बताया गया है। विश्वामित्र कहते हैं 'सबका ही वह पिता न दत्ता दुःख है' अथवा 'वह प्रवागमय देव न दत्ता दुःख है। इम ज्ञात हाता है कि प्रसाद समस्त नियम समष्टि का मानव क्यागमया मानकर चल है। राहित जस पाता का भले ही वह क्रूर त्रिणा दत्ता हा पर गह दुःख क आधिक्यवण उडूत भ्रम ही कहा जाएगा। वास्तव में गहरी त्रि टालन पर नियति सृष्टि मानव के कल्याण का उद्देश्य ही रखती है दृष्टिगाचर हाणी यही प्रसाद का भत जान पडता है। ३१० हरद्वेष्ट बाहरी क भ्रतमार भी मानवता के कल्याण का स्वर भी प्रबन्ध रूप से इसमें (वरुणालय में) विद्यमान है। रूपक में विश्व कल्याण की भावना यात है।^२

प्रमाण व मन में बद्धि बलि और हिमात्मक भावना की प्रतिक्रिया स्वरूप बुद्ध के बन्गावाद की छाया भी इस कृति से परिलभित होती है जिसे लक्ष्मण से पाता पोसा उसी पुत्रवन् धुन गफ का बध करन को प्रजागत तत्पर हो जाता है विश्वामित्र पत्नी से विसुक्त हो जाते हैं गुन गेफ और रोहित पर भी दुःख क घटाटाप कम नहीं उमडते इन सब की प्रभा वाचिक्ति कल्याण जनक ही होती है। यही नहा नाटक का नीयक^३ भी 'कल्याण वाद' की धार ही सभन करता है। यह दुःख वाद अथवा वरुणावाद बौद्ध धर्म की अहिंसा से प्रभावित है बदाकि इस कृति पर बौध धर्म की अहिंसा का

(१) धामुदेव शरण अग्रधान ज्ञान की गरिमा पृ० २८।

(२) ३१० हरद्वेष्ट बाहरी प्रसाद साहित्य कोण पृ० (७४)।

(३) वरुण को परदणालय का नाम दन प पीछे सम्भवत प्रसाद जी इस बद्धि मा पता से भी प्रभावित बिलाई देते हैं कि हृदय से स्तवन करन पर वरुण जसा क्रूर ब व भी द्रयोभूत हा जाता है —

प्रायश्चित्त करन बाल पर वरुण दया करते हैं। ये पाप की मानो रस्ता से बाधन और फिर मानो डोला कर बेते हैं। जो अनजान उाक यतों को ताडते हैं उन पर भी ये समय पडन पर दया करत हैं।

-बद्धि बन्गास्त्र (मनु० ३१० सूयवात) पृ० ५४।

पर्याप्त प्रभाव परिलभित होता है। प्राग राय श्री की चर्चा करते हुए हम दखन सि प्रसाद जी की यह दु खयात्रिणा भी वास्तव में उनके वृत्तिक ऋतु सम्बन्धी धारणा का ही विकसित स्वरूप है।

इस प्रकार प्रसाद की नियति भावना के सन्दर्भ में कल्याणलय एक ऐतिहासिक स्मारक है। इसमें ऋतुवाद कमवाद मानव कल्याण भाग्य सम्बन्धी कतिपय साधारण सन्दर्भ तथा दु खवाद सभी का सुन्दर उद्घाटन उनकी लक्ष्मी ने किया है। किंतु नाटक की मूल आत्मा वृत्तिक ऋतुवादी ही है। ऋतुवाद को समझना सम्भवतः कोई पाठक इन नाटकों को समझने में भी समय न होगा। अतः कल्याणलय वह नाम का पत्थर है जिस पर प्रसाद की नियति रूपी सुन्दर और रहस्यमयी अट्टालिका खड़ी है।

राज्यश्री

नियति विषयक सन्दर्भ

(१) सुरमा — विश्वास करो मैं आजीवन किसी राजा की विनास मानिका बनाती रहूँ—एसा मरा अष्ट कहता भी मैं मान लेता मैं असमय हूँ।

—अंक १ पृ० १—२

(१) शान्तिदेव —

उतावनी न हो सुरमा परीक्षा दिन जा रहा हूँ साथ ही भाग्य की परीक्षा भी लूंगा। महारानी राज्यश्री एक दिन भिक्षुओं को दान दगी मैं भी देखूंगा कि भाग्य मुझ किस ओर खोवता है। (वही पृ० २)

(३) देवगुप्त —

ता इससे क्या। सब अकेले ही तो समारोह में निबलने हैं किसी का मिल जाना यह तो उमक सौभाग्य की बात है। देखो मुझ यदि तुम न मिलती तो कौन आश्रय दता।

—वही पृ ३

(४) सुरमा —

हूँ भगवान इतना बड़ा सौभाग्य ? नहीं यह मर घट्ट का उपहास है।

—अंक १ दृश्य ६ पृ० १७।

(१) डा० हरदत्त बाहरी प्रसाद साहित्य कोश पृ० ७४।

(५) शांतिदेव —

मैं ससार से अलग किया गया था—किसलिए / पिता ने मुझ भिक्षु सच में समर्पण किया था—क्या इसनिये कि मैं धार्मिक जीवन "यतीत करूँ" ? मेरे लिए उस हृदय में दया या सहानुभूति नहीं थी। जब हृदय वागम की आगा लता बलवती हुई तो मैं देखता हूँ कि कर्मक्षेत्र में मेरे लिए कुछ अवगिष्ट नहीं तो मैं क्या करूँ ? लौट जाऊँ सच में ? नहीं सच मेरे लिए नहीं। अब यही कुटी में रहूँगा। तो क्या मैं तपस्वी हाऊँगा ? नहीं अच्छा जो नियति करावे। ओह कसी वाली रात है ?

—अंक २ दृश्य १ पृ० २३।

(६) सुरमा —

कितनी मादकता इस प्रणसा में है। प्रियतम मुझ अपना स्वरूप विस्मृत होना जा रहा है। मेरे यह सौभाग्य

—अंक २ दृश्य ६ पृ० ३५।

(७) देवगुप्त —

सुरमा तूम कितनी मधुर है—मेरे जीवन की ध्रुवतारिका।

नेपथ्य से —

यह तुम्हारे दुर्भाग्य का मद्दप्रह की प्रभा है।

—वही पृ० ३६।

(८) नरदत्त —

कौन न कहगा कि महत्त्वशाली ध्यक्तिया के सौभाग्य अभिनय में धूर्तता का बहुत हाथ होता है।

—अंक २ दृश्य ७ पृ० ३६।

(९) विषटपोष — (सुरमा से अलग)

राजपथन-सुरमा तुम्हारे भाग्याभाग का धूमकेतु और मेरे लिए तो सभी पात्र हैं।

—अंक ३ दृश्य १ पृ० ४६।

(१०) मधुकर —

राजपथी भी कहा इधर उधर सभी गइ हागी। सुरमा का दुर्भाग्य

—वही पृ० ४७।

कमलेश्वर म जुनी रहनी है जिसस इस नाटक म 'ममवादा' की उपस्थिति का भी ध्यान हाता है ।

नाटक पर बौद्ध धर्म तथा दुःखवाद का भी पर्याप्त प्रभाव है । रायश्री का जीवन दुःख और वेदना की गाथा है । पति का खोकर देवगुप्त के बड़ी गृह मे अपमानित होकर वह दारुण दुःखा को सहनी है । सखी स कहती है सखी औपनिषद् दक्षर तू विप देनी ता कितना उपकार करती ! इसी प्रकार त्रिवाकर मित्र का दुःखा का कारण गाथा सुनाता है दुःखो को छाडकर और कोई न मुझमे मिला मेरा चिर सहकर भ्राय मुझ भ्राता दीजिए । स्त्रियों का पवित्र वतय पालन करती हुई म क्षण मगुर भसार से विना लू । निरय की ज्वाला से यह चिन्ता की ज्वाला प्राण बचावे । अपने भाई हृषवधन स भी वह कहती है भाई दुःखमय मानव जीवन है ।

रायश्री क अनावा अय रात्रो के कथनो म भी दुःखवाद की स्पष्ट छाया है । त्रिवाकर मित्र कहता है 'प्राणी दुःखा म भगवान के समीप होता है । अन म समवत स्वरो म गाथा गया गीत दुःखवाद की 'दर भीमासा प्रस्तुत करता है —

बहणा कादम्बिना वरसे—

दुःख स जना हुई यह धरणी प्रमुक्ति हो सरसे ।

रायश्री का म दुःखवाद बौद्ध स अत्यन्त प्रभावित है । रायश्री स्वयं वापाम धारण करती है । वह सभी का क्षमा करती जाती है जो कि बौद्धो का ही उपदेश है । यही नहा इस नाटक म बौद्ध भिक्षु सुएनच्चाग भी उपस्थित ही है । प्रो० रामकृष्ण शिनीमुख और डा० नगेंद्र प्रभृति विद्वानो न भी प्रसाद जी को दुःखवाद से और विगपत बौद्धो के दुःखवाद से प्रभावित माना है ।^१

(१) (क) प्रसाद न मालूम होता है भारतीय इतिहास के बौद्ध काल और बौद्ध दशन शास्त्र का कुछ अध्ययन किया है जिसका प्रभाव उन पर पडा है । उनक नाटको मे प्राय एक न एक बौद्ध पात्र रहता है—गौतम प्रहयात कीर्ति और सुएनच्चाग

—प्रो० निलोमत प्रसाद की नाट्य कला पृ० ६७

(ख) उनके (प्रसाद क) नाटकों म बौद्ध और भ्राय दशन का सघष और समन्वय वास्तव म दुःखवाद और अनाद भाग का ही सघष और समन्वय है

—डा० नगेंद्र भाधुनिक हिन्दी नाटक पृ० १२

उपरोक्त दुखगानी अनुभूति से अनुप्राणित होकर ही मभवत राज्यश्री दुःखु स बह उठता है 'आह जिनकी सौम्य चरनी हैं वे तो चलकर ही रबगी' -अर्थात् निश्चित समय से पूर्व अपनी जीवन-लीला समाप्त करने में भी मानव स्वतंत्र नहीं है। गहराई से विचार करने पर ऐसा लगता है मानो प्रमाद जी यहाँ मृत्यु की घड़ी को भी निश्चित मानते हैं। उस पूर्व निश्चित समय पर ही मृत्यु हो सकती है पहले नहीं। दूसरे शब्दों में जीवन और मृत्यु के सम्मुख मनुष्य की स्वतंत्र इच्छा शक्ति पराजित हो जाती है। ईश्वर अथवा नियति के हाथ मनुष्य जैसे यत्र हाँ और उधर चलाता या बदलना भी उस उसी के वश में हो। राज्यश्री की उपरोक्त उक्ति गीताकार की इन प्रसिद्ध पक्तियों का स्मरण करा देती है —

ईश्वर सबभूतानां हृदयभोजन तिष्ठति ।

भ्रामयन्सबभूतानि यत्राट्टानि मायया ।

—ईश्वर सब प्राणियों का हृदय प्रदण में स्थित रहता है और सब को अपनी भाषा से यत्रवत् घुमाता है। कम कमठ तथा हृदय सबलों वाली रायश्री की ऐसी उक्ति अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रमाण होती है।

निष्पत्ति —

प्रसाद की रायश्री उनकी अत्यन्त महत्वपूर्ण नाट्य रचना है जिसमें भाग्यवाद और बौद्ध दुःखवाद का सुन्दर चित्रण हुआ है।

भाग्यवादी के रूप में गतिभित्त का चरित्र चित्रण बड़ा ही सुन्दर बन पड़ा है। उस भाग्य का भरोसा है और उस यह भी देखना है कि भाग्य उसे किस ओर खींचता है' नियति का भाग्य का पयाय मानकर वह कह उठता है 'अच्छा जा नियति करावे। सुरमा को भाग्यप्रित नहा कहा जा सकता क्या केवल एक श्राव स्थाना पर ही सामान्य रूप से उसने सोभाग्य दाता को प्रयुक्त किया है। देवगुप्त नरदत्त मधुकर कमला और सुएनर्वाग को भी भाग्य चर्चा करत सुना जा सकता है। इन पत्रों को भाग्य पर पूरा-पूरा विश्वास है।^१

विन्तु रायश्री और सुरमा के चरित्रों में कमवादी भावनाएँ स्पष्ट रूप से दृष्टि गोचर होती हैं। सुरमा की यह उक्ति कि 'अदृष्ट भी चाहे ता एगा

(१) राज्यश्री ने गतिदेव देवगुप्त मधुकर और कमला भाग्य शक और दुर्बल के श्रावो नतमस्तक हैं। (डा० हरदश बाहरी प्रसाद-साहित्य कोश पृ० २११)

मानने को तयार नहा कि वह किमी राजा की विदाग मानिना बनानी रू हम योगवासिष्ठवार की इन पक्तिया की यात्रा जिना दसा है —

अन्नक पीरय यत्न वजयित्वेतरा गति
सवद्दुःख क्षय प्राप्ती न चाचिदुपपद्यते ।

रायत्री का यत्नत्व भी गमग्र रूप में रूप पर पुष्पाथ और कम की महत्ता की ही छाप छात्र जाना है क्योंकि कर्मणा पग जान ए भी उगव चरित्र को प्रसाद न निर्भोक्ता माहग महत्त्वान। ता पुष्पाथना आत्मनिश्चाग अदि सुनहने रगो स रग लिया है ।

जसा कि हम पहले देख चक ह रायत्री के घटना चक्र और पात्रा पर दु खवाद का व्यापक प्रभाव है। यह दु खवाद भी मूलन ऋतवादी प्रभाव स ही श्रोतश्रोत है क्योंकि वनिक विवेकवादा अथवा ऋतवादा का धारा ही भाग चलकर बीडो के दु खवादा के रूप म परिणत हुइ। स्वय प्रसाद ने इस विषय पर टिप्पणी की है —

वरुण पायपति राजा और विवेक पत्र के आगत थे। महावीर एद्र आत्मवाद और आनद के प्रचारक थे मूधम दृष्टि स देखन पर विवेक व तक न जिस बुद्धिवाद का विकास किया वह दार्शनिका की उस विचारधारा की अभिव्यक्ति कर सका जिसम ससार दु यमय माना गया और दु ख स छूटना ही परम पुष्पाथ समभा गया। दु ख निवृत्ति दु खवादा का ही परिणाम है।^२

प्रसाद के उक्त विवेचन के आधार पर, जिसम दु खवाद का वे विवेकवाद का विकसित रूप माते हैं हम विवेकवाद (ऋतवाद) कमवाद तथा दु ख वाद का परस्पर सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं। यह हम पहले ही देख चके हैं कि कमवाद भी ऋतवाद का ही स्वाभाविक विकसित रूप है।

इस आन्दोलन म दानन पर रायत्री नाटक पर भी बदिक् ऋत की प्रतिज्ञाया दृष्टिगोचर हाती है यद्यपि कर्मणाय की भाति इसम स्पष्ट रूप स उसका प्रतिपादन नहा हो सका है। इसका कारण यह है कि कर्मणाय का कथानक जहाँ वेना और पुराणो स सम्बन्धित है वहाँ रायत्री म प्रसाद इतिहासिक कथावृत्त की श्रार उन्मुख हा गए हैं।

उपरोक्त विवेचना का आधार लेकर हम रायत्री को कम प्रधान नाट्य रचना की मानते हैं जिसका शक्ति श्रोत बदिक् ऋतवाद है। हावनि

(१) योगवासिष्ठ ६ १४ ।

(२) गयशकर प्रसाद काय और कला तथा अर्थ निबंध पृ २५ ३७

गान्तिद्वय जसा पाप भाग्यवादी का श्रणी म आ जाता है किन्तु वह भी अपन कम पय स ता दूर भागना हुआ नजर नहा आता ।

विशाल

नियति—विषयक सदभ —

(१) विनाश —

यौवन मुख लिए आता है—यह एक भारी भ्रम है । आगामय भावी सुखा के लिए इम कठोर कर्मों का सक्तरन ही बड़ना हागा । उन्नति के लिए मैं भी पहली दौड़ लगाने चला ह । देखू क्या अदृष्ट म है । पादा विश्राम कर लू फिर चलूगा ।

—अंक १, दृश्य १ पृ० १२ ।

(२) विनाश —

एसा मुदर रूप और बेग ऐसा मलिन विघाता की सीला

—वही पृ० १३ ।

(३) सुधवा —

हा मुदर यह हमारे पितृ पितामहा की भूमि थी उसी पर चलन म यह बदधना ।

—वही पृ० १६ ।

(४) साधु —

यह सत्य यही सत्य यना दुष्प्य धार है ।

मत्वम कमयाग यही विन्द-नीग है ।

—अंक १ दृश्य ४ प० ३१ ।

(५) प्रमाद —

जब तक सुख भाग कर चित्त उनउ नहा उपराम जाना मनुष्य पूरा बराभ्य नग पाता है । कुन कम याग क वाव्यारिक रूप हा का अनुकरण करना चायि ।

—वही प० ३६ ।

(६) प्रमाद —

मत्वम हृदय का विमन बनाता है और हृदय म उच्च वृत्तियाँ स्थाने पाने लगती हैं इसलिये सत्वम कमयाग रा आदग बनाना आत्मा की उन्नति का माय स्वन्द और प्राप्ति करना है ।

—वही पृ० ३७ ।

(७) प्रमाण —

जब तक गुप्त बुद्धि का उदय नहीं तब तक स्वायत्त प्रकृत होकर भी सत्त्वम करणीय है। तुम्हारा उद्देश्य उत्तम होना चाहिए। जो वस्तु है उस निभय होकर करा।

—वही पृ० ३७।

(८) चर्चा —

सुना तो कहीं तो रहता है ?

विनाश —

जहाँ भाग्य ले जाव।

—अंक २ दृ० १ पृ० ४३।

(९) मन्त्रांगी —

क्या इसी तरह राज्य रहेगा ? क्या अत्याय का घटा नहीं पड़ेगा ? क्या आपका वस्त्र प्रतिफल नहीं भागना पड़ेगा ?

अंक ३ दृ० १ पृ० ७२।

(१०) प्रमाण —

तुम अपने सनतना व हृदय से क्षमा कर दो। इस मानव को ते जा कर प्रजा व अनुकूल राजा बनाने की गिना दा। तुम्हें भी कम करने के बाद मर ही पथ पर गा न पान क लिए धाना होगा।

अंक ३ दृ० ५ पृ० ६२।

(११) नरदा —

किन्तु दुष्टा अथ वज्रित हूँ मैं

क्या फल से सजित हूँ मैं।

वही पृ० ६३।

समीक्षण —

नाटक के प्रारम्भ में ही हम नायक विनाश को मानसिक रूप में व्यथित करते हैं। वह साचना है कि जीवन को सुशात्मक कहना एक छनना है वास्तव में यह अन्वय कर्मों का संचालन मात्र है। यदि जीवन का सुगम्य बनाना है तो अनिवायत इन कठोर कर्मों की सघटना रुक करनी ही होगी। मैं जो इन उन्नति की दीड़ धूप में लगा हूँ उसका परिणाम क्या होगा यह अज्ञात है। विनाश की प्रस्तुत उक्ति का वाता की ओर पाठक का ध्यान आकर्षित करती है। प्रथमतः जीवन में कर्मों की अनिवायता की ओर

द्वितीयत कर्मों की कठोर प्रकृति की ओर और तृतीयत कर्मों के माध-साध विनाश की अदृष्ट सम्बन्धी भावना की ओर। कथन के पूर्वोध में जहाँ वह कर्म वादी प्रतीत होता है वहाँ उत्तराध उसकी भाग्य विषयक धारणा की ओर सबकुछ सा करता है। अदृष्ट यहाँ भविष्य में होने वाली घटना-समष्टि की अनिश्चिता का बोध कराता है जिस जान खने का विनाश उत्सुक है। इस कथन में तो विनाश को हम पूणत भाग्यवादी नहा कह सकते। पर आग चलकर चन्द्रलेखा के यह पुछन पर कि वह कहाँ जा रहा है जब वह भट कह उठता है, जहाँ भाग्य न जावे ता उसकी भाग्यवादिता मुत्वरित रूप में हमारे सम्मुख उपस्थित हो जाती है।

विनाश के अनिश्चित नाग सरदार सुभ्रवा भिक्षु नरदेव तथा चन्द्रलेखा न भी भाग्य दुर्देव ईश्वर की लीला आदि गानों का प्रयोग किया है जो सामान्यत भाग्यवादिता को ही प्रकट करते हुए स जान पड़ते हैं।

इस प्रकार सरमरा नजरा स दखन पर नाटक के पूर्वोध में भाग्य अथवा अदृष्ट की अभिव्यक्ति सी ही लगती है पर वान ऐसी नहीं है।

विनाश के गुण प्रमानन्द के रगमच पर आत ही हमारी यह धारणा एसाएन बनाने लगता है। उसका मह कथन पूरी तरह हमारी पूर्वमायता का भवभोर दना है —

‘जब तक सुख भोगकर चित्त उनमें नहा उपराम होता मनुष्य पण धराण्य नहा पाता है। तुम कमयोग के व्यावहारिक रूप ही का अनुकरण करना चाहिए।’

प्रमानन्द की यह शिक्षाप्रद उक्ति विनाश को कम-पथ की महानता का स्रोत सुनाती है। कम-पथ भी यह जा व्यावहारिकता से अनुप्रणित है। प्रमानन्द स में वाक्य कहनेवाते समय सम्बन्ध गीताकार का यह मदन प्रसाद जा के स्मृति पटन पर रहा होगा —

नियतस्वतुस्तयात कमणोनोपपद्यते

गाना में सत्कर्म का उपदेश भी लिया है और प्रमानन्द भी उसी प्रकार पुन विनाश का कहना है सत्कर्म हृत्प की विमल बनाना है इसलिये सत्कर्म कमयोग का अन्तर्ग बनाना

इस प्रकार प्रमानन्द द्वारा विनाश की कमवाद की दो प्रमुख मायताओं की शिक्षा मिलती है—सत्कर्म की और कम के व्यावहारिक स्वरूप की। अब

यह विचारणीय है कि कमयोग को मनुष्य व्यावहारिक बंध बनाए। इसका समाधान गीताकार यह बह कर देता है कि कर्मों म आसक्ति नहीं रखनी चाहिए वस्तुतः निष्काम कर्म ही वह सत्कर्म है जिसकी महिमा का गुणगान प्रमानंद न इतस्तत किया है। एक अन्य उक्ति म वम वह सवाम' कर्म की चर्चा भी करता है किन्तु वह तभी तक करणीय है जब तब शुद्ध बुद्धि का उदय न हो जतक शुद्ध बुद्धि का उदय न हो तब तब स्वाय प्ररित होकर भी सत्कर्म करणीय है तुम्हारा उद् य उत्तम हाना चाहिए। जो बत य है उस निभय हाकर करो। स्पष्ट है कि ज्ञान प्राप्ति के पूव प्रमानंद स्वाय प्ररित (सकाम) कर्म करने के पक्ष म भी हैं। किन्तु उसका वास्तविक सदाग निष्काम कर्म योग का ही है। नाटक म ऐस अनेक उद्धरण हैं जिनम इस कर्मवाद का अनुपम चित्रण हुआ है। प्रमानंद के मुख से नि मृत दाणी मानो प्रसाद की ही याणी ह जो इस नाटक म कर्म प्रधानता का सदाग वार वार सुनाती है। महर्षि व्यास के मतानुसार भी कर्म ही मनुष्य की विनोपता है -

प्रधानलक्षण देवा मनुष्य कर्मलक्षणा

(अश्व ४ २०)

अर्थात् कर्म करने से जो प्रवाग जीवन म आता है उसी म मनुष्य दब बन जाता है। यस्तुन मनुष्य का लक्षण तो कर्म ही है जिसका प्रतिपादन इस नाटक म प्रचर माना म हुआ है।

प्रमानंद हा साधु क रूप म कर्मवाद का यह उद्घाष पुन करता है -

यह सत्य यही स्वय यही पुण्यघाष है।

सत्कर्म कर्मयोग यनी विद्व बोग है।

प्रमानंद का इस शिक्षा का प्रभाव जहां विनाल के दुश्चरित्र का पुरपार्थी और कर्मवादी बना देता है वही अत म नर व भा कर्म पना की दुहा देना हुआ अपन बुर कृत्या क प्रति गतिन हाना है -

किन्तु हुआ अत्र गतिन हूँ मैं

कर्मपना स सतिन हूँ मैं।

इसी प्रकार राजा नरदय का च द्रउसा क प्रति आसक्त पाकर महारानी उह पाष कृत्या क बुर परिणामा क प्रति सचेत करती हइ बहती है क्या अयाम का घटा नहा पटगा ? क्या आपकी कर्मना प्रतिफल नना भागा पटगा ? इसस यह सिद्ध हाना है बुरे कर्मों का बुरा फल अवश्य पचना है। यह कर्म गिना न का मरदक है।

निष्पत्त्य — प्रसाद जी का यह नाटक पूरा रूप से कमवाद के प्रभाव से ध्यान प्राप्त है। यद्यपि पहले नामक विगाय भाग्य की सत्ता को कई स्थला पर स्वीकार करता है, किन्तु अन्ते गुरु प्रमानन्द की कम सम्बन्धी विगाया का उस पर प्रभाव इतना पहता है कि वह बाद में कमवादी बन जाता है। नरदेव भी पहले कुट्टत्या में कम कर चद्रलता के प्रति माहासक्त हो जाता है किन्तु अन्त में वह भी स्वयं पर लज्जित होता हुआ कम फन का गुण-गान करता है। महारानी द्वारा बुर कर्मों का विष्वक्म फल मिलन की अनिवायता का पुरजोर गीत में समयन हुआ है। इस प्रकार नाटक प्रारम्भ से अन्त तक कमवाद का गुंजर प्रगीत-सा लगता है।

इस नाटक के अधिकांश कम सम्बन्धी सन्धों को देखने पर गीता के निष्काम-कर्मयोग का प्रभाव प्रसाद जी पर प्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगोचर होता प्रेमानन्द न निष्काम-कर्म को ही मत्कम कहा है और उसी को कल्याणकारी सिद्ध किया है।

महारानी का वह कथन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है जिसमें वह कहता है कि 'संयाय का घना' क्या फूटगा नहीं। नरदेव के पाप-कृत्य साधारण नही है। हमारे देश का प्रारम्भ से ही यह मायना रही है कि यदि कोई अत्युत्कट पाप करे तो उसका फन अगते जन्म में न मिलकर त्वरितगति से इसी जन्म में मिलना है —

त्रिभिवर्षेस्त्रिभिर्मासस्त्रिभिर्दिन

अत्युत्कट पापपुण्यानामिहैव फलमवनुते।

इतान् ययौ म दिन चाह तान् मीनों म दिन अथवा तीन दिन म मिल किन्तु अत्रात्र पाप या पुण्य का फन गीत्र ही मिलता है।

कम अनाक के अज्ञोक्त में अवन पर महारानी का उपरोक्त कथन नाटक में कमवादी का सम्भार पत्रना प्रस्तुत करता जान पहना है। प्रारम्भ में पात्रा में यह कम भावना नहीं दीम पहनी किन्तु प्रमानन्द का कमसदग धीर वीर सभी का कममाय पर धाम्द कर देता है। डॉ० हरदेव बाहरी न भी प्रेमानन्द और विगाय का कमवादी बताते हुए प्रमानन्द के नियम में लिखा है (वे) सत्कम कतन्व पावन और पुण्य का उपदेश दत हैं नाटक के प्राय सभी पात्र उनकी स्तिग्य बाणी से सत्य पर चलने लगते हैं। १

इस प्रकार सिद्ध हो जाता है कि इन नाटक में प्रमानन्द के कारण प्रायः सभी पात्र कमवादी बन जाते हैं। सत्कर्म की महिमा जानकर वे अपनी दुबलताओं से मुक्त होते हैं और शुभपलायन सत्य पर अग्रसर होते हैं। अतः विनाशपूर्ण कमवादी नाटक सिद्ध हो जाता है।

जो लोग प्रसाद जी को पूर्णतः भाग्यवादी मानते हैं उनका ध्यान हम इस नाटक की आरंभिक भावनाओं पर करना चाहते हैं क्योंकि हमारी दृष्टि में कम सिद्धांत का इनका स्पष्ट विवेचन प्रसाद के किसी दूसरे नाटक में नहीं मिलता।

अज्ञातशत्रु

नियति विषयक सद्यः —

(१) विम्बसार —

आह जीवन की क्षणभंगुरता देखकर भी मानव कितनी गहरी नीव देना चाहता है। आकाश के नीले पत्र पर उज्वल अक्षरों से लिखे अक्षरों के तख्तों पर धीरे धीरे लुप्त होने लगते हैं तभी तो मनुष्य प्रभात समझने लगता है और जीवन सपना में प्रवृत्त होकर अनेक अज्ञात-तान्त्रिक करता है। फिर भी प्रकृति उस अज्ञात-तान्त्रिक का गुफा में ल जाकर उसका गतिमय रहस्यपूर्ण भाग्य का चिह्न समझने का प्रयत्न करती है किन्तु वह कब मानता है? मनुष्य व्यथ महत्त्व की आकांक्षा में भरता है अपनी नीची किन्तु सुन्दर परिस्थिति में उसे सतोष नहीं होता नीव से ऊँचे चढ़ना ही चाहता है चाहे फिर गिरे तो भी क्या?

—अंक १ दृश्य २ पृ २७।

(२) जीवक —

अदृष्ट का आदेश मानकर ही मैं आपका अनुगामी हो गया हूँ।

विम्बसार —

क्या अदृष्ट सोच कर अकर्मण्य बनकर तुम भी मेरी तरह बँठ जाना चाहते हो।

जीवक —

नहीं महाराज अदृष्ट तो मरा सहारा है। नियति की डारी पकड़कर मैं निश्चय कर्मरूप में चला सकता हूँ क्योंकि मुझे विश्वास है कि जो जाना है वह तो होगा ही फिर कायर क्या बनूँ—कर्म से क्या विरक्त रहूँ।

—अंक १ दृश्य ४ पृ ३६।

(३) रानी —

बालक मानव अपनी इच्छाशक्ति से और पौरुष से ही कुछ होता है। जन्मसिद्ध तो कोई भी अधिकार दूसरों के समयन का सहारा चाहना है। विश्व भर म छोटे से बड़ा होना यही प्रत्यक्ष नियम है। तुम इसकी अवहेलना क्या करते हो। मरुत्वाकाशा क प्रगीत अ म्बुड म वृद्धन को प्रस्तुत हो जाया विरोधी शक्तियों का दमन करने क लिए काल स्वरूप बनो पुरपाथ करा इन पृथ्वी पर जिघा तो कुछ हाकर जिघा नहा तो मर दूध का अपमान करान का तुम्हें अधिकार नही।

—धक १ दृश्य ८, पृ० ५४।

(४) जीवक —

दोनो अपने काम के फल भोग रहे हैं

(५) विकटक —

बम मी अब कुछ न बहो। आज से प्रतिगाव लेना भरा कतय और जीवन का उदय हो गया। मी मैं प्रतीना करता हू कि तर अपमान के कारण इन गति का एक बार अवदय सहार करूगा और उनक रक्त म गहाकर स्व कोणल के सिंहासन पर बठकर तरी बन्ना करेगा। आर्गीवाण से कि इम क्रूर परीक्षा म उतीण होऊ।

—वनी प ५४।

(६) मल्लिका —

भास्य जा कुछ लिखाव

—धक २ दृश्य ३ प० ७३।

(७) वामवी —

यही सममान के लिए बडे पडे शक्तिवा ने कई तरह की व्याख्या की हैं फिर भी प्रत्यक्ष नियम म अपवाण लगा लिए हैं यह नगी कहा जा सकता कि अववाद नियम पर है या नियामक पर। मभवन उस हा लोग बवहर कहने हैं।

(८) विम्वसार —

तब ता देवि प्रत्यक्ष असम्भावित घटना के मूल म यही बवहर है। मव ता यह है कि विश्व भर म स्थान-स्थान पर बाराबक है, जन म उसे भवर

कहते हैं स्थल पर उस बबडर ब ते हैं राय म विप्लव समाज म उछ-
खलता और धम म पाप बहुत हैं । चाह इह नियमो का अपवात् कहा चाह
बबडर—यही न ?

—अंक २ दृश्य ६ पृ० ८२ ।

(६) प्रसेनजित् —

यदि आना हा तो म दीधकारायण को अपना सेनापति बनाऊ और इसी
वीर म स्वर्गीय सेनापति व बुल का प्रकृति देखकर अपने कुक्कम का प्रायश्चित्त
करू

—अंक २ दृश्य ७ पृ० ८६ ।

(१) गौतम —

हम अपना कृत्य करना चाहिए । दूसरो के मतिन कर्मों को
विचारन से भी चित्त पर मतिन छाया पडती है ।

—वही पृ० ६४ ।

(११) छाना —

घायन बाधिता का भय दिखाता है ? वर्षा की पहाडी नदी को हाथो से
रक्तना चान्ता है ? देवस्त इस अवस्था म नारी क्या नही कर सकती ।
अब तरा अभिगाप सुन नहा डरा सकता । तू अपन कम भोगने के लिए
प्रस्तुत हाता ।

—अंक दृश्य १ पृ १०५

(१२) वासुधी -

ना हागा व ता भविष्य क र्ण म है

—वही पृ १०५

(१) मन्दिता -

तुम इमलिए नहा बचाए गए कि फिर भी एउ विरस्ता नारी पर
बनाकार और सम्पटना का अभिनय करा । जीवन स्तलिए मिता है कि
दिलने कुक्कमों का प्रायश्चित्त करो । अपन का मुधारो

—अंक ३ दृश्य ३ पृ ११४

(१४) गौतम -

बुद्ध नहा । तुम लाग कृत्य क लिए सत्ता के अधिकारी बनाए गए हो ।
उसका दुर्ूपयोग न करो । भू महल पर स्नह का करणा का क्षमा का शासन

फलाप्तो । प्राणिमात्र म सन्तानुभूति को विस्तृत करो । इन दाद विप्लवा से चौक कर अपने कम-पथ से च्युत न हो जाओ ।

—अंक ३ दृश्य ५ पृ० १२५,

(१५) माघी —

बाहरी नियति कैसे कस दृश्य दखन म आए—कभी बला को चारा देते दन हाथ नहीं बकत थे कभी अपने हाथ से जन का पात्र तक उठाकर पीन म सनाथ हाता था कभी नील का दाक एक पर भी महल क बाहर चलने म रोकता था और कभी निलज गणिका का आमोद मनानीत हुआ

—अंक ३ दृश्य ७ प० १२६,

समीक्षण

प्रथम अंक के दूसरे ही दृश्य म हम विम्वरसार का मानसिक विवर्षण म आघात अपने आप से बात करते हुए पाते हैं । वह जीवन की क्षण भंगुरता के प्रति व्यथित और चिंतित है । अदृष्टवादी बन कर बट कहता है आकाश के नीचे पग पर उड़कर अक्षरों से निग हुए लख जब धीरे धीरे लोप होने लगते हैं तभी तो मनुष्य प्रभात ममभन लगता है । हमसे यह मिथ होना है कि निग प्रकार अक्षरों क गभ म कुछ भी दृष्टिगाचर नहा होना बस ही अदृष्ट की यजनिका के पीछे क्या है हमका बुद्ध पता नहा चलता । जब बट अदृष्ट रूपा अक्षरों हटना है तभी मनुष्य के लिए प्रमान (प्रगप्रता) का उदय होता है । मनुष्य अदृष्ट क विरुद्ध जावा मग्राम म प्रवृत्त हाकर अनक अयागड साण्डन करता है किन्तु हमसे क्या रू उस पर विजय था ही पा सकता है । 'मक विपरान' प्रकृति उस अक्षरों की गुफा म न जाकर उगवा वातिमय रहस्यपूर्ण भाग्य का चित्रा समभान का प्रयत्न करती है —किन्तु मनुष्य का ममभ म वह धान म रहा अत उन यह स्वावृति प्रमान नहा कर पाता ।

विम्वरसार क इन वाक्या म अदृष्ट और भाग्य समानार्थी न बन गए है बस प धान अपने स्थान पर दोना का पथन पथन महत्व है । अदृष्ट जहाँ अक्षरोंरूपण मजाना भविष्य है, वही भाग्य वह वातिमय और रहस्यपूर्ण दस्तावेज है जिसे प्रकृति —नामा स्त्री मनुष्य को समभाना चाहती है । यही भाग्य के दो विवर्षण ध्यानाक्षर हैं— वातिमय और रहस्यपूर्ण—जिनसे प्रसाद का भाग्यसंबंधी धारणा पर भी पत्राण पडता है ।

इसी अक्ष के चतुर्थ दृश्य में पुनः अपने ही शब्दों में विम्बसार स्वयं को अदृष्ट शक्ति मानता है। जीवन से वह कहता है 'क्या अदृष्ट सोनकर अक्षमण्य बन कर तुम भी मेरी तरफ बट जाना चाते हो ?' अक्ष विम्बसार हम पूछने एव भाषाश्रित पात्र दृष्टिगोचर होता है। जहाँ विम्बसार अदृष्ट में पूरी आस्था का परिचय देता है वहाँ जीवन अदृष्ट की सत्ता मानते हुए भी कमबाल का उद्घोष करता है। उसका यह कथन इस नाटक के हाँ नहीं अपितु प्रसाद के नियतिवाद पर भी अक्ष प्रकाश डालता है नहीं महाराज अदृष्ट तो मेरा सहारा है। नियति की डारी पकड़कर मैं निभय कम रूप में बूढ़ सकता हूँ। क्योंकि मुझ विश्वास है कि जो होना है वह तो होगा ही फिर कायर क्यों बनूँ कम से क्यों विरक्त रहूँ। वह विम्बसार को बताना चाहता है कि अदृष्ट उसे अक्षमण्य नहीं बना सकता क्योंकि वह उसका प्रतिरोधी न होकर सहायक तत्व है जिसकी सहायता से ही वह कम-क्षेत्र में निभय अक्षर होना जाएगा। कुछ के तब तक जाने के लिए जिस प्रकार रस्ती का अवलम्बन आवश्यक है वैसे ही कम क्षेत्र में गहराई तक पकड़ने के लिए अदृष्ट जीवन का सहारा है।

यदि हम विम्बसार के इस कथन को प्रसादजी का आत्म कथन स्वीकार कर लें तो कहने की आवश्यकता नहीं है कि प्रसाद की नियति में कम विहीनता नरान्य अवसाद अथवा जीवन विरक्ति का कोई स्थान नहीं है। वह तो मानो कर्माग्नि को प्रज्वलित करने के लिए घत रूप है।

इसी अक्ष के आठवें दृश्य में रानी और विरुद्धक का वार्तालाप भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अपने पुत्र की निष्क्रियता तथा मानसिक दौर्बल्य को देखकर रानी उत्तम धागा और पुरुषाय की ज्योति प्रज्वलित करती है। दासी की पुत्री हाकर भी मैं राजरानी बनूँ और हठ से मैंने इस पद का ग्रहण किया और तुम राजा के पुत्र होकर इतने निस्तेज और डरपोक होगे यह कभी मैं स्वप्न में भी नहीं सोचा था। पुरुषाय करो इस पृथ्वी पर जिम्मा तो कुछ होकर जिम्मा नहीं तो मेरे दूध का अपमान कराने का तुम्हें कोई अधिकार नहीं। माता के इन शब्दों का पुत्र विरुद्धक पर चमत्कारपूर्ण प्रभाव पड़ता है। वह अन्तर्द्वेष मानो एकाएक समाप्त हो जाता है वह चारित्रिक दुबलता माना क्षणिक बनकर एक कमबाली स्वरा के उद्घोष में तुल्य हो जाती है और यह कह उठता है वस मैं अब कुछ न बटो आज से प्रतिज्ञा देना मेरा कर्तव्य और जीवन का सत्य होगा। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि तेरे अपमान के

कारण इन शाक्या का एक बार सहार करूंगा और उनके रक्त में नहाकर, इस कीचल के सिंहासन पर बैठ कर तेरी बदनाम करूंगा।

इस प्रकार रानी की यह पुरुषार्थ पूर्ण उक्ति विरुद्ध की कम हीनता मिटाकर उसे पुरुषार्थवादी बना देती है। यह भी 'अज्ञातानु' में कमवाद के प्रतिपादन का सुन्दर उदाहरण है।

दूसरे अंक के छठे दृश्य में विम्बसार का हम पुनः नियतिवादी पात्र के रूप में दखत हैं। वासवी से वह पवन-गति की बचा करते हुए पूछता है 'उसकी गति तो सम नहीं ऐसी क्यों?' वासवी इन शब्दों में उत्तर प्रस्तुत करती है, बड़े-बड़े दार्शनिकों ने कई तरह की व्याख्याएँ प्रस्तुत की हैं फिर भी प्रत्येक नियम में अणुवाद लगा दिए हैं। यह नहीं कहा जा सकता कि अणुवाद नियम पर है या नियामक पर। सम्भवतः उस ही लागू बबडर कहते हैं। किन्तु विम्बसार के अनुसार हम तो विश्वास हैं कि नीला पर्दा इसका रहस्य छिपाए है, जितना चाहता है उतना ही प्रकट करता है।

प्रस्तुत उद्धरणों में पवन की गति का लेकर भाग्य और नियति के संबंध में दाना पात्र अपनी अपनी धारणाएँ प्रकट करते हैं। विम्बसार के अनुसार नियति नीला पर्दा है जो न जानें किन किन रहस्या की अणु में समेटे हुए है किन्तु वासवी के अनुसार पवन में गति तो है किन्तु वह गति सम नहीं है। यह असमता ही माना उन नियमों का व्यक्तिगत है जिनसे अखिल विश्व संचालित है।

इसमें यह सिद्ध होता है कि नियति तो सदैव अपने नियमानुसार कार्य करती है किन्तु जब उन नियमों के माग में कोई बाधा आ जाती है तो बबडर आन सगते हैं। अर्थात् बबडर यहाँ भाग्य का पर्याय बन जाता है क्योंकि वह नियम विधान का शृंखला तोड़कर उपस्थित होता है। वैसे नियति को खल्ला नहीं जा सकता किन्तु बदनाम का प्रयास करने पर बबडर रूपी अनहोनी घटनाएँ हानि सगती हैं जिनका स्पष्टीकरण विम्बसार इन शब्दों में करता है 'तब तो दवि प्रत्येक अणुभाविन घटना के मून में यद्दी बबडर है। सब तो यह है कि बिना भर में स्थान-स्थान पर वात्यानत्र है जब में उस भवर कहते हैं स्थल पर उस बबडर कहते हैं राज्य में विप्लव समाज में उद्धृषलता और धर्म में पाप कहते हैं। चाहें हैं नियमों का अणुवाद कहा जाते बबडर।

बागवी और त्रिभुवनार की उपरोक्त उक्ति म भाग्य और नियति का प्रकटीकरण हुआ है।

तृतीय अक्षर क मानव दृश्य म भी माग्धा द्वारा नियति की चर्चा दगनीय है जना यह अपनी दगा विषय की चर्चा मामिष गता म प्रस्तुत करती है। कामवा ने भी एर स्थन पर 'जो होगा वह ता भविष्य क गम म है बहुर लगभग एसी भावना को व्यक्त किया है। तृतीय अक्षर के तृतीय दृश्य म मल्लिका भाग्य जो कुछ लिखाव बहुर नियति का स्मरण करती है।

किन्तु जीवक रानी विरुद्धक आदि क आतरित्त कम की मृत्ता को स्थान स्थान पर भगवान गौतम प्रसेनजित मल्लिका और छलना भा वणित करते हैं।

भगवान गौतम प्रसेनजित का कम का सदा दते हुए बहते हैं एन क्षद्र विप्लवा से चौंक कर अपने कम पथ से च्युन न हो जाओ। प्रसेनजित भी स्वर्गीय सनापति वधुन को स्मरण करते हुए अपन उन कुकर्मों के प्रति प्रायश्चित्त की भावना व्यक्त करता है जो उसने किए हैं (मैं) अपन कुकर्मों का प्रायश्चित्त करूंगा। मल्लिका भी कुकर्मों के प्रायश्चित्त के लिए विरुद्धक को कहता है जीवन इसनिए मित है कि पिछन कुकर्मों का प्रायश्चित्त करो। अपन को सुधारा। छलना भी दवत्त का फटकारनी हुई उसे कम का स्मरण करती है अब तेरा अभिगाव मुझ नहा डरा सस्ता। तू अपन कम भोगने के लिए प्रस्तुत हो जा। आठवें दृश्य (अङ्क २) म गौतम का यह वथन कि दूमर क मजिन कर्मों का विचार भी चित्त को मलिन कर देना है स्पष्ट रूप से यह अभिप्रेत करता है कि त्रिया ही नहा बुर कर्मों का विचार मान भी अधुन फन का दानन करता है। एन उक्तिओ से हम कमवादा का ही सदा प्राप्त होता है।

निष्पत्त — प्रमाण की यह गान्ध मृष्टि उनकी नियति भावना के सम्भ म कम मन्त्रण नता है। पात्रा क कथापत्रयना के आधार पर हम देख सकते हैं कि भाग्य और कम दाना वर्गों का साथक प्रतिनिधित्व करन वाल पात्रा की कम नाटक म उपस्थित है। जहाँ त्रिभुवनार मागधी वासवी आदि भाग्यवाणी नभिन हाते हैं वही जीवक रानी विरुद्धक छलना गौतम प्रसेनजित आदि पात्र पुरजोर ग। म कमवाद का प्रतिपादन करते हैं। इस प्रकार मजातत्र म नियति क इन दाना ही एनी म परस्पर दृष्ट देखा जा सकता है। किन्तु हमारी दृष्टि में नाटक की परिणति कमवादी स्वरा म

ही होती है यद्यपि बीच बीच में भाग्य और नियति का संगीतमय स्वर भी सुगरित हुआ है।

यहाँ एक अत्यन्त महत्वपूर्ण बिन्दु की ओर हम पाठकों का ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं। प्रसाद के भाग्यवादा पात्र यद्यपि अदृष्ट भाग्य और रहस्यमयी नियति की बातें करते हैं फिर भी वे कमक्षेत्र में पलायन करते हुए नया दबे जाते। उदाहरणार्थ हम इस नाटक के पात्र जीवक का नामोल्लेख करना चाहेंगे। नियति की टोरी पकड़ कर निभय कम रूप में बूढ़ सवन जाना यह पात्र अदृष्ट का अपना सन्त्रा मानता है। उस विश्वास है कि जो होना है वह तो होगा ही फिर भी वह कहता है 'कायर क्यों बने कम से क्या विरक्त रहे'। प्रसाद साहित्य का अवगाह करने वाले बिन विन्दुगंगा का प्रसाद की नियति भ्रूँके भाग्य के रूप में दृष्टिगोचित होती है विनोपत उनसे हमारी प्रार्थना है कि वे कृपया जीवक की इस उक्ति की सायकता पर अवश्य ध्यान दें। वास्तव में प्रसाद जी ने नियति अदृष्ट देव भाग्य और प्रारब्ध धारिणियों का यत्र-तत्र प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है पर मूलतः उनकी नियति भावना में भी कम सिद्धान्त का व्यापक प्रभाव है। हम तो बतलाएँ कि कमवाद ही उनकी नियति नटी का मेकअप है। डा० सहज का यह बयान अक्षरशः सत्य है —

प्रसाद जी का नियतिवाद निष्क्रियता और निश्चेष्टता की ओर नहाने से जाना यद्यपि उससे कम करने का प्ररणा मिलती है। वह कोई ऐसा भाग्यवाद या प्रारब्धवाद नहीं जो पुरुषार्थ के प्रतिकूल पड़ता हो।^१

प्रसाद की नियति का नाटक में जहाँ कम प्रधान हाज़र मुखरित है वहाँ यह मानकर भी चनी है कि समस्त मृत्ति सुनिश्चित नियमा द्वारा मंचान्वित है। कोई पूछ सकता है कि जब विश्व में सबकुछ नियम बाध है तो उगम इतना कल्पम क्या है—नहीं सुखी और कोई दुःख का अन्तर जाना है। प्रसाद जी ने हम कल्पम का नियम का अणुवाद कहा है। यद्यपि नियति तो अपना नियमागुमार ही काय करती है पर तब मानव प्रकृति की आवाज़ नहीं सुनना और अपने दम में उन्मत्त हाज़र उन्मत्त माम में बाधा उत्पन्न करता हुआ प्रचरण तात्पर्य करता है ता सम्भना चाहिए कि यह अज्ञानि और दुःख को निमग्न कर रहा है।

(१) डा० बट्टेपालाल सहज मूल्यांकन (प्रसाद जी के नाटकों में नियति का) पृ० १४।

एक स्थल पर जीवन क्या है कि जा होता है, यह सा होगा ही इसे पत्र पर यह विचार पाठक के मन में उठ सकता है कि जब सभी घटनाएँ पूर्वनिर्धारित हैं तो फिर मानव की स्वतंत्र इच्छा शक्ति का क्या महत्व रहना है ? हम समझाया था उत्तर हम आगे चल कर राभी के इस वाक्य में प्राप्त हो जाता है मानव अपना इच्छा शक्ति से और पीछे से ही कुछ जानता है। सम्भवतः इसीलिए जीवन भी कहता है 'वापर क्या बनू कम से क्या बिरखन रहू।

अज्ञातानु पर बौद्ध धर्म और उसके दुःखवाद का प्रभाव भी देखा जा सकता है नाटक की परिममति में बौद्धधर्म का स्पष्ट प्रभाव है क्योंकि सभी व्यक्ति पञ्चाताप प्रकट करते हैं। गान रस की स्थापना के साथ यह नाटक समाप्त होता है।^१ बौद्धों का यह प्रभाव नाटक के अनेक स्थलों को दुःखवादी रंगों में रंग गया है। दा उदाहरण देखें —

(१) पद्मावती — मानवी सृष्टि करणा के लिए है या ता क्रूरता के निरन्तर हिंसक पशु जगत् में क्या कम है ? (प० २४)

(२) गौतम — विश्व भर में यदि कुछ कर सकती है तो वह करणा है जो प्राणीमात्र में सम्प्लिट रहती है। निष्कर आत्मा सृष्टि पशुमा की विजित हुई इस करणा से। मानव का महत्व जगती पर फला अहणा करणा से (प० २६)

बौद्धों का यह दुःखवाद भी ऋतुवाद और कमवात् से भिन्न नहीं है यह हम प्रसाद के नाटक में रायणी का विवेचन करते समय देख सकते हैं।

दुःखवाद और नियतिवाद में एक सम्बन्ध यह भी है कि दुःखी व्यक्ति जब चारा और से निरान हो जाता है तब वह भाग्य, नियति आदि की महिमा गाकर अपने में आत्म सतोप के सूत्रा का अनुसंधान करता है जोकि स्वाभाविक भी है।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि अज्ञातानु में यद्यपि नियतिवाद और करणावाद का भी सन्तु है पर नाटक की अत्मा कमवाणी और पुरपाथवादी ही है।

जनमेजय का नागगज

नियति विपायक सदभ

(१) मनसा

क्या इस विश्व के जगत् पर नाग ने कोई सृष्टणीय अभिनय नहीं किया ? क्या उनका अतीत भी वतमान की भाँति अधकार पूरा था ।

—अव १ दृश्य १ पृ० ६ ।

(२) कृष्ण —

जिन पदार्थों की गति अप्रकाशित रहती है उन्हें लोग जड़ कहते हैं । किन्तु देखो जिरह हम जड़ कहते हैं व जब किसी विशेष मात्रा में मिलते हैं तब उनमें एक गति उत्पन्न होती है स्पन्दन होता है जिसे जड़ता नहीं कह सकते । वास्तव में सबत्र शुद्ध चेतन है जन्ता कहाँ ? वह तो एक भ्रमात्मक कल्पना है यह पूरा सत्य है कि जन्म क रूप में चेतन प्रकाशित होता है ।

—वही पृ० १२-१३ ।

(३) कृष्ण —

पुष्पाथ करो जड़ता हटाया ।

—वही पृ० १३ ।

(४) वासुदेव —

राष्ट्र का भला हुआ यह एक स्वतंत्र धर्म है और ग्राह्यण की ध्वजा एक भिन्न पाप है । दोनों का परिणाम भिन्न है । हम ताग कमवादी हैं । फल दोनों का ही मिलेगा ।

—अव १ दृश्य १, पृ० २६ ।

(५) भाणवक —

मौ में जाता हूँ भाग्य में हाँ ग तो फिर तुम्हारे दान करूँगा ।

—अव १ दृश्य ४ पृ० ३४ ।

(६) श्रुति जरत्कार —

धर्म का लिये ही सब युद्ध कराती है जनमेजय मैं तुम्हारा दामा करता हूँ, किन्तु कमफल तो स्वयं समीप प्राप्त हैं । उनसे भाग कर कोई बच नहीं सकता स्मरण रखना मनुष्य प्रकृति का अनुचर और नियति का दास है ।

—अव १, दृश्य ७, पृ० २३-२४ ।

(७) जनमजय (स्वगत) —

मनुष्य क्या है प्रकृति का अनुचर और नियति का दास या उगड़ी शीतल का उपनरण । फिर क्या वह अपने का कुछ समझता है ?

—अंक २ दृश्य १ पृ० ४३ ।

(८) नेपथ्य से —

जीने का अधिकार तुम क्या क्या इसमें सुग पाता है ।
मानव तूने कुछ सोचा है क्या आता क्या जाता है ।
आगे अविद्या कम हुआ क्या जीवन स्वयं तब कस था ।
महाशूय के पद में पहना चित्रकार क्या आता है
कारण कम न भिन्न क्या है कम कम चलता है ।
खल खेलने आया है तू फिर क्या रोने जाता है ।

—वही पृ० ४३ ।

(९) जनमेजय —

किन्तु मनुष्य प्रकृति का अनुचर और नियति का दास है । क्या वह कम में स्वतंत्र है ?

—अंक २ दृश्य ३ पृ० ५६ ।

(१०) उत्तर —

अपने कर्तव्य के लिए रोने से क्या वह छूट जाएगा ? उसके बदल में सुकम करन हाग । सप्ताह मनुष्य जब तक यह रहस्य नहीं जानता तभी तक वह नियति का दास बना रहता है । यदि ब्रह्म हत्या पाप है तो अन्वेषण उमका प्रायश्चिन भी तो है ।

—वही पृ ५६ ।

(११) जनमजय —

कह गा । अब एक बार कम मनुष्य में कृष्ण पत्त गा पात्र का कुछ हा ।
मानस्य अत्र मुझ अस्मत्त्व नहीं बना सगगा ।

—वही प ५७ ।

(१२) जनमेजय —

यही उनकी भाग्य लिपि है अस्पष्ट है ।

वपुष्मा —

और क्रिया क भाग्य में है कि अपना अस्मत्त्व पर व्यर्थ सुना करें ।

—वही प ५८ ।

(१३) व्यास —

आमुष्मान तुम्हारे पितामहो ने मुझसे पूछ कर कोई नाम नहीं किया था। और न बिना पूछे मैं उनसे कुछ कहने ही गया था क्योंकि वह नियति थी। दम और अहंकार से पूरा मनुष्य अदृष्ट के क्रीडा कदुक है। अथ नियति कतृत्व-मद से मत मनुष्यो की कम शक्ति को अनुचरी बनाकर अपना काम कराती है।

—अंक ३ पृ० १, प० ७३।

(१४) व्यास —

नियामिका गतिन कृत्रिम स्वाय मिद्धि में स्वायत्त उत्पन्न करती है। ऐसे काम कोई जान बूझ कर नहीं करता और न उनका प्रत्यक्ष में कोई बड़ा कारण खिन्लाई मटना है उल्टा पर को गति और विचारशील मन्नापुण्य ही सम्भजे है पर उसे रोकना उनके बग की बात नहीं है। क्योंकि उनमें विश्व भर के हित का रहस्य है।

—वही पृ० ७४।

(१५) व्यास —

नियति, कवल नियति और कुछ नहीं। ब्राह्मणा की उत्तजना से तुमने अवमेष करने का जो दण्ड सम्प किया है उसमें कुछ विघ्न होगा और घम के नाम पर मात्र नक जा बहुत मी हिमा होती आई है व बहुत दिना तब के लिए एक जाने को है।

—वही प० ७५

(१६) वपुष्मा —

कसा आरक्य है। एक व्यक्ति की हत्या जो अनजान म हो गई विधि विहित आरक्य हत्याओं से छुड़ा जायेगी ? अराग्दनाय कम तिति तरा क्या उद्यम है कुछ समय म नहीं आता।

—अंक ३ दृश्य २ पृ० ७८

(१७) वपुष्मा —

मेरा चित्त चल ही उठा है। भविष्य कुछ टेढी रेखा छाचता हुआ निमाद देता रहा है।

—वही पृ० ७९

(१८) उत्तर —

नियति का शीका बसुव नीचा ऊचा होता हुआ अपन स्थान पर पहुँच हा जायेगा । बिता क्या है बसत कम करते रहना चाहिए ।

—वही, पृ० ८२

(१९) सुरमा —

मैं उस अदृष्ट गति का यत्र हूँ । वह जो मेरे साथ है । मुझ से कोई काम कराना चाहता है ।

—अंक ३ दृश्य ४ प० ८८

(२०) मणिमाना —

कुक्क का कभी अज्ञा परिणाम हुआ है ?

—अंक ३ दृश्य ५ प० ९३

(२१) व्यास —

ब्रह्मचक्र के प्रवर्तन में कसी कठोर कमनीयता है ।

—अंक ३ दृश्य ६ प० ९४

(२२) व्यास —

विश्वात्मा सबका कर्त्याण करता है ।

—वही पृ० ९५

(२३) व्यास —

सच्चाट तुमने एक दिन पछा था कि क्या भविष्य है । दखा नियति का चक्र । यह ब्रह्मचक्र आप ही अपना काय करता रहता है । भनै कहा था कि यज्ञ में विघ्न होगा । फिर भी तुमने यज्ञ किया ही यज्ञ का काय हो चका । बालक मृष्टि सब कर चुकी ।

—अंक ३ दृ० ८ प० १ ८

(२४) समवेत-भान —

हम सब में जो खेन रहा अनिमु'दर परछाईं सा
 आप छिप गया आदर हममें फिर हमको आकार लिया ।
 पूर्णानमय करता है जो अहमति से निज सत्ता का
 तू मैं ही हूँ उस खेनन का प्रणव मध्य गुजार किया ।

—वही प० १०६

समीक्षण -

नाटक के प्रारम्भ में ही कुकुरबंगीय यादवी सुरमा और ऋषि जगत्कार की पत्नी मनसा का वार्तालाप सुनने को मिलता है। मनसा नागजाति की प्रशस्ति गाते हुए कहती है 'क्या इस विश्व के रगमच पर नागो ने कोई स्पृहणीय अभिनय नहीं किया?' यहाँ विश्व के रगमच पर की उक्ति ध्यान देने योग्य है जिससे ध्वनित होता है मानो यह विश्व एक रगमच है और जीवार्थमा उसका चलता फिरता पात्र है। कामायनी में भी प्रसाद ने कहा है

विश्व कम रगस्थल है।' लगता है प्रसाद की यह भावना रही होगी कि मनुष्य अपन पूर्वोक्त मस्कारा को लेकर मसार में आता है और तन्नुसार अभिनय करके चला जाता है। प्रकारांतर से कम-सम्बन्धी धारणा यहाँ व्यक्त हुई लगती है।

इसी दृश्य में था कृष्ण अजुन को जड़ और चेतन के विषय में समझाते हुए चेतन की महत्ता प्रतिपादित करते हैं। उनके अनुसार जड़ता चेतन का ही नियमात्मक स्वरूप है। अतः सबत्र गुद्ध चेतन है जड़ता कहीं? यह तो एक भ्रमात्मक कल्पना है।' कृष्ण की इस उक्ति का संदेश ऐसा जान पड़ता है मानो इस विश्व का संचालन करने वाली कोई चेतन सत्ता है जड़ नहीं। यहाँ पर यह धारणा भी मिलती है कि जिसे चेतनता की सजा से वे अभिहित करते हैं वह पुरुषाय और जिसे जड़ता का नाम देते हैं वह भ्रमण्यता है। यथाचि अजुन के यह पूछने पर कि मैं क्या हूँ उनका आशय है पुरुषाय का जड़ता हटाओ। अतः यहाँ कृष्ण अजुन को कमवाद का यह संदेश ही देते हुए प्रतीत होते हैं कि पुरुषाय दशाश्रित आलस्य भयवा भ्रमण्यता नहीं।

जनमेजय की राज-सभा में भी कम की चर्चा हम सुनाई देती है। पुरोहित काश्यप का कथन है कि राष्ट्र हिन एक स्वतंत्र घम है और आह्वान की व्यवस्था पाप है। हम लोग कमवादी हैं। फल दोनों का ही मिलना। कम चाहें गुम हो या अगुम पर उसका फल भ्रमण्य मिलना है।

इस नाटक के प्रथम अङ्क का सानवी हय्य अद्यतन मद्रवपूर्ण है। मृगया सेतने समय हरिण के घात में जनमेजय द्वारा ऋषि जगत्कार की हत्या हो जाती है। उन्हें पापत अवस्था में अल्पकाल देवपर जनमेजय यह उठता है अनय हा गया हाय रे भाग्य, भाए मे मृगया खलकर हृदय बहाने यहाँ हो

गया ब्रह्म हत्या का महापातक। यही दो शब्द विचारणीय हैं— हाथ रे भाग्य और ब्रह्म हत्या का महापातक—जो क्रमण जनमेजय को भाग्यवादी और कमवादी सिद्ध करते हैं।

मृत्यु से पूर्व जरतकार द्वारा कहे गए निम्नलिखित शब्द नाटक के समस्त घटनाक्रम पर अत तक छाए रहते हैं —

भद्रष्ट की लिपि ही सब कुछ कराती है जनमेजय में तुमको क्षमा करता हू किन्तु कमफल तो स्वयं समीप आते हैं उनसे भाग कर कोई बच नहीं सकता स्मरण रखना मनुष्य प्रकृति का अनुचर और नियति का दास है।

इस कथन में मुख्यतः तीन बातें अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। प्रथमतः भद्रष्ट की लिपि पर जो कुछ अंकित है उसी के अनुसार मनुष्य को वाय करना पड़ता है नित्यमत कमफलो से कोई नहीं बच सकता है वधो कि व स्वयं कर्ता के पास पहुँच जाते हैं और अतः मनुष्य प्रकृति का अनुचर और नियति का दास है। प्रथम और अनिमिबिन्दु अवश्य भाग्यवादी कहे जा सकते हैं किन्तु मध्यभाग स्पष्ट करेता है कि कम फलो से कोई अथवा प्रयत्न करने पर भी बच नहीं सकता। यहाँ महाभारतकार की इस प्रसिद्ध उक्ति की ओर हमारा ध्यान चला जाता है —

यथा धेनुसहस्रव धत्सो विदति मातरम।

तथा पूवकृतं कम कर्तारमनुगच्छति। (गाति पर्व १८१-१६)

जिस प्रकार सहस्रा गायों में भी बछ्म अपनी माता के पास चला जाता है उसी प्रकार पूर्वकृत कम कर्ता को पहचान लेते हैं। अतः जरतकार की उक्ति का मध्यभाग उक्त श्लोक के उत्तराद्ध का अनुवाद ही कहा जाएगा। इस विषय से सिद्ध है कि प्रसाद की नियति के सदर्भ में जगह जगह उद्धृत किया जाना चाहिए यह कथन यद्यपि नियतिवादी है पर कमवाद में सूय नहीं है अपितु इससे किसी सीमा तक कम मायता की सुन्दर पुष्टि भी होती है।

मनुष्य प्रकृति का अनुचर और नियति का दास है—इस वाक्य पर भी विचार करना यहाँ अत्यावश्यक हो जाता है। इस कथन का यह आशय कदापि नहीं लेना चाहिए कि मनुष्य भाग्य का गुनम है। वस्तुतः मनुष्य के लिए प्रकृति व नियमों का पालन करना आवश्यक हो जाता है। भयकर भीषण और तूफान में बाहर घूमने वाले को ब्रष्ट सहना ही पड़ेगा। समुद्र की उताहल

तरंगों के विपरीत तरंगों का प्रयास निरर्थक ही होगा और गहन अधिकार में अपनी आत्मा का उपयोग चाहने वाले को असफलता ही हाथ लगेगी। इसीलिए प्रसाद ने मनुष्य को प्रकृति का अनुचर कहा। 'यह तो हुआ समष्टि परक अथ अन्वय-व्यक्तिपरक दृष्टिकोण में देखने पर भी हम पाते हैं कि मानव अपने स्वभाव के अधीन ही होता है। इस नाटक में प्रकृति का साक्ष्यपरक अथ भा आह्वान है जसा कि नेपथ्य-नाटि (पृ० ४७) से भलवता है।

अथ 'नियति' शब्द पर भी थोड़ा विचार कर लें। नियति यहाँ काय कारण की उस परम्परा का बोध कराती है जो विश्व का नियमन करती है और जिसके विषय में प्रथम अध्याय में हम बहुत कुछ विचार कर आए हैं। यहाँ यही कह देना उचित होगा कि यह भाग्य का पर्याय नहीं है। किन्तु जनमेजय द्वारा जहाँ नियति और 'कर्म-स्वातन्त्र्य' का प्रश्न उठाया गया है, वहाँ संभवतः जनमेजय नियति को भाग्य के अर्थ में प्रयुक्त कर रहा है। यह उक्तवाच्य अर्थ है जरत्कार की उक्ति का नहीं। इस आलोचक में देखने पर जरत्कार का उपरोक्त कथन नियतिवादी और कर्मवादी भावात्मिका का सुन्दर चित्रण कहा जा सकता है।

जरत्कार का यह कथन बहुत समय तक जनमेजय को उद्बलित करता रहता है। हालाँकि वह ऋषि के मरणोपरान्त वही यह स्वीकार करता है सचमुच मनुष्य प्रकृति का अनुचर और नियति का दास है—किन्तु थोड़ी ही देर बाद वह स्वयं से ही पूछ बैठता है कि यदि ऐसा है तो फिर क्यों मनुष्य अपने आपका कुछ समझता है। ठीक इसी समय नेपथ्य से उसे कर्मवादी स्वरों में यह गीत सुनाई देता है।

आद्य अविद्या बन् हुआ क्यों जीव स्वयं तब जैसे था।

कारण बन् न भिन्न कहीं है बन् बन् चेतनता है।

सब खेलने आया है तू फिर क्यों रान जाता है।

फिर भी जनमत्रय का विवल्प विवल्प ही रह जाता है। क्या वह (मनुष्य) बन् में स्वतन्त्र है' वह उक्तक से पूछता है। उक्तक द्वारा जनमेजय की समस्या का समाधान इन शब्दों में होता है

(१) आपते हृष्यन् बन् सच प्रकृतिजगुण —गीता ३-५।

अपने कलक के लिए रीने से क्या वह छूट जाएगा ? उसके बदले में सुकम करने होंगे सध्याट, मनुष्य जब यह रहस्य नहीं जानता तभी तब वह नियति का दास बना रहता है। यदि ब्रह्महत्या पाप है तो अश्वमेध उसका प्रायश्चित्त भी तो है।' यह समझाते हुए उत्तक जनमेजय को पुण्याय और सत्कर्म का पाठ पढ़ाता है तथा पूछता है कि वह ब्रह्महत्या के इस पाप से मुक्त होन के निमित्त सुकम (यनादि) करेगा या नहीं ? उत्तक के कम-सदा से अत्यन्त प्रभावित होकर कहा गया जनमेजय का यह कथन पुनः नाटक को कमवादी रंगत प्रदान करता है वरूंगा अतः एक बार कम-समुत्तम कृत पढ़ूंगा चाहे जो कुछ हो। आलस्य अथ मुक्त अकर्मण्य नहीं बना सकते।

तृतीय अथ मे नियतवादी ऋषि व्यास की उक्तियाँ हमें सुनने को मिलती हैं। वेणुव्यास को समझाते हुए वे कहते हैं कि सब कुछ पहले से ही नियत रहता है उसे कोई परिवर्तित नहीं कर सकता दम और अघकार से पूरा मनुष्य अदृष्ट शक्ति के धीजा कदुक हैं। अथ नियति कर्तृत्व मद से मत्ता मनुष्यो की कम शक्ति को अनुचरी बनाकर अपना काय करती है। व्यास का यह कथन दर्शाता है कि नियति के सामने मनुष्य की स्वतंत्र इच्छा शक्ति का कोई बग नहीं चरता। हम सभी उस विश्व नियामिका शक्ति के हाथों में उपकरण मात्र हैं।

नियति के लिए यहाँ प्रयुक्त हुआ विशेषण 'अध' भी विचारणीय है। हमारी दृष्टि में यहाँ यह तात्पर्य नहीं लेना चाहिए कि नियति के नियम ही अधे हैं अपितु यह कहना अधिक् ठीक होगा कि नियति स्वयं ही किसी और भी न देखकर अत्यन्त कठोरता से अपने नियमों का पालन करती है। क्योंकि व्यास आगे के कथनों में नियति के मानवकल्याणमय स्वरूप का दर्शन करते हैं।

जब जनमेजय उपरोक्त कथन का तात्पर्य पूछता है तो वे उसे यह कहकर समझाते हैं उलट फर को शान्त और विचारणीय मनुष्य ही समझते हैं पर उसे रोचना उनके वश की बात नहीं है क्योंकि उसमें विश्व भर के हित का रहस्य है। अथ सिद्ध हो जाता है कि व्यास जिस नियति की चर्चा करते हैं वह प्रकृति की नियामिका शक्ति है उसकी सत्ता अपरिहाय है और उसके समस्त काय-व्यापारों के पीछे समस्त विश्व हित का रहस्य सन्निहित है।

इसी अङ्क के द्वितीय दृश्य में वपुष्मत्ता और उत्तक द्वारा नियति की सलाह का स्वीकार करते हुए भी कम की महत्ता का प्रतिपादन हुआ है। रानी वपुष्मत्ता के अनुसार एक व्यक्ति की हत्या का प्रायश्चित्त करने के लिए अमरुप्य जीव हत्याएँ करना कहीं तक उचित है। वह जनमेजय की यज्ञ-बलि का विरोध करती हुई कहती है 'अखंडनीय कमलिपि, तेरा उद्देश्य कुछ समझ में नहीं आता भविष्य कृष्ण टण्डुली रखा खाचना हुआ सिपाई दे रहा है।' उत्तक भी कम सम्बन्धी अपनी दण्ड-मायता का परिचय देता है 'नियति का शीला बहुत ही बड़ा ऊँचा है। वह अपने स्थान पर पहुँच ही जाएगा। चिन्ता क्या है ? केवल कम करते रहना चाहिए।'

किन्तु व्यास के अन्तिम कथन पुनः नियतिवादिता का प्रतिपादन करते हैं। उनके अनुसार 'सबसे नियति केवल नियति है। ब्रह्म-चक्र का प्रवर्तन कठोर' और कमनीयता लिए हुए है जो आप ही अपना काय करता रहता है। इस प्रकार ऋषि व्यास नाटक के प्रारम्भ से अन्त तक घोर नियतिवादी पात्र बने रहते हैं।

निष्पत्ति — प्रसाद की इस नाट्य-कृति में नियति का सर्वाधिक चर्चा हुई है। प्रारम्भ से अन्त तक नाटक पर नियतिवादी दृष्टि अत्यन्त स्पष्ट है। किन्तु इसमें प्रसाद का नियति सम्बन्धी दृष्टिकोण कम विहीन नहीं रहा है। वस्तुतः इस नाटक में प्रसाद दोनों की महत्ता पर ही बल देते हुए चले हैं। यद्यपि बार-बार यह वाक्य कि मनुष्य प्रकृति का अनुचर और नियति का दास है पत्थर पाठक यह सोचन लगता है कि नाटक पूर्णतः नियतिवादी है।

ऋषि जराहण और वेदव्यास इस नाटक के ही नहीं प्रसाद के भी सबसे बड़े नियतिवादी पात्र हैं। दोनों के द्वारा नियति का जो विवेचन विलक्षण हम नाटक में सुनते हैं उससे प्रसाद की नियति के सम्बन्ध में हमारी ये धारणाएँ बनती हैं —

- (क) नियति विश्व की नियामिका शक्ति है, जो काय-कारण की परम्परा को लेकर चलती हुई इस विश्व का संचालन कर रही है।
- (ख) महर्षि व्यास का गणना में इस नियति का कोई परिवर्तित नहीं कर सकता। दम्भ और अहंकारपूर्ण मनुष्य उसके लिए शीला-चक्र बन जाते हैं।
- (ग) नियति कठोर और कमनीय है। कठोर इसलिए कि वह अपरिवर्तनीय है और कमनीय इसलिए कि वह मानव कल्याण का उद्देश्य लेकर चलती है।

(घ) नियति पूर्व नियत है। इसीलिए यद्यपि प्रत्येक मनुष्य उसे नहीं देख सकता किन्तु वेद-यास जैसे महारमा पहले से ही उसका प्रयोग करने लगे हैं। फिर भी उसे परिवर्तित करने का सामर्थ्य उनमें भी नहीं है क्योंकि उसमें मानव-कल्याण का उद्देश्य समिन्त है।

(ङ) नियति चक्र स्वचालित है अथवा उसका कोई संचालक भी है—इस विषय में व्यास का मत है कि नियति अपने आप ही कार्य करती रहती है।

नियति विषयक उपरोक्त दृष्टिकोण स्पष्टतः बौद्धिक ऋतुवाद से प्रभावित लगता है। यहाँ भी ऋतु को अखण्डनीय अपरिवर्तनीय कार्यकारण-परम्परा युक्त और स्वचालित माना गया है। ऋतुवाद की चर्चा करते हुए हम तृतीय अध्याय में यह देख ही चुके हैं। अतः निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि प्रसाद की नियति भावना बौद्धिक ऋतुवाद के प्रभाव को लेकर चली है यद्यपि प्रकृतिमानस में वह नए नए प्रभाव ग्रहण करती गई है।

अब हमें नाटक के अर्थ पात्रों को लेकर भी 'नियति विषय विचार करना है। ऋषि जरत्कारु और वेद-यास के प्रतिरिक्त भगवान् श्री कृष्ण जनमेजय और उत्तक भी नाटक के प्रमुख पात्र हैं। भगवान् कृष्ण नाटक के प्रारम्भ में ही अजन को कमवाद का संदेश देने हुए जड़ना को हटाकर पुरुषार्थ करने को प्रेरित करते हैं। उनका भी बार-बार जनमेजय से कहा है कि उसे ब्रह्महत्या के पाप से मुक्ति पाने के लिए कमरत होना चाहिए। वह यह मानने से इंकार नहीं करता कि मनुष्य प्रकृति का अनुचर और नियति का दास है किन्तु यह तभी तक है जब तक मनुष्य यह रहस्य नहीं जान लेता कि अपना पाप कम घटाने के लिए उसे प्राण-पण से सुकमरत होना चाहिए। उत्तक का यह तक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है जिससे प्रभावित होकर जनमेजय भी पुरुषार्थी बनकर कमरत होने की प्रतिज्ञा कर लेता है। नाटक के घटनाक्रम में यह कमवादी मोड़ दृश्यनीय है। इसी कमवाद से प्रेरित होकर जनमेजय गागयण का आयोजन करता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि जनमेजय नियतिवादी पात्र होकर भी कमवादी है। उसकी नियतिवादिता उसे अकर्मण्य नहीं बनाती यद्यपि अपने निराशावादी स्वभाव के कारण कहीं कहा वह निरस्तसाह सा लिखाई देता है। किन्तु हम तो यह देखना है कि मनुष्य प्रकृति का अनुचर और नियति का दास है—मानने वाला यह पात्र भी स्वयं को पूणतः भाग्यान्वित वहाँ कर देता है? ऋषि जरत्कारु भी यह कहने से पूर्व कि मनुष्य प्रकृति का अनुचर और

नियति का दास है यही कहते हुए देखे जाते हैं, 'कम-कल तो स्वयं समीप आते हैं, उनसे भागकर कोई नहीं बच सकता। वपुष्टमा भी अखण्डनीय कमलपि का गुणगान करती है। जनमेजय के मानसिक द्वंद्व के समय नेपथ्य का गीत भी जो प्रसाद का आत्म वचन सा प्रतीत होता है—कम का ही सदेव देता है। अतः नियति-मटी की सीला प्रधान इस नाट्य रचना में कम पाद भी शुद्ध रूप में यत्र-तत्र उभर आता है।

इसमें सन्देह नहीं कि नाटक के घटनाचक्र और ऋषि जरत्कार तथा वेदव्यास के वचनों से नाटक नियतिवादी अविष्य वाणिष्य का जमघट-सा लगने लगता है और हम सोचने लगते हैं कि नाटक पूणतः नियति भावनाओं से प्रोत्पन्न है किन्तु पात्रों के मनोविश्लेषण से कमवाद की सुंदर पुष्टि होती है। केवल जरत्कार और व्यास ही नियतिवाद भावनाओं के स्रोत सिद्धाई पड़ते हैं। किन्तु डॉ० सहन को तो उनमें भी कमवादिना के दान हाते हैं 'जनमेजय का नागयज्ञ' में बड़े नियतिवादी है किन्तु उनमें से कोई भी न निश्चय होकर बठता है न कोई निश्चयता का उपदेश ही देता है।' इस प्रकार इन दोनों पात्रों को भी हम कम का विरोधी नहीं पाते।

उपरोक्त विवेचन विश्लेषण के आलोक में देखन पर हम कह सकते हैं कि यद्यपि नियतिवाद की दृष्टि में जनमेजय का नागयज्ञ' एवं अविस्मरणीय वृत्ति है और अतः किसी नाटक में प्रसाद का रुझान नियति की धार रचना नहीं रहा है परन्तु फिर भी इस नाटक को पत्कर हमारी यह पुष्ट धारणा बन जाती है कि प्रमाणात् ही नियति भावना कम मुगापेक्षी है कम से विरक्त नहीं।

कामना

नियति विषयक सार्वभ

(१) कामना —

पिता का मदन मुन रही थी। मैं उपासना-शुद्ध में जाती हूँ
महीन धरना होने वाली है।

—प्रक १, दृश्य ३ पृ० १७

(२) विनाम —

ऐसी सीधी-सादी जाति पर यदि शासन न किया तो पुरुषाय ही क्या।

—वही, पृ०

(१) डॉ० बहैयालाल सहल मूल्यांकन पृ० २७

(३) विलास -

भाग्य से आजकल वामना ही (प्रधान) है। परन्तु मेरे कारण शीघ्र इसको पद से हटना होगा।

-वही पृ० १८,

(४) विलास -

ईश्वर है और वह सबके कम देखता है। अच्छे कार्यों का पारितोषिक और अपराधों का दंड देता है। वह याच करता है अच्छे को अच्छा और बुरे का बुरा।

-प्र १ दृश्य ५ पृ० २७,

(५) विवेक -

यह याच और अयाच क्या है? अपराध और अच्छे कम क्या हैं। हम लोग नहीं जानते। हम खेलते हैं और खेल में एक दूसरे के सहायक हैं। इसमें याच का कोई काम नहीं। पिता अपने बच्चा का खेल देखता है फिर कोप क्यों?

-वही पृ० २७,

(६) विलास -

तुम लोग पुण्य भी करते हो और पाप भी।

विवेक -

पुण्य क्या है?

विलास -

दूसरा की सहायता करना आदि। पाप है दूसरों को कष्ट देना जो निषिद्ध है।

-वही पृ० २७,

(७) विलास -

इस नियम पूरा सत्कार में अनियंत्रित जीवन व्यतीत करना मूल्य नहीं? नियम अवन्य हैं। ऐसे नीले-नभ में अनन्त चलता पिंड उनका सम से उदय और अस्त होना दिन के बाद नीरव निगीध पक्ष विपक्ष पर ज्योतिष्मती राका और बूढ़ ऋतुओं का अक्र और निःसंदेह शाश्व के बाद उद्दाम यौवन, उब सोभ भरी हुई जरा—ये सब क्या नियम नहीं है?

कामना -

यदि ये नियम हैं तो मैं यह सक्ती हूँ कि अच्छे नियम नहीं हैं। ये नियम न होकर 'नियति' हो जाते हैं, असफलता की ग्यानि उत्पन्न करते हैं।

अंक १, दृश्य १ पृ० ३८,

(८) विलास -

नियमा के भले और बुरे दोनों ही कृत्य होते हैं। प्रतिफल भी उन्हीं नियमा में से एक है। कभी-कभी उनका रूप अत्यन्त भयानक होता है। उससे जो घबराता है। परन्तु मनुष्या के बल्याण के लिए उसका उपमाग करना ही पड़ेगा क्योंकि स्वयं प्रकृति वसा करती है। देखो, यह सुन्दर फूल झडकर गिर पडा। जिस मिट्टी से रस खींचकर फूला था उसी में अपना रंग रूप मिला रहा है। परन्तु विश्वभरा इस फूल के प्रत्येक केशर बीज को अलग अलग वृक्ष बना दगी उन्हें सबडों फूल देगा।

-अंक २, दृश्य १ पृ० ३८ ३९,

(९) विलास

मेरी मानसिक अवस्था कसे छाया चित्र खिलती है। कोई अदृष्ट शक्ति सकत कर रही है मैं इस देग के अनिर्दिष्ट आवास पथ का धूमकेतु हूँ। चलूंगा मरी महत्वाकांक्षा ने आकाश और समय दोनों की सृष्टि कर दी है। उसमें पदार्थों के द्वारा नयी सृष्टि के साथ मे बुहेलिका सागर में विलीन हो जाऊँ।

-अंक २ दृश्य ४ पृ० ४८ ५६,

(१०) लीला -

तेरे आभूषणों की तो द्वीप भर में घूम है।

लालसा -

परन्तु दुर्भाग्य की तो न कहागी।

-अंक २, दृश्य ६ पृ० ५६

(११) दूसरी -

ब्याह कर तो रानी।

कामना -

धुप भूषण अपने हाथों से जो विडम्बना मोल ली है उसका प्रतिफल कौन भागेगा।

अंक ३ दृश्य २ पृ० ७२।

(१२) कामना -

मेरे दुर्भाग्य से।

वही, पृ० ७६।

(१३) माता —

सुमगा तिराट्टू पति मरे भाग्य म बन्ना चा ।

धक ३ दृश्य ५ पृ० ८३ ।

(१४) विवेक —

दूमरे की रसा म पाप का विरोध और परोपकार म प्राण तक दे देने का साहस तिस भाग्यवान को होता है ।

धक ३ दृश्य ७ पृ० ९१

(१५) सभी —

येन लो नाथ विश्व का येन ।

धक ३ दृश्य ८ पृ ९७ ।

समीक्षण

प्रथम अंक के तृतीय दृश्य म जब कामना और विलास वार्तालाप मे सलग्न होत हैं तभी एक पत्नी बोलता है और कामना घुटने टिका कर सिर झुका लेती है । जब विलास पूछता है कि वह क्या कर रही है तो कामना कहती है पिता का सद्ग सुन रही थी । मैं उपासना गृह मे जाती हूँ क्योंकि कोई नवीन घटना होने वाली है । इससे लगता है कि कामना पिता रूपी किसी भ्रूलौकिक सत्ता म विन्वास रखती है तथा यह भी व्यजित होता है कि कुछ घटनाएँ पूव निर्दिष्ट होती हैं जिनका पूर्वाभास किसी माध्यम से यथा-कदा भिन जाता है । यहाँ पक्षी को उस माध्यम रूप मे देखा जा सकता है ।

इसी स्थान पर जब कामना उपासना-गृह म चली जाती है तो विलास द्वीपवासिया का दास बनाने की याचना बनाता है और कहता है कि उसका पुरुषाय किस काम का है यदि वह ऐसी भोनी भानी जाति पर भी अपना शासन स्थापित नहा कर सका । यहाँ पुरुषाय की अभिव्यजना और कमवादी संकेत स्पष्ट है । किन्तु जहाँ विलास पुरुषाय की बात करता है वही यह जान कर कि आजकल उपासना गृह का नेतृत्व कामना के ही हाथ म है अपने भाग्य का भी स्मरण करता है भाग्य से आजकल कामना ही (प्रधान) है । परन्तु मरे कारण गीघ इसको पद से हटना होगा । यहाँ विलास की भाग्य और पुरुषाय परक दोनों मन स्थितिओ का चित्रण हुआ है ।

पाँचवें दृश्य में जब कामना उपासना गृह का नेतृत्व करती हुई सभी नागरिकों से जब यह कहती है कि वे विलास का उपदेश सुने तो कई स्त्री पुरुष इसका विरोध करते हैं। विलास उन्हें सचेत करते हुए कहता है कि यदि ऐसा करोगे तो ईश्वर का प्रनोप होगा। ईश्वर की व्याख्या भी वह प्रस्तुत करता है, 'ईश्वर है और वह सब के कम दक्षता है। अच्छे कार्यों का पारितोषिक और बुरे कार्यों का दण्ड देता है। वह न्याय करता है अर्थात् अर्थ को अर्थ और बुरे को बुरा।' यहाँ विलास जसा भौतिकवादी पात्र भी कम फला की चर्चा करता हुआ दखा जा सकता है। इसे कहा जा सकता है कि प्रसाद के मन पर इस भारतीय सत्कार की छाया रही होगी कि जो जसा करेगा उसे वसा ही फल भोगना होगा। कमवादी यह विश्वास ऋग्वेद के समय से ही भारत प्रचलित रहा है।

महा पर जब विवेक विलास से न्याय और अन्याय का तात्पर्य पूछता है तो उसके कथन में भी कम शब्द का प्रयोग द्रष्टव्य है। विवेक का यह कहना पिता का सदा सुनने वाला वाक्य याद दिला देता है। इससे सिद्ध है कि पूल द्वीप के वासी पितारूपी किसी मानवेतर सत्ता में अटूट विश्वास रखते हैं। विलास तो विदगी होकर भी इसकी चर्चा करता है।

विवेक जब पाप और पुण्य के विषय में अपनी जिज्ञासा व्यक्त करता है तो विलास इन दोनों की व्याख्या करते हुए उसे समझाता है कि दूसरा की सहायता करना ही पुण्य है और किसी का कष्ट देना ही पाप। विलास के इन विचारों को भी हम कमवाद की संज्ञा दे सकते हैं।

दूसरे अंक के प्रथम दृश्य में ही विलास कामना को यह शिक्षा देता है कि इस नियमपूर्ण ससार में अनियंत्रित जीवन बिताना मूलतः हानिकारक है। नियमों की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए वह कहता है, 'नियम भवत्य है। ऐसे नीले नम में अन्त उल्कापिंड उनका क्रम में उदय और अस्त होना तिन के बाद नीरव निर्भीक पक्ष-पक्ष पर ज्योतिष्मती राका और ब्रह्म अस्तुभा का चक्र और निस्त-देह शक्ति के बाद उद्दाम जीवन तब शोभ से मरी हुई जरा ये सब क्या नियम नहीं हैं? विलास का यह पूरा सवाद बौद्धिक अज्ञान सम्बन्धी मान्यता का अनुवाद-सा लगता है। श्रुत का एक पर्याय नियम भी है यह हम अज्ञात अज्ञान्य में लित पाए हैं। अतः यहाँ भी प्रसाद पर श्रुत-सम्बन्धी प्रभाव स्पष्ट देखा जा सकता है।

किन्तु कामना के अनुसार यदि ये नियम हैं तो प्रकृत नियम नहीं अपितु 'नियति' है और अगम्यता की स्थािति को उत्पन्न करने वाला है। नियति शब्द का उग्रा प्रयोग हमारे दृष्टि पथ में प्रगाढ के अर्थ किसी नाटक में नहीं आया। यहाँ नियम और नियति शब्द विपरीत रूप में प्रयुक्त हुए हैं। नियति का प्रयोग यहाँ अपरिहार्य दय या भाग्य के अर्थ में हुआ है जो किसी नियम की परवाह किए बिना प्रधाधुध काय करता है। नियति का यह अर्थ लेने पर यहाँ नियम शब्द का तात्पर्य सुनिश्चित नियम विधान अर्थात् काय कारण परम्परा युक्त नियति से ही होगा जो कि प्रकृत शब्द के बहुत समीप आ जाता है।

आगे विलास इस नियम परम्परा का प्रकृति सम्बन्धी दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। उसकी दृष्टि में प्रकृति मानव-वस्तुएँमयी है चाहे उसकी नियम परम्परा में कभी कभी अत्यन्त भयानक उगने वाले प्रतिफल भी क्यों न प्राप्त होते हों। प्रकृति का जो पुष्प मिट्टी से उत्पन्न होता है उसी को हम पुन मिट्टी में मिलते हुए देखते हैं। कोई दण्ड फूल में पड़े बिलम्बते फूल को देखकर यह कह सकता है कि इसकी यह दण्ड प्रकृति की क्रूरता का धातन कराती है पर वास्तविकता यह है कि इसी पुष्प बीज से वसुधरा पुन सहस्रा पुष्पो की जन्म देती। अपने इस प्रकार के विवेचन से विलास यही दर्शाना चाहता है कि ऊपर से देखने पर प्रकृति का नियम क्रूर लग सकते हैं पर वस्तुतः वे समष्टि के सख के लिए हैं दुःख के लिए नहीं।

इसी अर्थ के चतुर्थ दृश्य में विनास के सम्मुख जब कामना विवाह प्रस्ताव लेकर आती है तो विनास असमजग में पड़ जाता है क्योंकि वह लालसा की अचलता पर मुग्ध है। अपनी मनादण्ड के प्रति वह कह उठता है मेरी मानसिक अवस्था कस छायाचित्र खिलती है। कोई अदृष्ट शक्ति सचेत कर रही है। इस स्थल पर विनास मानसिक अतन्द्रण में पड़कर अपने पुरुषाय को भूत जाता है तथा अपने भाग्य की विडम्बना पर आश्चर्य चकित होता है।

द्वितीय अर्थ के छठ और तृतीय दृश्य में जानना और कामना द्वारा दुर्भाग्य तथा वसुधरा का सामना य अर्थों में प्रयोग हुआ है। तृतीय अर्थ के पंचम दृश्य में एक माना भी अपने पति को फटकारते हुए भाग्य का प्रयोग वान-वान की भाषा में करती है।

अन्त में समवेत स्वरों में जो गीत गाया जाता है उसमें भी नाना कर्मों से निवृत्ति पाकर मुसल दुसले के द्वंद से दूर हटकर एक सूत्र में बंध जान का

मानवतावादी दृष्टिकोण देखा जा सकता है। इस गति में भी आणिक कमवाद मिल जाता है।

निष्कर्ष — प्रसाद का यह नाटक आद्यात प्रतीकात्मक है विरोधित चित्तवृत्तियों के विनियमण में ही ध्यान लगा रहना है अतः किसी दार्शनिक सिद्धान्त विरोध की पुष्टि इसमें नहीं हुई है। इसीलिए प्रसाद के नियतिवाद के सम्बन्ध में यह महत्वपूर्ण कृति नहीं है।

किन्तु भी कई स्थलों पर कमवादी और श्रुतवादी मकेत प्राप्त होते हैं। द्वीप के सभी निवासी किसी अलौकिक सत्ता में विश्वास रखते हैं। यहाँ तक कि भौतिकता का प्रतिनिधि पात्र विलास भी ईश्वरवादी है। वह यह भी मानता है कि समस्त विश्व का संचालन नियमों द्वारा होता है नियम क्या हैं और किस प्रकार काय करते हैं इसका यद्यपि उसके द्वारा पूरुण स्पष्टीकरण नहीं हो सका है पर जिस प्रकार वह नियमों की विवेचना करता है, उससे यही सिद्ध होता है कि नियमों को वह श्रुतवादी भावना के परिप्रेक्ष्य में रखता है। उमने एक स्थान पर अदृष्ट की सत्ता भी स्वीकार की है किन्तु वह उसकी तत्त्वानीन मानसिक दुबलता का ही परिणाम है अतः वह भाग्यवादी नहीं है। उसका चरित्र विलासिता से आतप्रात होते हुए भी एक कमठ कायरत और पुरुषार्थी व्यक्ति का सा चरित्र है। डा० बाहरी के अनुसार 'वह बड़ा कायकुशल और पुरुषार्थी है उसमें अच्छी समझन शक्ति है।'^१

अपने पुरुषार्थ को वह अपने मुख से भी चर्चा करता है। अपनी अदम्य शक्ति और पुरुषार्थशालिता के कारण ही वह एक बार तो पूरे द्वीप पर अपना शासन जमा ही लेता है—चाहे बाद में उस यहाँ से भागना ही क्यों न पड़ता हो। ईश्वर के विषय में वह कहता है कि वह सबके कम देखता है तथा उन्हें कर्मानुसार शुभा-शुभ फल देता है। उसकी इस उक्ति से यह ध्वनित होता है माना ईश्वर के रूप में वह वर्ण की ही शक्ति का रहा हो जा कि अमलक मन्त्रों के कम रखने हैं। अतः इस नाटक में प्रकारान्तर से श्रुतवादी आलाप में कम सिद्धांत की प्रतीति होती है।

अतः यह कहना सत्य के अधिकाधिक दृष्टांत कि प्रत्यक्ष रूप से वही भी नियति विषयक कम-सम्बन्धी अथवा श्रुतवादी निरूपण नहीं हुआ है

जहाँ इस प्रकार के सकेत मिलते हैं वे सम्भवतः प्रसाद के हृद्गत मस्वारा के परिणाम स्वरूप ही उपस्थित हुए हैं।

— ० —

स्कन्दगुप्त

नियति विषयक सदभ

(१) धातुसेन — प्रकृति क्रियाशील है। समय पुरुष-स्त्री की गँद लेकर दोनों हाथ से खेलता है। पुंलिंग और स्त्रीलिंग की समष्टि अभिव्यक्ति की कुञ्जी है। पुरुष उद्याल दिया जाता है उत्प्रक्षण होता है। स्त्री आवरण करती है। यही जड़ प्रकृति का चेतन रहस्य है।

—अंक १ दृश्य ३ पृ० २४

(२) अनन्तदेवी — अपनी नियति का पप में अपने परो चलूगी।

अंक १ दृश्य ४ पृ० २६

(३) अनन्तदेवी — सूचीभेद्य अघवार म छिपनेवाली रहस्यमयी नियति का प्रज्वलित बठोर नियति का नील आवरण उठाकर भाँकने वाला

—वही पृ २८

(४) भटाव — एक दुर्भेद्य नारी हृदय म विन्व प्रहेनिका का रहस्य बीज है। आह कितनी सहनशील स्त्री है? दलू? गुप्त-साम्राज्य के भाग्य की कुञ्जी यह विषय घुमाती है।

—वही पृ २९

(५) रामा — मूल अभागा कौन है? जो मसार के सबसे पवित्र धम कृतगता को भूल जाता है और भून जाता है कि सबके ऊपर एक अटल अदृष्ट का नियामक सवगतिमान है

—अंक २ दृश्य ४ पृ ६३

(५) मातृगुप्त — ओह पाप पक् म नित्त मनुष्य को छुट्टी नहीं। कुकर्म उसे जकड़ कर अपने नागपान म बाँध नेता है।

—अंक ३ दृश्य १ पृ० ८३

(७) मानुगुप्त — ओह सोचा था कि दबता जागेंगे एक बार भार्यावित मे गौरव का मूय चमकेगा और पुण्य कर्मों से समस्त पाप पक् धो जाएंगे

—अंक ४ दृश्य १, पृ० ११३

(८) चक्रमानिन - मनुष्य की अदृष्ट लिपि वसी ही है जमी अग्नि रेखाओं से कृष्ण मेष में विजली की बणमाला एक क्षण में प्रकलित दूसरे क्षण में विलीन हान वाला। भविष्यत् का अनुचर तुच्छ मनुष्य केवल अतीत का स्वामी है।

-अंक ४ दश ६ पं० १२१ २२

(९) स्वदण्ड - चेतना कहती है कि तू राजा है और उत्तर में जस कोइ कहता है कि तू खिलौना है - उसी खिलौना पटपत्र गायी बालक के हाथों का खिलौना

-अंक ४, दश ७ पं० १२३,

(१०) विजया - अदृष्ट न इसीलिए उस रात रत्न गृह का बचाया है

-अंक ५ दश १, पं० १२६

(११) स्वदण्ड - परन्तु इस गंवार का कोइ उद्देश्य है मैं कुछ नहीं हूँ उसका अस्त्र हूँ - परमात्मा का अमाप अस्त्र हूँ दण्डायी हलचन के भीतर कोई शक्ति काम कर रही है पवित्र प्राकृतिक नियम अपनी रक्षा के लिए स्वयं सन्नद्ध हैं। मैं उमा महादेव का एक

-अंक ५ दश २ पं० १३७

(१२) देवमना -

बुद्ध करो कि वस सत्ता राजर दीन हा देव को पुनारोग।

रा रह तुम न भाग्य सत्ता है आप विगनी तुम्हा मवाराप।

-अंक १ दश ३ पृ० १४०

समीक्षण -

प्रथम अंक के तृतीय दश में धातुमन मानुष्य द्वारा साम्राज्य में परिवर्तन के विषय में पूछ गये प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा है कि इग गति गीत नगल में यति परिवर्तन हैं ता इमम क्या आसन ? वास्तव में परिवर्तन ही का नाम तो जीवन है। स्थिरता तो मृत्यु का पर्याय है। नार विज्ञान में स्पष्ट व्याप्त है क्याकि प्रकृति स्वयं क्रिया गीत है। यही समय को भाग्य के समरक्षक रूप में प्रयुक्त करते हुए धातुमन कहा है 'समय पुरुष और स्त्री को गें सवर दोना हाथों से पनना है यही जट प्रकृति का घतन रहस्य है। धातुमन द्वारा बह गये इग कथन का दिव्य अत्यन्त स्पष्ट और चीना देने वाला है। भाग्य माना उग व्यक्ति का ही नाम है जा मनुष्य को गें की

भक्ति अपने दानों हाथों से उद्धानता और नचाता है। भाग्य या यह मानवी कर्म रूप और उसके हाथों में मानव की कठुक् स्थिति यह दर्शाती है कि मनुष्य की स्वतंत्र इच्छा शक्ति का प्रारंभ के सम्मुख कोई बग नहीं चलता। कठुक् त्रीडा सम्बन्धों ऐसी रूपों प्रसाद के अन्य नाटकों विषय पर जनमजबूब का नागयण (पृ० ७३-८२) में भी मिलता है। हम रूपों के विषय में प्रसाद जी के रूआन का चर्चा डा सहन करण। म सुनिए —

चिह्नली वार जय नाथ ऐसेपु शिनी स्थित गवनमट क्वाटर पर श्री मविलागरण जा गुत व यहाँ चाय पाने गया ता रयोग स मिद्ध बना ममन श्री रायकृष्ण दास भी वहाँ थ। वाताही वाता म जय प्रसाद जी के नियतिवाद पर चर्चा दिनी तो रायकृष्ण दास जी न बताया कि उमर तयाम की निम्नलिखित रवाई प्रसाद जी का वहाँ पसाद थी —

नहा ही के प्र नाम यथ दीन कठुक् रखता कब काम ?
खिनावा सुकताता जिस और चला जाता दिये या काम ।
हम भी कठुक् सा हा जान की जिसन पँबा अनात
तुम्हें वी भू पर हर आर हमारी जान सारी वान ।

(श्री वचन द्वारा अनुक्ति)^१

सिद्ध है कि प्रमा शि की नियति वहाँ-वहाँ ग्रीक यामिया के अथ भाग्य का रूप नकर भी प्रकट हुई है। धातुमन का उपरोक्त कथन भी एक एमा ही उदाहरण है।

एसी अक के चतुर्थ हय म विजया अनन्तेशी को अत पुर का कठोर मया। वा स्मरण कराती है पर अनन्तेशी को अस्का परवाह कहा ? विजया का वह मन्ता उत्तर दनी है अपनी नियति का पथ में अपने परा चलूगी अपनी गिता रहन द। अनन्तेशी की यह स्वतंत्र इच्छा शक्ति नाटक के घटनाचक्र को भक्भोर कर रख दनी है। अपना कही जानवानी नारी जानि की अथ हाकर भी अनन्तेशी एगी स्त्री है जो नियति के वनीभूत न होकर उस अपना इच्छानुष्ठान बनाने व मनावन स अतप्रात है। भटाक भी उसकी अथ प्रवृत्त की प्रशंसा करता है। आह कितनी साहसगीना स्त्री है ? दपू गुप्त-साअाय के भाग्य की कु जी विपर घुमानी है। भटाक की अथ उक्ति

(१) डा० सहन मूल्याकन (प्रसाद जी के नाटकों में नियतिवाद)
पृ० १७।

सिद्ध करती है कि अनन्तदेवी जसी दृढ़ सक्न्प वाली स्त्री चाहे तो भाग्य की कुर्ची को भी धुमा कर साम्राज्या के इतिहास का परिवर्तित कर सकती है, किन्तु नाटक में ऐसा होना नहीं है।

जसी दृश्य में अनन्तदेवी का प्रपञ्चबुद्धि के विषय में कहा गया यह कथन भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है जो नियति का मुन्त्र विन्नेपण प्रस्तुत करता है 'सूचीभेद्य अघकार में द्विनेवाली रहस्यमयी नियति का प्रज्वलित कठोर नियति का नील आवरण उठाकर भावन वाला अनन्तदेवी के कथना मुसार नियति कठोर है रहस्यमयी है अटल और अपरिहाय है तथा अघकार मयी है। कठोर इसलिए कि वह अपरिवर्तनीय है रहस्यमयी इसलिए कि वह अपने अचल में 'अनागत को छिपाए हुए है अपरिहाय इसलिए कि उसके नियम सुनिश्चित हैं तथा अघकारपूर्ण इसलिए कि जिस घोर अघकार में देखना असम्भव है वस ही 'नियति का पूर्व दान भी सम्भव नहीं, यह बात घोर है कि प्रपञ्चबुद्धि जसा दम्भी व्यक्ति उसे देख सफन का ङाग रचता है।'

दूसरे अंक के पाँचवें दृश्य में जब गवनाग रामा का अभागिन की मना होता है तो रामा कन्ती है कि अभागा तो गवनाग है जा यह भूल जाता है तब ऊपर एक अटल अदृष्ट का नियामक सवगाक्तिमान् है। रामा ने यहाँ चनन मत्ता के रूप में नियति का मुन्त्र विन्नेपण किया है। चौथे अंक के मातृगुप्त दृश्य में विन्नेपण नियामिका गति का गता है मानवाकत स्वरूप स्वगुप्त भी प्रस्तुत करता है। चनना कहती है कि तू राजा है और उत्तर में जस बाद कहता है कि तू खिनीता है—उना कल्पनायी धावर के हाथा का खिलौना

नियति विषयक इहा चर्चाया के बीच हम अटाके घोर मातृगुप्त का कथनापि स्वर भी सुनते हैं। तृतीय अङ्क के प्रथम दृश्य में कुवर्मा के पग हुए प्रपञ्चबुद्धि के प्रति अटाके की उक्ति है मोह पाप पाप में निम मनुष्य का पुट्टी गता। कुवर्म उम जवन् कर अने नागपाग में बाँध देता है। अटाके के पग कथना के इग गिद्वान्त पर प्रनाग जाने हैं कि गगातार कम या दुष्कम करते रहने में व शुभागुप्त कम व्यक्ति का अने पाग में आवड कर लने हैं विनग पुनारा पाना अनाभव हो जाता है। अनुय अंक के तृतीय दृश्य में मातृगुप्त की सम्राट के विषय में कोई समाचार न पाकर घोर दृष्टा

(१) सुतनीय — अहकारविमूढारामा कर्ताहमितिमयत ।

के कश्मीर पर आक्रमण की सूचना सुनकर कहता है 'आह माया या आर्यायत मे गौरव का मूय चमकेगा और पुण्य बर्मा से रामरा पाप पत्र पुन जाएगे सुकर्मों से दुष्कर्मों का पुन जाना कमवाद की पुष्टि करता है ।

चतुर्थ अक्षर के छठे दृश्य में चक्रपालित अष्टलिपि के नाचत्य पर प्रसाद डालता हुआ भाग्य की तुलना विद्यत रखाया से करता है । जिस प्रकार काले कजरारे मेघा पर दामिनि एक क्षण का चमत्कृत होकर दूमरे ही क्षण विनीत हो जाती है ठीक वसी ही गति मनुष्य के भाग्य की भी है । न जान मनुष्य का भाग्य भी किस क्षण उदय हो जाए और किस क्षण अस्त ।

अन्तिम अक्षर के दूसरे दृश्य में स्वर्णगुप्त अपने का ब्रह्मचरु का एक पुजा मानकर अपनी स्वतन्त्र इच्छाशक्ति का श्वरेच्छा के सम्मुख हीन बतलाता हुआ कह उठता है 'परन्तु इस समार का कोई उद्देश्य है मैं कुछ नहीं हूँ उसका अन्तर्-परमात्मा का अमोघ अन्तर् हूँ । मुझ उसके सकेत पर केवल अत्याचारियों के प्रति प्रेरित होना है । किसी से मेरी शत्रुता नहीं क्योंकि मेरी निज की कोई इच्छा नहीं । दगायापी हनन के भीतर का शक्ति काय कर रही है । पवित्र प्राकृतिक नियम अपनी रक्षा करने के लिए स्वयं सन्तुष्ट हैं । मैं उसी ब्रह्मचरु का एक स्वर्णगुप्त के य वाक्य कई बातों पर प्रकाश डालने हूँ । प्रथमतः इस विश्व का कोई उद्देश्य है तृतीयतः विश्व का नियामक ईश्वर है जिसका हाथ में वह एक उपकरण मात्र है तृतीयतः ईश्वर उसे अत्याचारियों का नाश करने की प्रेरणा देता है और अन्ततः यह कि प्राकृतिक नियम अपनी रक्षा स्वयं करते हैं ।

पंचम अक्षर के तृतीय दृश्य में दगा की विपत्तावस्था का देख कर देवसेना गीता है —

कुछ करोग कि बस सदा राकर दीन हा दव को पुनारोग ।

सा रह तुम न भाग्य माता है आप गिगडा तुम्हा सवारोग ।

दक्षिणा की यह सगीत ध्वनि माना प्रसाद की ही हृदय-नील से भ्रूकरित हुए है । दगा दुदगा का दख कर भाग्य के विपरीत कम का यह सदेश पुन नाटक में कमवादी पक्ष का उभारने में सफल होता है ।

निष्कर्ष — स्वर्णगुप्त में प्रसाद का नियति अन्तर्कर्म का बतल कर प्रकाश है । नाट्य रचना की दृष्टि से प्रसाद की यह प्रीति और सब-कुछ कृति का नाश है अन्तिम अक्षर नियति भावना की मन्ता और भी बत जाती है ।

इसम नियति नटी का स्वरूप वही भाग्यपरक है ता कहा कम प्रधान फही वह विश्व की नियामिका गति के रूप म चतन सत्ता का भान कराती है ता वही 'अष्ट' पृ बनकर अमूनता का पापन । अत कहा जा सकता है कि विनोपत इन नाटक म प्रसाद की नियति भावना गतिगील है स्थितिगील नही, वसे यह वान प्रसाद की अर्थ नाटय कृतिया पर भी घन्ति होती है ।

जहा पर धातुसेन प्रवृत्ति की क्रियागीलता का वणन करते समय (भाग्य) का विम्ब उस खिलाडी के रूप म प्रस्तुत करता है जा अपने दोना हाथा म स्त्री पुरुष को कटुक क समान उछालता है वहाँ प्रसाद की नियति भावना को भाग्यवादी परिवेण म देला जा सकता है । जिस प्रकार खिलाडी के हाथ की गेंद स्वय म स्वतंत्र नही और खिलाडी उसे चाहे जहाँ फेंक सकता है उसी प्रकार वहाँ मानव को दवाधीन रूप म चित्रित किया गया है । भाग्य सम्बन्धी प्रसाद की यह धारण ग्रीक वासिया की भाग्यवाणियों के समकक्ष पहुँच जाती है । क्योंकि ठीक इसी प्रकार का चित्र^१ उपस्थित करन वाली उमररम्याम की रुलाई को प्रसाद जी वहाँ पसन्द करत थे अत अनुमान किया जा सकता है कि उनका दववाद क उस रूप पर भी विन्वास था जिसम मानव की स्वतंत्र इच्छागति भाग्य के सम्मुख निरथक सिद्ध हा जाती है और भाग्य मनुष्य को चाहे जसे नाच नचा सकता है ।

अनन्तेशी का यह कहना कि वह अपना नियति का पथ स्वय निधारित करगी यह मिद्ध करता है कि अनाधारण मनोत्र वाता व्यक्ति एक वार तो नियति का पुनोती दे ही सकता है चाहे अत म उमरी परिगति वही क्या न हो जा अनतंत्रा की हई । किन्तु अनन्तेशी की यह गर्वोक्ति हमारे सामन एका का समाधान प्रस्तुत रहा करती कि क्या वास्तव म नियति का पथ मानव स्वय निर्दिष्ट कर सकता है ?

इसका उत्तर हम कमवाण देता है । जम जमातर म मनुष्य लगातार सत्त्वम करक अपनी भावी नियति का स्वामित्व प्राप्त कर सकता है । कम नाटय क कमवाण पात्र टाटा और भातृगुन इसी धारणा का प्रतिनिधित्व करत हैं । मानुष्य का कहना है कि पुण्य कर्मों स पात्र पक पुत्र संत हैं ।

अनन्तेशी का यह कथन कि प्रपञ्चबुद्धि सूचीभेद्य अथवार को शीखर रहम्यमया नियति के नीन पद^२ क भार पार भाँक सकता है सत्य प्रतीत नहीं

(१) द्रष्टव्य — मघती है नियति नटी-सी
कटुक खीडा-सी करती ।

होता ।^१ नियति के आवरण को हटाकर भविष्यत् के दग्ध तो नागयज्ञ के पात्र वेद यास जसा कोई विरना महापुरुष ही कर सकता है प्रपञ्चबुद्धि जगा अथम और कुचक्री पात्र नहीं ।

नाटक म अनक स्थला पर विनियामिरा गति को वेतन रूप भी लिया गया है । रामा के शत्रु म सबके ऊपर एन अटन शक्ति का नियामक सब शक्तिमान है और स्वय स्वदगुप्त भा उमे 'वटपत्रगायी वानर' कहतर पुचार ता है । एक अय स्थन पर यह उस परमात्मा की जना द ता है । यही नहीं उसकी धारणा है पवित्र प्राकृतिन नियम अपनी रणा के लिए स्वय सनद्ध है । ऐसे भी नियति का मानवीकरण ही कहा जाएगा ।

स्वदगुप्त ने अपने कथन म यह महत्वपूर्ण बात उठाई है कि इस विनियम का कोई उद्देश्य अरथ है हम यह प्रसाद का उठाया हुआ प्रश्न जगता है । नागयज्ञ की विवेचना म हम देख चुके हैं कि प्रसाद ने वेदयास से कलवाया है विन्यात्मा सबका कल्याण करता है । स्वदगुप्त का विजया भा अष्ट के लिए कहती है अदष्ट न इसीलिए उस रमित रत्नगृह का बचाया है । जिसस यह ध्वनित हाता है कि अदष्ट भी कल्याण कारक है । नियति को यहा सम्भवत इसलिये अष्ट कहा गया है कि वह पहन स वष्टिगोचर नहा होती ।

अब यह प्रश्न रह जाता है कि क्या यह नाटक पूणत भाग्यवादी नियतिवादी अथवा कमवादी है । इस विषय म किसी एक पक्ष की पुष्टि करना कठिन है । फिर भी यह कहा जा सकता है कि अनंतद वी रामा और स्वदगुप्त जहा नियति को मायता पदान करते हैं धातुसेन जहाँ नियति को भाग्य रूप म ग्रहण करता है चरपालित और विजया जहाँ अदष्ट की महत्ता स्वीकार करत हैं—वहाँ इन म से कोई भी पात्र निचेष्ट हाकर हाथ पर हाथ धरकर नहा बठ जाता । स्वदगुप्त जसा कमवीर पात्र भी यद्यपि कहता है—
चेतना कन्ती है कि तू राजा है और उत्तर मे जसे कोई कहता है कि तू खिलाडी वटपत्रगायी वानर के हाथो का खिनौना —तथापि अन तब वह कम-क्षेत्र म डटा रहता है । कमवीर के रूप म उसका चरित्र प्रसाद के किसी नाटकीय नायक से कम नहीं । इसी प्रकार चरपालित अदष्ट निपि के वि

(१) तुलनीय — कौन उठा सकता है धुपला—
पट भविष्य का जीवन मे ।

सम्पन्न चाचल्य को तो स्वीकार करता है तुच्छ मनुष्य को भविष्य का अनु-
 चर तो बताता है किंतु दोग हित में कथं न कथा मिलाकर स्वर्धगुप्त के
 साथ बमरत भी रहता है। विजया का कथन है कि वह धीर हृदय है।
 प्रपञ्चवृद्धि भाग्यपन उद्वेग्य-पथ का पार करन में पल का तरह जुना रहता है।
 अत्रन्त वी का ना कहना ही क्या अपना अगत महत्वाकांक्षा का पूति में
 वह क्या क्या नहा करता। भटाक और मानृगुप्त का बमरत है हा। नाटक
 का उत्तराध में देवसना का गीत भी बमरत का सुन्दर उदाहरण है किम
 नाटककार की स्तानभूति ही मुखरित हानी का भी प्रस्तान हानी है। इस
 प्रकार स्वर्धगुप्त का य सभा पात्र चाहें धाराणात हा अथवा अधम अपने
 अपने कम भेष में अन्त तक जभन रहत हैं। यद्यपि यह मत्य है कि यद्यत्र वे
 नियति नटी का गुणागन भी करत मुन जात हैं।

अन निष्पत्त यह कथना ही उपयुक्त हागा कि स्वर्धगुप्त में भी प्रसाद
 नियतियादी ता हैं पर उस नियति भावना में भी अस्मग्यता नहा पोष है
 निरागा नही महत्वाकांक्षा है निवृत्ति नहा प्रवृत्ति है, जन्ता नहा स्वप्न
 ही स्वप्न है।

— ० —

चन्द्रगुप्त

नियति विषयक सद्बोध --

(१) मिह्रण — आयावन का भविष्य तितान का लिए कुचक्र और
 प्रनाढना की लखनी और ममि प्रस्तुत हो रही है।

अव १ दृश्य १ पृ० २।

(२) आम्भीक — अनीत के मुग्धा के लिए माच कथा अनागत भविष्य
 के लिए भय कथा और वतमान को मैं अपने अनुकूल का ही सूत्रा फिर
 बिना किस बात की ?

अव १, पृ० ८।

(३) अलका — मत्य है महाराज जिम उत्तनि की आगा में आम्भीक ने
 यह मोष कम बिया है उसका फल यह है कि आज मैं यन्त्रि हूँ समव है
 कल आप हंगे और परमा गांधार की जनता बेगार करणी।

अव १ दृश्य ८ पृ० ४१।

(४) सिक्न्दर — भविष्यवाणियाँ प्रायः सत्य हानी हैं।

अव २ दृश्य १ पृ० ६१।

(५) चन्द्रगुप्त — राजकुमारी समय नहीं दती वह भारतीया के प्रतिफूल दत्त ने भयमाना का मृता किया है

अङ्क २ दृश्य ३ पृ ७४।

(६) पवतेश्वर — ग्राह कता अपमान जिस पवतेश्वर न वग ऊचा करक भाग्य स हमी टठा किया था उसी का निरन्धर

अङ्क ३ दृश्य २ प० १११।

(७) पवतेश्वर — परतु दव प्रतिवृल ही तत्र क्या किया जाय ?

अङ्क २ दृश्य ५ पृ० ८६।

(८) चाणक्य — मनुष्य अपने दुबलता से भली भाँति परिचित होता है परतु उसे अपने बल से भी अवगत रहना चाहिए। अमभव कहकर किसी काम का करन से पहले बम-क्षेत्र म काँप कर उडलडाओ मत पौरव।

अङ्क ३ दृश्य २ पृ ११३।

(९) चन्द्रगुप्त — भविष्य के गम म बहुत से रहस्य छिपे हैं।

वही पृ० ११७।

(१०) राक्षस — काइ भयानक घटना होने वाला है।

अङ्क ३ दृश्य ६ पृ० १४५।

(११) शत्रुघ्न — जीवन हू नन्द नियति सभाटा स भी प्रबल है।

वही पृ १४६।

(१२) चन्द्रगुप्त — बल्याणी बल्याणी यह क्या ?

वत्याणी — वती जो हाना था।

अङ्क ४ दृश्य १ प १५४ ५५।

(१३) चन्द्रगुप्त — न जान कीम मरी सपूग मूची म रिक्त चिह्न उगा दता है।

अङ्क ४ दृश्य ४ पृ १६४।

(१४) चन्द्रगुप्त — जागरण का अर्थ है कम क्षेत्र म अन्तर्ण टाना। और कम क्षेत्र क्या है ? जीवन सप्राप्त तितु भीषण मघप करव भी में कुछ नता हू। मरी सत्ता एव कठपुतला-सी है

अङ्क ४ दृश्य ५ पृ० १६८।

(१५) सिंहरण — ता नियति कुछ अदृष्ट का मृता कर रही है

वही प० १७१।

(१६) चाणक्य — नियति अब उहा दोना का एक वसरे के विपक्ष म लग्न खाव हुए खडा कर रही है ।

अङ्क ४ दृश्य ६, प० १७४ ।

(१७) चाणक्य — वह तो हाकर रहगा जिस मैंने स्थिर कर लिया है । वतमान भारत की नियति मरे हृदय पर जलद-पटल म विजली के समान नाच उठनी है

वही पृ० १७४ ।

(१८) सिंहरण — मनुष्य साधारण धर्मा पशु है विचारीन होन स मनुष्य होता है और नि स्वाथ कम करने से वही देवता भी हो सकता है ।

वही पृ० १८० ।

अलका -- मरा बुद्ध काय है उसकी माधना के लिए प्रवृत्ति प्रहृष्ट दव या शर, बुद्ध न बुद्ध अवलम्ब जुग ही देगा ।

वही पृ० १८० ।

(२०) चन्द्रगुप्त — अष्ट, खन न करना चन्द्रगुप्त मरण म भी अधिक भयानक का आलिंगन करन के लिए प्रस्तुत है

अङ्क ४ दृश्य ८ पृ० १६० ।

(२१) राक्षस — प्रहृष्ट दव प्रनिवृत्त है ।

अङ्क ४ दृश्य ११ पृ० २०१ ।

(२२) चाणक्य — अथ भागर निस्तरंग है और जान ज्ञानि निमल है । ता क्या मरा कम बुद्धानि चक्र अपना निर्मित भाग उतार कर धर गया

अङ्क ४ दृश्य १२ पृ० २०८ ।

समीक्षण —

नाटक प्रारम्भ हात हा हम निररग का सागरन न बाता-न म अस्त पात है । सागरन के यह पूछन पर नि मचनो के दून यहाँ क्या आए है सिंहरण दन की भायी परिस्थितिया के वार म गमिप हाकर कन्ता है नि आर्षावन का भविष्य निगन के लिए बुचत्रो का व्यूह रचा जा रहा है । सिंहरण के म्ग कथन स ध्वनिन होता है कि भविष्य पूर्व लिखित हाता है । यह यक्ति का ही नहीं देन भपवा जानि का भी हो सकता है ।

अलका से यह सुनकर कि मनुष्य को जीवन और गुण का भी ध्यान रखना चाहिए आभीक का उत्तर है कि उसे अतीत के गुणों की तनिक भी चिन्ता नहीं क्योंकि उसमें वर्तमान को अपने अनुकूल बनाने की क्षमता है। आभीक का यह पौष्टिक स्थानीय है। उसमें उसकी अत्यन्त इच्छा शक्ति पर सुन्दर प्रकाश पड़ता है।

मित्रन्दर एनिताजटीज में चाणक्य की भविष्यवाणी की चर्चा करते हुए कहता है भविष्यवाणियाँ प्रायः सत्य होती हैं। मित्रन्दर की भविष्य'क प्रति यह स्वीकृति उसे किसी सीमा तक नियतिवादी सिद्ध करनी है।

दूसरे अंक के प्रथम तासरे और पाँचवें दृश्य में चन्द्रगुप्त तथा पवनेश्वर प्रतिकूल न की चर्चा करते हैं। चन्द्रगुप्त कल्याणी का युद्धकाल में भारनिया के प्रतिकूल मेघ घटा के विरुद्ध जाने के सदभ में और पवनेश्वर अलका के सम्मुख अपनी गर्वाक्ति के सदभ में जर्मन देव का स्मरण करते हैं।

आज पवनेश्वर अपमानित होकर अपने अन्नद्वन्द्व की भाँति में जलता हुआ आत्महत्या से पूर्व अपना ही बड़ाई करते हुए कहता है कि वह पवनेश्वर जो भाग्य से हसी ठठा किया करता था आज एक स्त्री में अपमानित हो गया। अतः अब वह जीकर क्या करेगा ?

पवनेश्वर का मृत्यु के मुख से वचन के पश्चात् चाणक्य उस समझता है कि उस किसी काय को अमभव कर टालने से पूर्व कम क्षेत्र में नखडाना शास्त्र नहीं देता। चाणक्य द्वारा कम का यह सन्तान द्रष्टव्य है।

इसी अंक के दूसरे और नवें दृश्य में क्रमशः चन्द्रगुप्त और राक्षस द्वारा भविष्य तथा भविष्य में होने वाली अशुभ घटना का सांकेतिक प्रयोग हुआ है—जो कि साधारण अर्थों में है।

शकटार जब अशुभ रूप से बाहर निकल कर नन्द की सभा में जाता है तो नन्द आश्चर्य चकित हो उठता है। शकटार कहता है नियति सम्राटो से भी प्रबल है। यहाँ शुद्ध रूप से नियतिवादी यजना हुई है।

कल्याणी जब आत्मघात कर लेती है तो चन्द्रगुप्त के मुख से सहसा फूट पड़ता है यह क्या? कल्याणी का उत्तर है वही जो होना था—इससे ज्ञात होता है कि यह पूर्व निर्दिष्ट ही था।

एक स्थल पर चन्द्रगुप्त उद्विग्न है कि न जान कौन उसकी संपूर्ण सूची में रिक्तचिह्न लगा देता है। दूसरे स्थल पर कम क्षेत्र की महत्ता जानकर

भी वह स्वयं को एक बठपुतली की सजा देता है। यहाँ नायक परिस्थितियाँ के द्वन्द्व का गिवार है।

जहाँ सिंहरण के लिए नियति कुछ अदृष्ट संल वा सजन बन जाना है वही चाणक्य चन्द्रगुप्त और मिथुकस व लिए कहता है कि नियति उह एक दूमर का प्रतिद्वन्धी बना बठी है। यहाँ पर चाणक्य द्वारा उसकी प्रबल इच्छा शक्ति का चित्रण नाटककार न इन गथा में कराया है 'वह ता हाकर ही रहेगा जिस मैंने स्थिर कर लिया है।

सिंहरण कमवादिता का उद्घापन बनकर नि स्वाथ कम का प्रतिपादन करत ए कम द्वारा मनुष्य द वर्य प्राप्त कर सकता है—इम तथ्य का उद्घाटन करता है।

आग चलकर चौथ अन्न के तरहवें द न्य में चाणक्य न कम बुतान चक्र के रूपक द्वारा उहे ही सुदर ग। में कमवाद का प्रतिपादन लिया है जिनम स्पष्ट है कि प्रमाद जी कम-बुतान चक्र गारा ही निमित्त भाउ उतरवान का काय करवात है। कम का यह मानवीकृत रूप जहाँ आकषक है वहा प्राह्य भी।

निष्कष —

यद्यपि नाटक में अन्न पात्र द व 'अदृष्ट भाग्य और भविष्य भाति दाता का प्रयोग करत हैं किंतु नाटक की मूल आत्मा से कमवादिता का स्वर ही प्रस्फुटित होता है। वह तो हागा ही जिस मैंने स्थिर कर लिया वतमान भारत की नियति मर हृद्य पर जनदपन्न म त्रिभला व समान नाच उठती है। —चाणक्य का यह कथन नाटक म पूर्वनिदिष्टवादिता का मुत्तर मृष्टि करन म सफल है। यही नहा चाणक्य का सारा चरित्र नाट्य को पुरुषाय' की आर अग्रसर करता है। चन्द्रगुप्त सिंहरण, पबतकर राक्षस भाति मभी व चरित्रा पर इम पुरुषाय की छाया है। चन्द्रगुप्त का तो जीवन म 'एक हाण भी विद्याम नहीं युद्ध और बवल युद्ध। इच्छाशक्ति का वह इतना पका है कि अवनर आ जाने पर अन्न की पीठ से ही गिबिर का काम ल से। अवनर आत ही वह चाणक्य का नद का जन स भी छुडा लाता है। चन्द्रगुप्त जैसे कमवीर पात्र को रसकर प्रमाद न एग नाटक में पूरा तरह स कमवादिता का समावाग कर लिया है। यद्यपि एन-दो स्थानों पर वह कत्रिपय निरागाप्रद वाक्य भी बालता है पर यह उसके उग हृद्य पग की दूक है जो बल्याणी या मालविना के त्रिए दग्य है। चाणक्य का यह कथन भी कम की

महत्ता प्रतिपादित करता है चतुर्थ-भाग में निस्तरंग है और पाठ-ज्याति निमित्त है। तो क्या मेरा कम बुलान-चक्र अपना निमित्त भाग उतार कर घर चुका ?

और तो और नाटक के स्त्री पात्र कल्याणी, मालविका अलना आदि भी अपने अपने कम क्षेत्र में डटे ही रहते हैं।

अतः चतुर्थ नाटक मूलतः वनवाद का ही उद्घाटक है भव्यि अत्र तत्र नियतिपरक भाग के प्रयोग देखने को मिलते हैं। कहा कही पूर्वनिर्दिष्ट भाग की भी छाप स्पष्ट है।

— ० —

एकघूट

नियति—विषयक—सदम —

(१) आनन्द — मैं उन दानिका से माभे रखता हूँ जो कहते आए हैं कि समार दुःखमय है और दुःख के नाश का उपाय सोचना ही पुरुषार्थ है।

—वही पृ २०।

(२) आनन्द — यह जो दुःखवाद का पक्ष सब धर्मों में गाया है उसका क्या रहस्य है ?

—प ३४।

() भाङ्गनाथ — विज्ञान ने मर जावन का नए चक्र में जुनन का मरन किया।

वही प ३६।

(४) वनवता — मुझे तो यही सिखा देना है कि सब दुःखा है सब विकल हैं मरका एक एक घूट प्यास बनी है।

आनन्द — निन्दु मैं तेव का अस्तित्व हा नहा मानता।

—वही पृ ४०।

समीक्षण और निष्कर्ष —

प्रसाद का यह भिन्नान्वादी नाटक है जिसमें आनन्दवादी विचार धारा के दगन हाते हैं। प्रतीकात्मक भागी तथा आनन्दवादी पक्ष की पुष्टि की आर ही नाटककार का ध्यान रग रहने के कारण नियति विषय कोई तथ्य उद्घाटित नहा हो सका है। स्त्री और पुरुष नाटक में प्रमग हृदय और

मस्तिष्क पत्र के प्रतिनिधि हैं। अज्ञान का विश्व की कामना का मूल रहस्य बनाया गया है और दुःख के चिन्तन का पाप।

नियति विषयन किसी भावना की अभिव्यक्ति नाटक में न होकर कारण हम यही कहेंगे कि इस दृष्टि से यह नाट्य रचना गोरु है। वस प्रकारांतर से एक दास्यता पर कम की ध्वनि सुनाई पानी है। काहुवाल की विधाना पर आस्था है।

ध्रुवस्वामिनी

नियति विषयन सदम —

(१) ध्रुवस्वामिनी — मर भाग्य विधाना यह क्या इन्द्रजान ?

—बद्ध १ पृ० १२।

(२) सडगधारिणी — तब तो अदृष्ट ही कुमार के जीवन का सहायक हागा।

—वही पृ० १३।

(३) ध्रुवस्वामिनी — हाँ जीवन के लिए कृत उपकृत और आभारी होकर किसी के अभिमान पूरा आत्मविज्ञापन का भार ढाती रहें—यही क्या विधाता का निष्ठुर विधान है ? सृष्टकारा नहा ? जीवन नियति के कठिन प्रयोग पर चलगा ही ? तो क्या यह मरा जीवन भी अपना नहा है ?

—वही पृ० २८।

(४) ध्रुवस्वामिनी — नियति न अज्ञान भाव से माना तू से तपी हृद वसुधा का चिन्तन के निजन से सायकानान गानत आकाश में मित्त लिया हा। जिस वायु विहीन प्रयोग में उगडा हृद सौमी पर बधन हा—प्रगता हा वहाँ रहत रहते यह जीवन असह्य हा गया था। ता भी मरुगी नहीं। मसार के दुःख तिन विधाना के विधान में अपने लिए सुराजिन करा तूगी

—वही पृ० ३२।

(५) शक राज — गौभाग्य और दुभाग्य मनुष्य की दुःखता के नाम हैं। मैं तो दुःखाय का ही सारा नियामन समझता हूँ। दुःखाय ही गौभाग्य का साथी साता है।

—बद्ध २ पृ० ३६।

(६) शक राज — भाग्य ने भुवन के लिए जित परया कर लिया है, उन लागे के मन में अज्ञान का ध्यान और भी अधिन रहता है। यह अनवी दयनीय गता है।

—वही, पृ० ४०।

(७) ध्रुवस्वामिनी -- यह मरे भाग्य के आकाश में नूतनतुगा
पानी गति में करा।

—वही पृ० ४७।

(८) त्रिगुण -- विपत्तियों की मारही का लड़ विरुद्ध गिराए भाग्य विपत्तियों
पर कायिमा चढ़ा देता है। मैं आज यह स्वीकार करा म भी गुरुविं हा
रना है सिद्धय स्वी मरी है

—वही पृ० ५५।

(९) ध्रुवस्वामिनी -- भय दो इन लोह श्रुतनामा का यन्त्र मिथ्या
टाग को नहा रहगा। तुम्हारा बड़ दुर्दैव भी नहा।

—वही पृ० ५७।

समीक्षण --

नाटक के प्रारम्भ में ही जब विचित्र म बन्नी ध्रुवस्वामिनी खडगधारिणी
स्त्री से वार्तालाप करना चाहती है और वह शूनी होने का अभिनय करती है
ता ध्रुवस्वामिनी भाग्यविधाता को स्मरण कर अपने दुस्तिता का कासती है।
यहां भाग्य का सामान्य प्रयोग हुआ है।

स्त्री अर्क में आज चतुर आ मत्स्या करते समय जब सहसा च त्रिगुण
आरर ध्रुवस्वामिनी को रोक लेता है ता रामगुप्त की नत्सना के स्वर में
बहती है जीवन के लिए नर उपहृत और आभारा हाकर किसी के अभि
मानपूग आत्म विनापन का भार ढोती र? जीवन की विपत्त परिस्थितिया
के आशा जय दुख से बौखनाकर प्रान कर बठती है। जीवन नियति के
कठार आदगा पर चतगा ही? ता क्या यह मेरा जीवन भी अपना नहा है?
नायिका का यह अन्तःआत्मक विकल्प प्रभावापादक है।

चतुर्गुण के प्रति आहृष्ट हा जाता हमके लिए स्वभाविक ही था। इस
आवपण न उसकी जीवन दृष्टि को निरागा के गहन गह्वर में निकानकर
आगा के तार पर लकर लना कर लिया। उस नियति भी अब सुतप्र
प्रतीन हानी है। वह भी अन अज्ञात भाव से गम हुआगा द्वारा सतत वसुधरा
का विनिज के निजन और गगतन आका से मिनाती है। उसकी जावन
रामगुप्त के साहनय में रहन रहने असह्य बन गया था किंतु चतुर्गुप्त की
पावर वह आगाविन हाकर बहती है ता भी मरती नहीं। ससार के
मुद्य नि विधाता के विधात में अपने लिए सुरक्षित करा लूगी। यह उसकी
जावन आत्मगति का और स्वन प्रेरित निरिष्टवाद का ज्वलत उदाहरण है।

ध्रुवस्वामिनी की यही इच्छा गति और स्वतन्त्र निर्दिष्टवादी भावना अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाती है जब वह रामगुप्त के सम्मुख ही चन्द्रगुप्त से कहती है 'भटक दा इन लोह-रूखलाभा का यह मिथ्या त्याग बाइ नहा सहा। तुम्हारा मुद्ध दुर्व भा नहा। उसका यह उक्ति उसका चरित्र म आश्रयजनक परिवर्तन की स्मारिका है। वसत पूव वह निराशावादी अधिक थी किन्तु यहाँ उसका उन्मत्त साहस दशनाय है।

एक स्थल पर चन्द्रगुप्त पुरुषार्थी तथा धारदार हाकर भा भाग्य की भाग्यता को स्वीकार करता है। विधान की स्याही का एक बिन्दु गिरकर भाग्यनिधि पर कालिमा चला जाता है। इस कथन में भाग्य का अटल विधान की प्रति है। किन्तु नायक का यह कथन परिस्थिति उद्भूत है यह उसका स्वभाव नहा।

चन्द्रगुप्त और ध्रुवदेवी के अतिरिक्त राजराज नाटक का तीसरा प्रमुख पात्र है। यद्यपि वह घूमवतु का दखकर भयभीत हो उठा था फिर भी पुरुषार्थी भावनाओं का वह अटल प्रतिनिधि है। सौभाग्य और दुर्भाग्य मनुष्य की शक्तता का भय है। मैं तो पुरुषार्थ की ही सचका नियामक समझता हूँ। पुरुषार्थ ही सौभाग्य का सावनाता है।

निष्कर्ष —

अन्तिम नाट्य रचना हान का कारण प्रमाण की ध्रुवस्वामिनी भाग्यन मूल-वपुण है। ध्रुवस्वामिनी का चरित्र दा रमा में चित्रित हुआ है। पूर्वा वह निराशावादी, नियतिवादी और जीवन से निराशा है उत्तरार्ध में इसका विपरीत। उस आत्महत्या करने से चन्द्रगुप्त बचा जाता है। इन आकस्मिक संयोग में उसकी यह दृष्टि धारणा बनती है कि मनुष्य स्वयं भी अपने प्रारण का स्वामी नहा। मृत्यु का क्षण नियत हाना होगा सभी तो वह चाह कर ना मर नहा सकी। न्याय धारणा न सम्भवत ध्रुवस्वामिनी का पूव निर्णयानी निराहति था। यहा नहा चन्द्रगुप्त का अपने सत्य का न्य म दण्डर जीवन के प्रति उस आकषण हा जाता है और यह वह उठती है मरगी नही मगर का मुद्ध निर विधान का विधान में अपने लिए सुराजि कर लगी।

नाटक का पूर्णप में परिस्थितिया की दामी ध्रुवस्वामिनी का उत्तरार्ध भाग में वह गए य दा सिद्ध कर देने हैं कि प्रमाण मूलत कमवाणी हैं आशावादी हैं और मुम्मत इस नाटक में स्वतन्त्र प्रतिनिधित्ववाणी। ध्रुवस्वामिनी के

विषय में बाहरी जी लिखते हैं वह नियतियाँ ही हैं ता भी कम के प्रति उसकी उत्तजना हलचल और आकुंचना बनी रहती है ।^१

इस नाटक से यह सिद्ध भी होता है कि प्रसाद जी की नियति कल्पना व्यक्तिगत ही नहीं अपितु उसका विस्तार विषय परिधि या तब्रमा है । ध्रुवस्वामिनी के यह कथन पर कि क्या उसका अपना जीवन भी उमका नहा है—प्रसाद जी ने चन्द्रगुप्त के मुख से बटनवाया है कि जीवन नियति की संपत्ति है ।^१

ध्रुवस्वामिनी के अतिरिक्त शक राज और चन्द्रगुप्त नाटक के उत्प्रेक्षणीय पुरुषार्थवादी पात्र हैं । शक राज के लिए पुरुषार्थ ही सौभाग्य की वाचता है और चन्द्रगुप्त यद्यपि विधना की स्थायी में विवाह रसना हागा किन्तु वही धीरे धीरे और कमनिष्ठ पात्र के रूप में हमसे मिलता है ।

यहाँ नाटक के नाम पर विचार कर लेना भी आवश्यक है । ध्रुवस्वामिनी का अर्थ है वह स्त्री जिसका स्वामी निश्चित हो । किन्तु नाटक में हम उसे एक और रामगुप्त की पत्नी के रूप में देखते हैं तो दूसरी और चन्द्रगुप्त की स्नेहाकिता प्रेमिका रूप में । कहा जा सकता है कि विधि न ता उसे रामगुप्त जसा पति ही लिया—किन्तु उसने पुरुषार्थ और कमठता से अथवा सपति की त्यागकर अपनी स्वतंत्र इच्छा शक्ति का परिचय दत्त हुए चन्द्रगुप्त को वरग किया । यहाँ भी नाटक कमवादी सिद्ध होता है ।

डा० सहल के अनुसार जहाँ तब्रमा स्वामिनी नाटक का सम्बन्ध है इसमें यद्यपि पूर्वनिर्दिष्टवाद का स्वर है । किन्तु यह पूर्वनिर्दिष्टवाद न तो किसी पात्र को निर्णय बनाता है और न हतोत्साह ही । इस पूर्वनिर्दिष्टवाद से जीवन में एक प्रकार से नए रम का संचार होता है ।^२

(१) डॉ० हरदेव बाहरी प्रसाद—साहित्य—कोश पृ० २०३ ।

(२) डा० फट्टेयानाल सहल भूषाकन पृ० ४४ ।

समाहार

विद्युत्ने अन्धकार में अपने सामर्थ्यानुसार प्रसाद के नाटकों के पाठ्याधार पर उनकी नियति भावना को उद्घाटित करने का बान प्रयास किया है। अपने निष्कर्षों के ताने बान जोड़कर उनकी नाट्य नियति-नटी के स्वरूप का समग्र विम्ब उपस्थित करने से पूर्व यहाँ उन सभावित तथ्या पर विचार कर लेना आवश्यक समझता हूँ जो उनकी नियतिवादिना की पष्ठ भूमि हो सकते हैं।

प्रसाद का सम्पूर्ण जीवन और साहित्य घनीभूत पीडा तथा करुणा क्लिप्त हृदय की वह मूक और ममथवा रूपी 'भारी आत्म कथा' है जिसकी सावन को उबड़नर देखत पर नियति-सम्बन्धी कई तथ्य प्रकाश में आ सकते हैं। सत्रह वष की आयु से पूर्व ही प्रेरक पिता ममतामयी माता और मित्रवत् अग्रज को मृत्यु के कराल गाल का भ्रास होते हुए देखन वाला जीवन के उद्दाम वग में दो दो पत्निया की सत्ता सवत्ता के लिए खोकर घाट पर ही रह जान जाना आलिंगन में आते आते मुल्यमा कर भाग जान वाली किसा अनात प्रिया का मुख स्वप्न देखकर जाग जाग जाने जाना और अनीन क गभ में खोई न जाने कितनी स्मृतिमा का दुग्नि के अमू में बरसा बरसा जानवाला वह अतित्व कितना आहूँ और यथिन हागा—कौन जानता है। प्रसाद की जगह कोई और होना तो ममवन घबराकर जावन से पलायन कर लेता अथवा निद्रिप्रय होकर बठ रहना। किन्तु प्रसाद न ऐसा नहा किया। दु ग बार-बार उनका पास आए पर या तो वे उस चट्टान वही से टकराकर सौट गए अथवा उस सागर-समान व्यक्तित्व में सीपी बनकर नुक-छुप गए और प्रसाद से व अपने बनारसी रग में भूमते रह गाते रटे जीवन भर विष पी पी कर चागन के पृष्ठा पर अमृत उडनते रह। वस्तुतः विषयान ही तो जीवन की सामकता है और इस क्षण में प्रसाद निराले व्यक्तित्व के घनी थे। डॉ० नोड्ड ने असरग ठीक लिखा है कि वे हलाहल को पान कर गए और उसको पचाकर फिर भी विष ही बन रहे उनका कठ चाह नीला हो गया हा पग्नु मुग पर वही मानन् का पान्त प्रमाण बता रहा। प्रसाद का जीवन का आदग यही था वे गहरे जीवन

द्रष्टा थे। आधुनिक जीवन की विभीषितता का उद्धाने देता और सहा था, यह जहर उनके प्राणों में एक तीसरी जितागा बन कर समा गया था—उनकी आत्मा जिस आलोकित हो उठी हो।^१ और मुझ तक है कि सम्भव नहीं आलोकित आत्मा में उद्घटित नियतिवाद की ओर उद्युक्त किया। यह स्वाभाविक ही है कि जब चारा ओर स मातनाएँ पेर जाती हैं तो व्यक्ति भाग्य-मुख हो जाता है क्योंकि इससे बिसा माता तक उस मताप ही मिनता है। क्या आश्चर्य है यदि प्रसाद भी इसी तरह नियतिवादी बन जा—जीवन के वात्सायन और पारिवारिक विषयों से सतपाने के लिए। श्री मुमन जी के यहाँ मरी इस धारणा की पुष्टि भी कर रहे हैं। कौटुम्बिक एवं सामाजिक परिस्थितियाँ न उद्घार भाग्यवादी बना दिया था वह अपने का भाग्य की गति पर छाड़ देते थे। उनकी अनन्य सम्बन्ध में यह भाग्य के प्रति अप्रतिरोध की भावना ही अनन्त उनकी मृत्यु का कारण हुई।^२ प्राण चलकर भी नियतिवादिता ने उनके मस्तिष्क में धर कर लिया। छोटी छोटी बातों से लकर बड़ी-बड़ी समस्याओं का समाधान भी वे इसी आधार पर कर लेते थे। डा० सहजान इस विषय में थोड़े से आत्मा में चितना कुछ कह दिया है। रायचरणसिंह की पहली स्त्री का जब देहांत हुआ तो प्रसादजी ने कहा था नियति बन नहीं लन दनी। इसी प्रकार राय साहब बतना रहे थे कि जब उनके पुत्र उत्पन्न हुआ और वे धार्मिक कठिनायों से चिंतित रहने लगें तो प्रसादजी समाधान के स्वर में बोल उठे थे— आप इसके भविष्य की क्या चिन्ता करते हैं? यह उडका अपना भाग्य लेकर आया है।^३

ईश्वरोपामना में भी उनकी अनन्य आस्था थी। जीवन और मरण को वे ईश्वराधीन मानकर चलते थे। वह परिष्कृत सनातन धर्मों विचारों के थे। परम्परागत जो पूजा इत्यादि उनके घर में चली आती थी उसका उद्धाने बड़ी आस्था से निर्वाह किया यद्यपि वे स्वयं बठ कर पूजा पाठ नहीं करते थे। वे ईश्वरवादी थे और नियति में उनका गम्भीर विश्वास था। वह विश्वास करते थे कि नियति जिधर खींचता जा रहा है उधर से हटना असम्भव है। मरणासन्न होने पर भी वह किसी सैनिटोरियम में नहीं गए।

(१) डा नगेन्द्र आधुनिक हिंदी नाटक पृ० ७।

(२) रामनाथ मुमन कवि प्रसाद की काव्य साधना, पृ० २६८।

(३) डा० कहेयानाल सहल मूल्यांकन पृ० १८।

व कहते थे— 'सनिटोरियम नहा वचाएगा यन् इश्वर नहा वचा सक्ता ।'^१
इसी प्रकार जब राजयक्ष्मा के कारण लगातार उनका गंवार गिथिल पडन
लगा और श्री विनोदगंकर व्यास आदि उनके अनेक मित्रा न उर् स्थान
परिवर्तन की सलाह दी तो भी वे यही कहते रह जो होना होगा वह यही
हागा । एमी अत्रस्था म अत्र घर स बाहर जाने म और भी बट्ट होगा ।^२

उपरोक्त उद्धरणों के आधार पर अपने व्यक्तिगत जीवन म प्रमाण घोर
नियतिवादी सिद्ध होते हैं । उनकी यह नियतिवादिता मूलतः उनके जीवन
की विषम परिस्थितिया और वास्त्याचक्रा से उद्भूत है^३—जसा पहले कहा
जा चुका है ।

इस व्यक्तिक नियतिवादिता का एक और कारण हो सकता है । नाटका
म मीने सवत्र भाग्य प्रारंभ सौभाग्य, दुर्भाग्य आदि गद पात्रा द्वारा
साधारण बान चाल की भाषा म प्रचुर मात्रा म व्यवहृत होते देख हैं । इतने
अधिक पात्रा द्वारा बार बार सामान्य अर्थों म भाग्याणि गत् का प्रयोग देख
कर मरा अनुमान है कि यह सभवन प्रसाद का ज्ञानिगत् अचेतन है जिसे
जुह्न न रगनल कॉन्सियस कहा है ।

किन्तु आश्चर्य की बात है कि घोर नियतिवादी प्रसाद म अपन साहित्यिक
जीवन म जिस नियतिवाद का विवेचन किलेपण किया है प्रथम तो वह निरा
भाग्यवाद नहीं है और यदि है भी तो वह निराशावात् को जन्म नहा देता
अपितु सदैव कमनीसता की ओर उ मुख होन की महती प्रेरणा देता है ।
उनक हर नाटक म कमवात् की महत्ता किसी न किसी रूप म अवश्य प्रति
पात्रि हुई है । और तो और नियतिवाद की दृष्टि स सर्वोत्तम नाटक 'नागयन्'
म स्वय को प्रकृति का अनुकर और नियति का दास कहनेवाला जनमेजय
उनक से कम का गुण गान सुनकर पुरुषाय का उद्घाप करता है । 'अब एक

(१) कृष्ण देव, प्रसाद गौड 'प्रसाद का व्यक्तित्व' सप्तार साप्ताहिक
(प्रसाद अंक) १८^१ फरवरी १९८१ ।

(२) विनोद गंकर व्यास प्रसाद और उनका साहित्य पृ० ३८ ।

(३) उनकी नियति कल्पना बहुत कुछ व्यक्तिक है वह किसी कर्मागत
सिद्धांत की प्रतिरूप नहीं ।

—डॉ० मन्मथसारे वाजपेयी, जयगंकर प्रसाद पृ० १०८ ।

घार कम-समुद्र मे बूद पड गा चाहे जो बुद्ध हो । घातस्य भव मुझे भ्रमण्य नहीं बना सकेगा । उतक भी मुक्त कठ से बर्न की महत्ता प्रतिपात्ति करता है नियति का शीघ्र कट्टक नीचा ऊचा होना हुआ अपने स्थान पर पहुँच ही जाएगा । चिन्ता क्या है केवन कम करते रहना चाहिए । यही नहीं मनुष्य को प्रकृति का अनुचर और नियति का दास यतान स केवन एन क्षण पहले स्वयं जरतकार कहता है कमफल तो स्वयं समीप आते हैं । उनस भागकर कोई बच नहा सकता । और ता और प्रमात् के सभसे बडे नियतिवादी पात्र स्वयं वेद-पास भी न ता निष्कण्ट हाकर बठन हैं और न ही इस प्रकार का उपदेश ही दते हैं ।^१ अन अपने साहित्यिक जीवन मे प्रसात् नियति वादी होते हुए भी बडे से बडे कमवादी आगावादी और आस्वावादी नाटककार सिद्ध किए जा सकते हैं ।^२

स्वभावत नियतिवादी सिद्धात्तत कमवादी

प्रसाद के नाटका का अध्ययन करते समय मेरे मन मे एक बहुत बडा विकल्प उठ गडा हुआ कि अपने व्यक्तिगत जीवन मे इतना कट्टर भाग्यवादी हाकर भी यह महान कलाकार अपने साहित्यिक जीवन मे ऐसा क्या नहीं ? बहुत सोचन समझन के पश्चात् मैं इस निष्कण्ट पर पहुँचा हू कि जहाँ जीवन की विपरीत परिस्थितियो और घात प्रतिघाता न उसे स्वभावत भाग्यवादी बना दिया वहा के वेद-पास उपनिषद् पुराण रामायण महाभारत और गीता आदि के गहन अध्ययन ने सिद्धा न उसे कमवादी बना दिया होगा । उस दृष्टि से प्रसात् को मैं स्वभावत भाग्यवादी और सिद्धात्तत कमवादी नाटककार समझता हूँ क्योंकि साहित्य मे ता उहाने हृदय पर बुद्धि की विजय लिखलाई किन्तु अपने व्यक्तिगत परिवर्ण मे उनकी बुद्धि का बर-वार हृदय स हार खानी पडी मैं दावा तो नहा करता पर मुझ नगता है, यही सत्य है और प्रसाद जस अन्तमुखी कलाकार के लिए स्वभावत भी । ऐसा मान लेने पर मुझ भरे विकल्प का सुन्दर समाधान भी मिल जाता है ।

अम प्रालोक मे भव मैं अपने निष्कर्षों के सम्बन्ध सूत्र जोडकर प्रसाद के नाटका मे काननमानुसार नियति का स्वरूप निर्धारित कर सकन मे स्वयं को समय पा रहा हूँ —

(१) डा कहेपालान सहल मूल्याकन पृ० २७ ।

(२) प्रसाद का यह नियति सिद्धात्त साधारण भाग्यवाद या प्रारम्भवाद से भिन्न है ।

—आ० नन्दुतारे वाजपयी जयशकर प्रसाद पृ० १०७ ।

- (१) सज्जन प्रमुखतः कम एव पुरुषार्थ की ध्यजना किन्तु युधिष्ठिर दबवान्ते ।
- (२) प्रायश्चित्त कमवाद जयवन्त जता अथम पात्र भी कुबर्णों को घोने के लिए प्रायश्चित्त करता है ।
- (३) कल्याणतम पूरात ऋतवादी प्रभाव किन्तु कमवाद मानव कल्याणवाद और कल्याणवाद भी ।
- (४) राज्यथी प्रमुखतः दुःखवाद (ऋतवाद) कमवाद और पूर्वनिर्दिष्टवाद भी ।
- (५) विगास कमवाद का सुन्दर विवेचन प्रमानन्द निष्काम कमयागा, विगास भी उत्तरार्ध म कमवादा ।
- (६) भ्रजातंगु नियतिवादी तथा कमवादी पात्रा म दृढ, परिणति कमवाद म दुःखवाद से भी श्रोतप्रोन ।
- (७) जनमजय का नागयन 'नियति' की सवाधिक चर्चा । उसका विश्व निया मिका गति तथा चेतन सत्तापरक रूप । मानववाद कमवाद आति ।
- (८) कामना प्रतीकवादी नाटक । प्रकारान्तर से ऋतवादी की ध्वनि । कमवाद भी ।
- (९) स्वदगुत नियतिवाद और कमवाद का दृढ । कमवाद की पुष्टि । एक-आध स्थला पर समय (भाग्य) का श्रीक दानिका जसा प्रयाग भा ।
- (१०) चन्द्रगुत अधिकान्ता पात्रों द्वारा नियति भावना का प्रकटी करण किन्तु सभी पुरुषार्थवादी । पूर्वनिर्धारणवाद की ध्यजना ।
- (११) एकघूट प्रतीकार्थक नाटक । मानववाद का प्रमुखम्बर (विद्वककल्याणवाद) कम सम्बन्धी ध्यजना ।
- (१२) ध्रुवस्वामिनी पूर्वार्ध में नियतिवादिता । उत्तरार्ध म स्वत निर्दिष्टवाद । पुरुषार्थ एव कमवाद भी ।

उपरोक्त निष्कप विदुषों का सारसम्य स्थापित करने पर मर दृष्टि-पथ में प्रसाद के नाटकों की नियति सम्बन्धी भाठ मुलावृत्तियाँ (Facets) एकदम स्पष्ट होकर उभर आती हैं, जो तमबद्ध रूप में इस प्रकार रखी जा सकती हैं —

- (१) ऋतवाद
- (२) कमवाद
- (३) नियतिवाद
- (४) नियति और विश्व-व्याणवाद
- (५) नियति और नियामक
- (६) दववाद अथवा प्रारंभवाद
- (७) पूर्व निर्दिष्टवाद
- (८) उद्देश्यवाद

ऋतवाद —

ऋतवाद के विषय में तृतीय अध्याय में विस्तार पूर्वक बहुत-बहुत कहा जा चुका है (देखिए पृ. २३) ऋग्वेद में उस अखण्ड नियम पद्धति का ऋत' की सना दी गई है जो मूलतः नैतिक सिद्धांत पर आधारित है और काय कारण परम्परा द्वारा इस ब्राह्मण का संचालन कर रही है। विश्व में सब प्रयत्न उत्पन्न होने का ऋत ही है और यही विश्व की छाटी से छोटी वस्तुओं से लेकर बड़ी से बड़ी चीज का प्रकृतिस्थ रखना है। उसके अधिष्ठाता देव वरुण हैं जो समस्त प्राणियों के काय-व्यापार पर बड़ी दृष्टि रखते हैं तथा अर्घ्य को अर्घ्या और बुरे को बुरा पत्र दते हैं। ऋत अपरिहाय नियम-परम्परा है जो विश्व के अणु अणु में व्याप्त है।

प्रसाद जी ने जिस रूप में नियति की सत्ता को स्वीकार किया है वह ऋतवाद का एकदम समकक्ष है। यद्यपि यत्र तत्र नियति का प्रयोग प्रसाद ने भाग्य' के अर्थ में भी किया है पर इन स्थलों को छोड़कर अर्घ्य सभी स्थानों पर नियति अपरिहाय नियम परम्परा के ही अर्थ में प्रयुक्त हुई है। यह नियम पद्धति काय कारण परम्परा को लेकर काय करने वाली ऐसी अखण्ड व्यवस्था के रूप में प्रसाद द्वारा चित्रित हुई है जो सबत्र समरूप में स्थित है तथा छोटे से छोट तिनक से लेकर उदधि की उत्तम तरंग अर्न्त उल्का पिण्ड तक का नियंत्रण और नियमन करती है। प्रसाद जी ने अनेक स्थानों पर अपने पात्रों के मुख में अनेक अर्न्त नियम पद्धति का उद्घाटन कर दिया है। कामना में प्रसाद का यह ध्यान भरी इस बात की पुष्टि करता है नियम अर्न्त हैं। ऐसे नाटक में अर्न्त उल्का पिण्ड उनका क्रम से उदय और अस्त होना जिनके साथ नीरव निगाह पर विषय पर ज्योतिष्मती राधा और कृष्ण ऋतुभा का चक्र और निरन्तर गणव के बाद उद्गम

जीवन तद्रक्षाभ भरी हुई जरा—य सब क्या नियम नहीं है? 'करणालय' का तो समस्त घटना विधान ऋत के अधिपता देव चरण के प्रभाव से ओत प्रोत है। ऋत की अनभिज्ञता में इस नाटक की रूप रेखा भी पाठ के मानस पर स्पष्ट हानी लगभग अशुभ है। प्रसाद की नियति के सदम में आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी श्री जगन्नाथ प्रसाद गर्मा और डा० द्वारिका प्रसाद की ये पत्नियाँ प्रमत्त मरी उपरोक्त मायता की बहुत दूर तक पुष्टि करती हैं —

(क) प्रसादजी की दृष्टि में प्रकृति का नियमन और विश्व का मनुष्य बनने वाली शक्ति नियति है जो मानव अतिवादा की रोकथाम करती है और विश्व का सन्तुलित विकास करने में सहायक शक्ति है।^१

(ख) नियति को अपने सिद्धांत के अनुसार प्रसाद ने अतिव्यवस्था की नियंत्रण शक्ति कहा है। उसी अर्थ का प्रतिपादन उनके नाटका में भी होता है।^२

(ग) प्रसाद जी के नियतिवाद में नियति परमात्मा का एक ऐसा नियंत्रण शक्ति है जो समस्त विश्व का शासन अथवा नियंत्रण करती है।^३

अपने निष्कर्षों और उपरोक्त विज्ञानों के इन उद्धरणों के आधार पर मरी यह कहना पता चलती है कि प्रसाद जी की नियति भावना मूलतः अतिव्यवस्था से ही प्रभावित है। यद्यपि आचार्य चतुर्वर्ण्य ज्यो ज्यो प्रसाद के जीवन दण्ड का विकास होता गया तथा तथा उमम के अर्थ प्रभाव भी सम्भवित्व ही गए। प्रसाद जी की नियति मूलतः अतिवादी ही है—मरी उम मायता की पुष्टि श्रीमती महादेवी वर्मा ने भी की है —

(१) आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी (कामायनी का दार्शनिक निरूपण) जयपुर प्रसाद जीवन दण्ड कला और कृतित्व (सं० महावीर अधिकारी) पृ० ६२ ।

(२) डॉ० जगन्नाथ प्रसाद गर्मा प्रसाद के नाटकों का शास्त्रीय अध्ययन पृ० १६५ ।

(३) डा० द्वारिका प्रसाद कामायनी में काव्य संहति और दण्ड पृ० ४२० ।

पिछली बार जब इनहावाद में श्रीमती मन्दावी वर्मा में मिनता हुआ तो नियति पर चर्चा बन पड़ी। उद्दान कहा कि प्रसाद जी की नियति वास्तव में कृत का रूप है वह भाग्यवाद नहीं।^१

कमवाद —

द्वितीय अध्याय के अन्तगत में स्पष्ट कर चुका है कि दार्शनिक अतवाद ने ही आगे चलकर कमवाद का जन्म दिया (देखिए पृ० २५)। कम कृत वाद से प्रसादजी मूलतः नियति भावना में कमवाद का भी विषय विचन उपस्थित हुआ है। इसी अध्याय में पीछे लिए गए नाटका की शक्ति सूची से भी यह सिद्ध होना है कि उनके समस्त नाटका पर कम कमवाद की गहरी छाप है। कम कमवाद के वैज्ञानिक सिद्धान्त न ही उनके नियति भावना में भाग्य के उस रूप को प्रविष्ट नहीं होना लिया जिमकी कल्पना ग्रीक वासियों ने की है और जा काय कारण परम्परा में हीन होकर अन्धा चित्रित किया गया है। कमवाद की जितनी सुन्दर व्याख्या हमारे देश में है उननी कदाचिन् ही अन्ध किसी देश में हुई है। यह कम परम्परा जन्मा तरवात् को लेकर चलती है और प्रारंभ सचित तथा क्रियमाण कर्मों के द्वारा मनुष्या के शुभाशुभ कर्म प्राप्ति या समथन करती है।

कमवाद की यह दृष्टि मायता है कि मनुष्यों को अपने कर्मों के अनुसार पत्र मिनता है उस विषय में प्रायः सभी देशों एकमत है। किन्तु कभी कभी जब हम सचनों को कष्ट उठाते हुए तथा दुःखों का सुखी खत हैं तो इन विषयों के कारण कम विषयक कारण काय सिद्धांत की मायता में कुछ क्षण के लिए हम मन्देह होना लगता है। किन्तु गणराज्याय ने विषयनधर्मे न सापक्षत्वान् न्यायि दणयति मूत्र के भाष्य में कहा है कि इन्हीं किसी की अपक्षा करके मृष्टि रचना में प्रवृत्त नहीं होता। वह जीव के सचित तथा अदृष्ट कर्मों का न्याय में रखकर ही विषय की मृष्टि करता है—जीवन के कम ही प्रवृत्त कारण है—इन्हीं तो निमित्त मात्र है। इस प्रकार कमवाद हमारे देशों का वैज्ञानिक सिद्धांत है—भाग्यवाद हमारे देश का देश नहीं।

योगवासिष्ठकार की उपरोक्त उक्ति जहाँ कमवाद की सुन्दर व्याख्या प्रस्तुत करती है वहाँ इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि कमवाद का भाग्यवाद से किसी प्रकार का भी सम्बन्ध करना भयकर अन्ध होगा। अति विनम्रता

पूवक कौथ महोदय के इस कथन को मैं भ्रामक की सना दना चाहूंगा कि कम भावना मूलतः भाग्यवादी है और भाग्यवाद नतिक उन्नति के लिए सामान्य जन के हतु प्रेरक शक्ति का काम नहीं करता।¹ क्योंकि हमारे यहाँ का कमवाद कर्मानिक है और जन्म ज मातर कम फला को लेकर अप्रसर होता है। अतः उसे किसी प्रकार से भी उम भाग्यवाद की सना नहीं दी जा सकती जो अंधा और भ्रूर विधित किया गया है।

पहले कह चुका हूँ कि सज्जन से लेकर ध्रुवस्वामिनी तक प्रसाद के सभी नाटक कमवाद से श्रोतप्रोत हैं। सज्जन में यह कमवाद अपनी साधारण सी ध्वनि देकर ही रह जाता है। प्रायश्चित्त में यह सज्जन की अपक्षा कुछ अधिक स्पष्ट हानर पहले आकाशवाणी से और फिर जयचन्द के द्वारा हमारे सम्मुख उपस्थित होता है। पहले अपने लगाए हुए विष बृक्ष के फल का चस तथा मीने प्रायश्चित्त करने की प्रतिज्ञा की है। कल्याण म बरुण के स्तुतिगान द्वारा कमवाद का प्रभाव अत्यन्त स्पष्ट है। रोहितन्द्र से यहाँ बरदान मागना है कि वह स्व कमपथ में न कभी यह भीत हा। रज्वशी में भी नायिका का पुण्याथ कमवाद का ज्वलन्त उदाहरण प्रस्तुत करना है। सुरमा का चरित्र भी कमवादी है। सिगात में नाटक और नरदत्त दोनों ही पक्ष नियति का गुणगान करते हैं पर प्रमाण से सर्वत्र कमवाग का आदान पाकर दोनों ही कमवादी बन जाते हैं। प्रमानन्द प्रमाद का कमवादी पात्र म चिरस्मरणीय है। अनातनत्र में तीन कमपथ का प्राण-पण म प्रगस्त करन में लगा हुआ है। वह नियति की डोरी पकड़ने की कम कथ म छलांग लगाने की तत्पर है। नागयज्ञ में यद्यपि नाटक नर आद्यान नियति नटी का प्रकाय छाया हवा है पर वृष्ण अजुन को सत्पे देते हैं पुण्याथ करा जन्ता हवाया। उत्क का सम्पूर्ण चरित्र नाटक पर कम की मुन्दर चित्रकारी कर देता है। उमके तर्कों में इतना बल है कि नियतिवादी जनमजय भी कमपथ पर अप्रसर होकर ब्रह्महत्या का पाप मिटाने के निण यथानुशन करता है। जरतराह का कथन है कि कम-फल किसी का पीछा नहीं छाडना। नेपथ्य गीन

(1) The conception of Karma is essentially fatalistic and fatalism is not for a normal mind a good incentive to moral progress

-A B Keith The Religion & Philosophy of the Veda and the Upanishads p 506

से भी कम कर्म चेतनता है। का उद्घोष मुनाई पड़ता है। कामना का रिहास भी पुरपार्थी है। स्वदगुप्त में अनन्तरेवी अपनी नियति का पथ स्वयं चलने को उद्यत है। अपने को विन्व नियामक के हाथ का गिनीना समझने वाला स्कंद भी अंत तक कम पथ पर अडिग रूप से डटा रहता है। चक्रपातित भी दंग रक्षाय स्वयं के साथ उसके धार्यों में हर क्षण महयोग देकर अपनी पुरुपाथ प्रियता का प्रमाण देना है। अंगक और मानुस तो पूणत कमवाणी है। चद्रगुप्त में एसा कोर् भी पात्र नग जो पुरुपार्थी की सना पान का अधिकारी न हा। चाणक्य पौरव राजकुमार को कमनेत्र में काप कर न नडलाने के लिए सावधान करता है। चद्रगुप्त के लिए जागरण का गी अग्र्य क्षेत्र में अवतरित होना है। पत्रत कर भाग्य से हसी टग भी कर नेता है और आम्भीक तथा मित्रग का जीवन तो तनवार की धार पर धीनता ही है। चाणक्य सभवन प्रसाद का सबसे गतिवान पात्र है जो भयकर स भयकर परिस्थितियो में भी विचलित होन का या नप्रियता का भाव भी हृदय में नहा जाशुन हान देना। चद्रगुप्त का समय प्रभात इसीलिए पुरुपाथ और कम की महता की छाप पाठका पर छाड जाता है। एकघट में मुख्यत प्रतीक-योजना की ओर प्रसादजी उ मुख रह हैं। इसीलिए दंगन पक्ष पुत्र गिविन ना हो गया है फिर भी कहा वही कम की ध्वनि दखी जा सकती है। धवस्वामिनी जा कि प्रसाद की अतिम नाट्य-कृति है—में भी प्रसाद द्वारा पुरुपाथ और स्वत निर्दिष्टवाद की पुष्टि हुई है। पूर्वाध में नायिका ने परिस्थितिया के प्रति अपने को पूणत समर्पित कर रखा है पर उत्तराध में वह अपनी अन्त्य इच्छा गति का स्मरणीय उदाहरण प्रस्तुत करती है। मदाविनी का गीत (पृ ३३) भी उसी पुरुपाथवालिता और मुठड कम-निश का उद्घोषक है। गवराज ता पुरुपाथ को ही सबका नियमक समझा है।

अत प्रसाद का कोई नाटक भी एसा नहीं जिसमें कमवाद की प्ररणा ग्रहण न की जा सकती हा। वस्तुन कमवालिता प्रसाद के साहित्य की आधार िता की जा सकती हैं। आचाय वाजपेयी जा रिखते हैं, प्रसादजी कम माग के विरोधी नहा थ। वे मननगाल अभय कम का सदेग देत हैं।^१

(१) आ० नददुलारे वाजपेयी (कामायनी का दार्शनिक निरूपण) जय गकर प्रसाद जीवन दंगन कला और कृतिर (स महावीर अधिकारी) पृ० ६१।

नियतिवाद —

प्रसाद का नियतिवाद 'यापक' क-वास पर चित्रित हुआ है। उनकी नियति भावना की प्रथम मुखाकृति ऋतवाद के विध्वनन में मैं केवल उसके एक ही स्वरूप—अर्थात् काम-कारण परम्परा ज-य' नियम बद्धता को ही विवक्ष्य विषय माना है। किन्तु मुझ उसके दो अ-य रूप भी दृष्टिगोचर हात हैं। इस प्रकार उनकी 'नियति नटी' को तीन परिवर्तन में प्रमाण प्रकाश रचना चाहूँगा —

- (१) 'नियम के अर्थ में नियति ।
- (२) चेतन सत्ता के रूप में नियति ।
- (३) भाग्य के अर्थ में नियति ।

प्रथम त्रि-दु का विवेचन पीछे हा चुका है अत यहाँ केवल दूसरे और तीसरे वि-दु पर ही विचार करना सगत होगा। अतक स्थला पर 'नियम' अदृष्ट और नियति का को मानवीकृत रूप दकर प्रसाद न उस विश्व का नियामक विमी चेतन सत्ता का वि-व का कणुधार माना है। विलाम के अ-य में ई-वर है और वह सबक कम देखता है। गति-त्व यह दखन को उत्सुक है कि भाग्य उस किस ओर खींचता है। अदृष्ट कहे तो भी सुरमा उसकी बात मानने का तयार नहीं। सुरमा इस अद-प्र का य-त्र है और वह य-त्र उमसे कोई काम कराना चाहता है। स्वदगुप्त भी किसी बटपत्र-गायी बालक के हाथा का खिलौना है। विजय के अ-य में अदृष्ट न ही उस रथित रत्नशृह को बचाया है — उन समस्त वाक्यांगी से अ-ष्ट भाग्य अ-ति का मानवीकृत रूप (कना क रूप में) हमारे सम्मुख आता है। अत पात होता है कि प्रसाद की नियतिभावना में चेतन-सत्ता का भी अस्तित्व है। आचार्य नन्ददुलारे जी भी उस कथन की सत्यता को स्वीकार करते हैं 'नियति को प्रसाद जी सचेतन प्रकृति का वाय कलाप मानते हैं। सचेतन प्रकृति नियति के रूप में ही सक्रिय हाती है।'

भाग्य के अर्थ में भी नियति का प्रयोग प्रसाद न किया है। कामना क-दो है य-य नियम हैं तो मैं क-ह सकती ह कि य नियम न हाकर नियति बन जाते हैं। असफलता की ग-तानि उ-पन्न करते हैं। कामना द्वारा यहाँ नियति का भाग्य के अर्थ में प्रयोग द्रष्टव्य है। किन्तु एस स्थल नाटकी में कम हा आए हैं।

(१) आ० नन्ददुलारे वाजपयी जय-कर प्रसाद पृ० १०७ ।

नियति और विश्वकल्याणवाद —

प्रसाद की नियति का विश्वकल्याणमय रूप उस और अज्ञान महत्त्व का विषय बना देता है। प्रसाद जी की यह दृष्टि मान्यता रही कि विश्व के ये सारे कायकलाप विश्वकल्याण ही हो रहे हैं। प्रसाद की अनुभव-भाषा सृष्टि के उत्थाहरण नागयज्ञ के वेदयास कहते हैं विश्वात्मा सत्र का कल्याण करता है। नियति के पीछे भी वे अज्ञान भर के हित का रहस्य मानते हैं।^१ करुणालय के विश्वामित्र भी कहते हैं। वह प्रजागमय देव न देना दुःख है।^२ इस प्रकार प्रसाद की नियति भावना सृजात्मक है और उमंग विवहिन का रूप निहित है। उनका विश्वास था कि विश्व नियामिका शक्ति किसी का भी कष्ट नही देती। वस्तुतः यह ठीक भी है। कई बार मनुष्य अपने व्यक्तिगत जीवन के उत्थाहण से घबराकर ईश्वर का श्रुत अथवा निदया साधन लगता है। यह सबथा एकान्ती विचार धारा ही कही जाएगी। विश्व नियामिका शक्ति यदि तुरन्त निदयी अथवा ध्वसात्मक रूप धारण कर लगी तो मनुष्य जीवन में रह ही क्या जाएगा। प्रमथिक् में प्रसाद स्वयं लिखते हैं

दुःख दखकर अपना हा।

मन समझो सत्र दुःखी जगत का मन नाँदन दा ईश्वर का।

गिब समष्टि का जना कल्याण उसकी पूरी होती है।

नियति' और नियामक —

किस स्थानों पर प्रसाद ने नियम और नियामक में पाथक्य स्थापित किया है। वास्तविकी का कथन है अपवाद नियम पर है या नियामक पर जिससे सिद्ध है कि नियम और नियामक दो वस्तुएँ हैं। नियम विश्व का संचालन करने वाली कायकारण परम्परा है और कोई हमने भी इनतर सत्ता है जो हमका संचालन करती है। प्रसाद विश्व के पीछे चेतन सत्ता का माननेवाले कलाकार थे अतः इस सत्ता रूप में उन्होंने ईश्वर को ही स्वीकार किया। एकदगत्त के मुह से वे कहलवाते हैं मैं बुद्ध नही हूँ—परमात्मा का अमोघ अस्त्र हूँ। इस प्रकार सिद्ध है कि प्रसाद कायकारण परम्परा मुक्त इस नियम पद्धति के नियामक रूप में ईश्वर की सत्ता पर आस्था रखते थे।

(१) तुलनाय —

There is no error in the Eternal Plan All things are working for the final good of man

दववाद अथवा प्रारव्यवाद —

मुख्य प्रमाण काय-नारण-परम्परा का लेकर प्रवृत्त होने वाली नियम पद्धति के पुजारी नियतवाणी थे। किन्तु नाटका का अध्ययन करते समय कुछ स्थल हम भी आए जहाँ मुझे उनकी नियति का स्वरूप दववाणी अथवा भाग्यवाणी ना लगा। स्वर्गगत भ धातुमन का यह कथन ऐसा ही एक स्थल है— समय पुण्य स्त्री की गैर नकर जाना हाथा से खलना है य पत्तियाँ पन्न ही मर सम्मुख थीक धामिया क उम 'भाग्य का चित्र आ उपस्थित हाता है जिमम मानव का स्वतंत्र इच्छा गति का कोई अस्तित्व नहीं रह जाता। जिम प्रकार एक कुत्त काजीमर ना गैर नकर उह अपनी इच्छानुसार हाथा से नचाना है कम ही यति समय स्त्री भाग्य स्त्री पुण्य की गैर नकर कदुक प्राण करता है तो फिर इनसे बचकर और क्या भाग्यवालिता होगी ? प्रमाद जी का उमरखयाम लिखित एक गणा ही रखाई बहए पमए थी—यह जानकर मरी यह धारणा और भी पुष्ट हा गइ कि प्रसाए की नियति भावना का एक स्वरूप भाग्यवाणी भी है। यहाँ निश्चय ही उनक माहित्य म उनका व्यक्ति पण उभर आया है।

स्वर्गगत भी एक स्थल पर स्वयं को अल्प-भक्ता के हाथा म विनोना कहकर मवाधित करता है। माना उमगी स्वयं की काइ सत्ता ही न हा। यद्यपि शब्द की यह उक्ति शक्ति भावावग का ही द्योतन करता है तथापि हम प्रकार का उत्तिया क पीछे प्रमाद क चरितगत जीवन की भाग्याधितता का भवन तो हम मिल ही जाती है।

अन्य स्थल पर कमवीर पात्रा के मुग से नसी प्रकार की उत्तियाँ सुनते मते मैं द्रम निरूप पर पहुँचा कि प्रमाए की अन्नरात्मा म भाग्य और पुण्याय का अन्द्र असाध गति से हाता रहा हाता—जिसे उहोंने समय-समय पर असा पात्रा म इनस्तन गिरर दिया। योगवाग्निष्टमार न भाग्य और पुण्याय का इन्द्र इन गणा म व्यक्त दिया है —

(१) तुत्तनीय —

As flies to wanton boys are we to the gods They kill us for their sport

Shakespeare King Lear, Act 4 I

दो दृष्टाविय युध्येते पुदपायो समाप्तमौ ।
 प्राक्नत चहिवचव गाम्यतत्राल्पवीयवान् १

अथान् पूर्वजन्म का पुण्याथ (भाग्य) और इस जन्म का पुण्याथ कभी समगति और कभी कभी अमम गति होकर दो मन्त्र की तरह परस्पर युद्ध करते हैं। उनम से जो अल्प गतिवाला हाना है वह हार खा जाता है।

और मुझ अनभूति होती है कि प्रसाद के मन म चल रह अनन्त म 'भाग्य' रूपी उस मन्त्र को मात खानी पडी जा उनक कम रूपी मन्त्र क सम्मुख आया। तभी तो उनक ही नाटक म अतनायत्वा नियतिवादी पात्र पुण्याथवादी और कमवादी बन जाते हैं। विनायक वा नायक और ध्रुवस्वामिनी की नायिका एक सुन्दरतम उदाहरण हैं।

अत नाटका म यत्र तत्र भाग्यवाद की श्रणी म आने वाल मन्त्रों के होते हुए भी हम प्रसाद के नाटका म न तो उन्हें भाग्यवादी कह सकते हैं और न ही उनक नाटका को। प्रस्तुत्यति यह है कि प्रसाद क नाटका म सामान्यत नियति उस भाग्य का पर्याय नहीं है जिसे ग्रीक लोग ने अथा और क्रूर चित्रित किया है। प्रसाद ने इन जीवन को कम रमस्यत्र कहा है। एपिक्त्स की तरह उन्होंने मनष्य का विश्व रगमच पर सवधा भाग्यात्रित पात्र कहकर चित्रित नहा किया है। एम सम्बध म मैं एपिक्त्स की निम्नलिखित पक्तियाँ यहाँ उद्धृत करना आवश्यक समझना है —

Remember you are an actor in a drama of such a kind as the author God pleases to make it. If short of a short one if long of a long one. If it be His pleasure that you should be a poor man a cripple a governor, or a private person see that you act it naturally. For this is your business—to act well the part assigned to you to choose it is another's business.

—Epictetus

—याद रखो कि तुम उस नाटक म एक ऐसे अभिनेता हो जसा ईश्वर तुम्ह अभिनेता के रूप म रखना चाहते हैं। अगर वह तुम्ह निधन पशु गवनर या सामान्य व्यक्ति रखना चाह तो भी तुम स्वभाविक रूप से अपना अभिनय

करो क्योंकि जो अश अभिनय के लिए तुम्हें दिया गया है उसे तुम पूरा करो कौन सा अभिनय तुम्हें मिलेगा, इसके चुनाव का अधिकार तुम्हारा नहीं।

—एपिक्टस

एपिक्टस की उक्त उक्ति यह दर्शाती है कि मनुष्य ईश्वर के हाथों की कठपुतली है और इस विश्व रंगमंच पर उसका कोई भी अस्तित्व नहीं है। यह अंधा भाग्यवाद है जिसका भारतीय जन जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं। हमारे यहाँ प्रारंभ कर्मों को ही भाग्य की सत्ता दी गई है कम सिद्धांत का यही भूतमंत्र है। यही प्रारंभवाद प्रमाद के नाटकों में इतस्तत बिखरा हुआ पड़ा है इस निराशाजन्य भाग्यवाद समझना गलत होगा। इस दृष्टि से प्रसाद निराले नियतिवादी हैं उनके अपन निश्चित सिद्धांत हैं और उनकी अपनी मौलिक दन भी। पश्चिम का कोई नियतिवाद कलाकार गायद ही इनकी तुलना में आ सके। क्योंकि पश्चिम में कम्युक्त 'प्रारंभवाद' कभी रहा ही नहा और यही कमवाद प्रमाद की नियति भावना का मेरुदंड है। पाश्चात्य नियतिवादियों में हार्डी का उल्लेख प्रमुख रूप से किया जाता है किन्तु हार्डी और प्रमाद की तुलना करने पर दानों में कोई भी साम्य कदाचित ही देख पड़ेगा 'किन्तु प्रसाद जी का नियतिवाद विरय्यात उपयासकार टामस हार्डी के नियतिवाद से सवथा भिन्न है। हार्डी का नियतिवाद मानव को सिर धुनने के लिए छाड देता है जबकि प्रमाद का कम में जुग दता है। प्रथम निवृत्ति माग का द्वार बंद कर रता है दूसरा प्रवृत्ति माग का मदान बृहार दता है।'

पश्चिम में निराशाजन्य भाग्यवाद कयो उद्भूत हुआ और हमारे यहाँ कम पधान तथा आशाजन्य नियति भावना क्या प्रचार प्रसार पा गई इसकी बडी ही सु दूर और ऐतिहासिक विवेचना स्वयं प्रसाद जी ने प्रस्तुत की है —

वर्तमान युग बुद्धिवादी है आपातत उसे दुःख को प्रत्यक्ष सत्य मान सना पडा है उसके लिए सपथ करना अनिवाय-सा है। किन्तु इसमें एक बात और भी है। पश्चिम को उपनिवेश बनाने वाले आर्यों ने देखा कि प्रत्येक व्यक्ति के लिए मानवीय भावनाएँ विगेष परिस्थिति उत्पन्न कर देती है। उन परिस्थितियों से व्यक्ति अपना सामजस्य नहीं कर पाता। कदाचिन् दुःगम भूभागों में उपनिवेशों की खोज में उन लोगों ने अपने को विपरीत दशा में

(१) प्रो० राम रामपाल द्विवेदी प्रसाद एव पन्त का तुलनात्मक विवेचन पृ० २७७।

ही भाग्य से जड़ते हुए पाया। उस लोगो में जीवों की दृग् कर्त्रिणा पर ध्यान देने के कारण इस जीवन को (दृजही) समय ही समझा। और यह उन की मनुष्यता की पुकार थी। आजीव्या सदा के लिए। और और रामन लोगो को बुद्धिवाद भाग्य से और उसके द्वारा उत्पन्न हुए मनुष्यता के मर्त्य करने के लिए अधिक प्रसर कर रहा। उह मनुष्यता के लिए मर्त्य होने पर भी यत्तिरव के पुष्पाय के निवास के लिए मुक्त प्रवर्ग दता रहा। इसी लिए उनका बुद्धिवाद उन्ही दुग् भावना के द्वारा अनुप्राणित रहा। इसी को साहित्य में उन लोगो ने प्रघातना दता। यह भाग्य या नियति की विजय थी।

परन्तु अपने घर में सुखवर्धित रहनेवाले आर्थों के लिए यह भावना न था। यद्यपि उनके एक दिन के सप्ताह में समय बच बुद्धिवाद और दुख मिद्वान्त का प्रचार किया जा विमुक्त दानिष हा रहा। साहित्य में उस स्वीकार नहीं किया गया। हाँ यह एक प्रकार का विनाह ही माना गया। भारतीय आर्थों को निराशा न थी। कारण उस था उसमें दया महानुभूति की कल्पना से अधिक थी रसानुभूति। उहान प्रत्येक भावना में प्रभु निर्विकार प्रानद लेने में अधिक रुच माना। १

प्रसाद जी की ये पत्तियाँ जहाँ प्रायः और पाश्चात्य नियति भावना की पृष्ठभूमि का स्पष्ट दिग्दर्शन कराती हैं वही यह भी सिद्ध कर देती हैं कि इन पत्तियों को लिखने वाला महान बलावार कभी भी उस अथ भाग्य को नाटका में चित्रित नहा करेगा जो निराशा और दुःखमय जीवन का रोना घोना सुनाती है। अतः प्रसाद जी की नियति भावना भाग्यवादी परिवेग में नहा देखी जानी चाहिए। प्रसाद जी की नियति के मन्त्र में डा० सहल का यह कथन प्रसरण सत्य है वह विश्व की प्रचण्ड नियामिका शक्ति है और ऐसी नतकी (नट) है जिसका विराट रूप योगवासिष्ठकार ने हम शिखाया। इस प्रकार का नियतिवाद न भाग्यवाद अथवा दववाद है और न किसी प्रकार के प्रनायन का प्रकार ही। २

(१) जयगकर प्रसाद काव्य और कला तथा अन्य विषय (स० आ० नन्दुलारे वाजपेयी) पृ ८३-८४

(२) डा० कट्टेयालाल सहल कामायनी वज्ञान (नियतिवाद और कामायनी) पृ १३१।

पूर्वनिर्दिष्टवाद

नाटका में एम अनक स्थल आए हैं जहाँ पहल से किसा निर्वाचत घटना की अपरिहायता का साध होता है। 'राज्यश्री' की नायिका जब दुखवादी स्वरा में ग्राह भरती है ग्राह जिनना सासैं चलती हूब तो चलकर हास्कगी ता ऐसा भान होता है मानो किसी निष्पूर गणितन ने पहल ही गणना करक उसक जीवन पर साँसा का बडा पहग लगा लिया हो—एसा प्रतिबन्ध लगा लिया हो जिनम एक निश्चित श्वाभ तक न न तो उस मरन का ही अधिधार लिया हो और न ही उसके बाद क्षण भर जीन का ही। नागयन क जीवक को भी हट विश्वाभ है कि जो होना हागा वह तो हागा ही—तो यह सिद्ध करता है कि भविष्य की घटनाएँ पूव निर्धारित और अनुलघनीय होनी हैं। इसी नाटक के प्रमुख पात्र धन्यास भी कातदर्शी ह और भविष्य क आवरण का चीरकर वे मर कुछ जान मरने म समर हैं जो जाने वाला है। तभी ता वे जनमेजय स कहन हैं मम्राट तुमने नुभसे एक दिन पूछा था कि क्या भविष्य है। दत्ता नियति का चक्र मैं न कटा था कि यन म विघ्न होगा। और अस्तुन विघ्न हुआ भी। चन्द्रगुप्त का चाणक्य इस पूवनिर्धारणा का सत्ता प्रतिनिधित्वकर्ता है। इसम इतना बन है कि घटनाया की अनिवायता भग करक बन सक वन ता हाकर रहगा जिस मने स्थिर कर लिया है। ध्रुवस्वामिनी में भी इसी स्वतन्त्र निष्पटवाता क दान हात हैं। प्रारम्भ में वह अपने आपका परिस्थितिया क सम्मुख समर्पित कर रती है किन्तु बाद म उसका आत्मयन ममार क कुछ दिन विधाता क विधान म अपन लिए सुरमित बनन का उद्घाप करता है। यही नहीं स्वसना और सन्तुष्ट का परस्पर प्रेम रखन ए भी मत्ता मत्ता क लिए विद्युत् जाता अस्वामिनी क दाकरात का एसी स्थिति म नैम जाना कि वह कामा को न ता रोक ही मके और ता दिहा ही कर मर कवाणा का आत्मधान करना और मानविका की निमम हत्या का घटित जाना भा माना पूवनिर्दिष्ट हा था।

उपरोक्त तथ्या क प्रकाश म प्रमात् की नियत क पूर्वनिर्दिष्टता की रूप रेखाएँ धन्यास भीमा तक स्पष्ट हो जाना हैं।

उद्देश्यवाद

य एम नियत का मत्ता को स्थाकार कर यह मान लन है कि यह नियत निर्दिष्ट नियमांश मन्धानित है ता गहन ही यन प्रश्न उठ बिना नहीं

को स्वीकार करते हैं तथा उनकी यह भी मायता है कि इस विश्व के पीछे निश्चय ही कोई उद्देश्य सन्निहित है जसा कि स्वतन्त्र का कथन है 'परन्तु इस ससार का कोई उद्देश्य है। इस पृथ्वी को स्वयं हाना है, इसी पर देवनाग्रा का विकास होगा विश्व नियता का ऐसा ही उद्देश्य मुझे विन्तित होता है। फिर उनकी दृष्टि करो न पूरा कर विजया, मैं कुछ नहा हूँ, उमका अन्न हूँ-परमात्मा का अमोघ अन्न हूँ

प्रसाद नाग्य नियति नटी मन्वदित उपरान्त आठा मुखाकृनिया की एक-साय बरपना करने पर पाठकगण उनकी 'नियति का ममग्र विम्व ग्रहण कर सकत हैं।

अतत प्रसाद की नियति नटी को मैं उस मधुमखी स उपमित करना चाहता हूँ जो प्राकृतिक नियमा म आवद्ध हाकर दिन म ही वा र निकतती है फूना का ही रस चूसती है जिमन ऋतवान् कमवान् विन्व बरयाणवान् दुषवान् पूवनिष्पृवाद उद्देश्यवाद आदि सुवामित पुष्पों का मार-तरव अपन मधुवाप म इकट्ठा कर लिया है जो चेतन भी है और चचल भी तथा यदा क्वा मन-पडने पर बल्याणी या मालविका का दगन भी कर लेती है किन्तु फिर भी वह शुभावनी है क्वाकि मधु रस रूप म हम बल्याणकारी फल देती है तथा अपन धमजीवी स्वभाव से पुरपाथ और कम का अनत मदेग भी।

उपलब्धि

अपनी मायताओं के रूप म प्रसाद का नियतिवादिता के सन्भ म कुछ तथ्या का स्पष्टीकरण पुन करना चाूगा।

- (१) प्रसाद म अक्षिकागत नियति का निर्माणात्मक तथा आशावादी स्वरूप प्रतिपात्ति हूभा है। विश्व का उद्देश्यमूनक ऋत अथवा नियम नाग प्रचालित माननवाले दानिको मे प्रसाद का प्रमुख स्थान है जिस व नियमा की नियामिका दार्त क रूप म चेतन सत्ता का वाना पहनाकर चित्रित करत हैं।
- (२) प्रसाद स्वभावत नियतिवाणी रहे हैं और उन्होंने इम स्वभाव का आरोप उन ऐतिहासिक पात्रा पर भी कर लिया है जिह इतिहास नियतिवादी पात्र क रूप म चित्रित नही करना।
- (३) मैं प्रसाद की नियति की मूल भात्मा ऋतागूत कमवाद की मानता हूँ जिगन अक्षिकाग का नाटकों पुरपाथ के सतरगी रगा म रग लिया

है। एक घण्टा पान में जो नाटक के पूर्वांश म विधिशा की ओर प्रायः चलकर कमवाणी हो गए हैं। पर इन्हीं पर भा एका पान मुक्त गद्दी मिया ता प्रारम्भ म कमवाणी हुआ और मय म विधिशा की धन गया है।

(४) प्रमाण की नियति अथवा गति ज्ञान ग्राह्य है। जटिलता उमम ताम मात्र का भी नहीं। क्या क्या नाटककार के व्यक्तित्व अथवा और जीवन ज्ञान का विशास जाना गया है। क्या क्या नियति भावना म भी निराम हवा है।

(५) कोई भी जीवन ग्राह्य नाटककार जीवन का विमुक्त हाकर नया बन सकता। जीवन म भाग्य और पुण्याप दाना का स्थान है—अतः काँ प्रान्त्य की बात नहीं यदि वह जाना का चित्रण करता है। एक नियम म माघ या यह जान बर्णितरा म नियम दाय्य है —
नामम्बत दलित्वता ना नियति वोरप।

नाट्यार्थो सत्कविरिव न्य विज्ञानपे स्ते।

(६) प्रमाद के नाट्य म यत्र नत्र दव और पुण्याप का प्रतिनिधित्व करने वाला पात्र युगन दृष्टिगोचर जाना है जिससे अपने अपने स्थान पर दववाद अथवा कमवाद उचित परिपात्र म हृदयगम हो जाता है क्योंकि दा विपरीत वस्तुओं को देखने पर स्वतः ही दानों की आइतियाँ ग्राह्य बन जाती हैं।

(७) नाट्यो मे काय मिद्धि के अनक हेतु रह हैं। कवल नियति ही साधक अथवा बाधक नहीं। काल क्रम स्वभाव उक्षत्र परिस्थितियाँ आदि सभी का अपने अपने स्थान पर प्रभाव रहा है। वय दवदादी दव को ही काय का हेतु मानन है किन्तु जन दानिक सिद्धसेन दिवाकर न एकांत कानवाद स्वभाववाद नियतिवाद पृष्टतवाद पुण्यापवाद आदि की अनग अनग एकांत मायता को मिथ्यावाद कहते हए वन सवक ममुणाय का ही काय साधक माना है —

काना स इव गियई पुचरय पुरिसनारणोमता।

मि छन त चव उ समामग्रा हाति सम्मत।

मरी समभ म प्रसाद के नाट्य पर भी यह उक्ति चरिताथ होती है।

अन्तिम स्पष्टा

नियति विषयक चर्चा करते समय मैं विन्व म प्राप्त नियम पद्धति ऋत निदान तम शृङ्खला प्रारंभ कर्मों की अपरिहायता आदि की स्थान स्थान

पर चर्चा की है। किन्तु मैं यह मानकर नहीं चलता कि मर द्वारा विश्व का संपूर्ण सत्य इन पृष्ठ में सिमट कर अभिव्यक्त हो गया है। मुझे लगता है कि ब्रह्मानिर्गमण भौतिक विज्ञान की अनन्त उपलब्धियों के प्राप्यथ निरंतर प्राणिगीत तथा प्रयत्नशील बन रहेंगे, फिर भी इस अनन्त ब्रह्माण्ड का सत्य वे कभी भी हस्तगत नहीं कर सकेंगे। अनागत भविष्य की उपलब्धियाँ उन्हें अधिकाधिक उपलब्धियाँ के लिए निरंतर प्रेरित करती रहेंगी। इसी प्रकार विश्व के भौतिकवादी तथा आध्यात्मिक दार्शनिक संपूर्ण सत्य के विस्लेषण एवं निरूपण के हेतु विविध ज्ञान पद्धतियों का आश्रय लेते रहेंगे। सत्य के कितने आयामों तक कितने समय में और कब व पढ़ें पाएंगे यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है। महादेवी जैसी कवयित्रियों और विद्वानों के अनेक कवि तोड़ें यह क्षितिज, मैं मानूँ उस पार क्या है स प्रेरित होकर उस अनन्त अमीम सत्य के साक्षात्कार के लिए व्यग्र तथा व्याकुल बन रहेंगे। ज्या-ज्या वे उस सत्य के निकट पहुँचेंगे त्या-त्या अतिम सत्य उनसे दूर होता चला जाएगा।

ऐसी विकट स्थिति में मर जैसा विद्यार्थी अज्ञान रहस्यमयी और पतल में अपने परिवर्ण बदलने वाली नियति का संपूर्ण विस्लेषण कर सकें— इसकी तो स्वप्न में भी कल्पना नहीं की जा सकती। मैं तो नियति की इस विज्ञान अद्वैतिका के निर्माणाय जमीन नापने के लिए कुछ आधार मृत्त मात्र रख हूँ। नियति के ममत्त्व रहस्य का उत्खानन निश्चय ही मर वगैरे का रोग है। यह विश्व नियमा द्वारा मन्वानित है अथवा इसका प्रवर्तन यच्छा ही रहा है आज तो इसके सम्बन्ध में भी ब्रह्मानिर्गमण उदात्तता ही है। इस सम्बन्ध में निम्नलिखित ब्रह्मानिर्गमण दृष्टिकोण का उद्घाटन करना अप्रासंगिक नहीं होगा —

ब्रह्माण्डम जो कुछ होता है वह गायत्री सिर्फ दर्शाता है कि जहाँ तक हमारा सम्बन्ध है इसका स्वरूप ही कुछ ऐसा है कि वे सब हैं। इसके सिवा पाँच चारा नहीं है कोई बिनाप नहीं है। अतः यहाँ किसी बलप्रयोग किसी रहस्यमयी अवयवण शक्ति या किसी पूर्वनिर्धारित विनिर्दिष्ट सत्य धारि के अनुगमन का सवाल ही पन न आता। श्रुति में हम कितने भी निष्कर्ष या सिद्धान्त दायते हैं वे सब इसलिए हैं कि हम हर प्रक्रिया को एक विनिर्दिष्ट पानानुक्रम देवों के अमर्य्यता से हैं। यदि हम किसी पूरी प्रक्रिया का

- (४) कदणालय मस्करण ३ म० २०१८ वि०
 (५) कामना सस्करण ५ स० २०१८ वि०
 (६) कामायनी स० २००० वि०
 (७) काव्य और कथा तथा अन्य निबंध मस्करण १ म० १९९६ वि०
 (८) चन्द्रगुप्त सस्करण ४ म० २००० वि०
 (९) जनमेजय का नागयज्ञ सस्करण ७ स० २०१५ वि०
 (१०) ध्रुवस्वामिनी मस्करण १४ स० २०१५ वि०
 (११) प्रायश्चित (चित्राधार) सस्करण २ ।
 (१२) प्रथम पद्यिक सस्करण २ ।
 (१३) रायश्री सस्करण ३ ।
 (१४) विद्याल सस्करण ७ स० २०१३ वि०
 (१५) स्वर्णगुप्त सस्करण १४ स० २०१८ वि०
 (१६) सजन (चित्राधार) सस्करण २ ।
- (ख) अन्य ग्रंथ
- (१) आधुनिक हिंदी नाटक डॉ० नगेन्द्र सस्करण १ स० १९८९ वि०
 (२) कवि प्रसाद की काव्य साधना रामनाथ सुमन सस्करण ४ ।
 (३) कामायनी दान डॉ० कहेयालान सहल एव प्रा० विजय द्र स्नातक सस्करण १९५३ ई०
 (४) कामायनी म काव्य सस्त्रुति और दान डॉ० द्वारिकाप्रसाद सस्करण १
 (५) गीता रहस्य बालगंगाधर तिलक सस्करण १९१६ ई०
 (६) जयशंकर प्रसाद आ० नन्ददुलार वाजपेयी सस्करण १
 (७) जयशंकर प्रसाद जीवन दान कला और कृतिरत्न सम्पादक महावीर अधिकारी सस्करण १९५५ ई०
 (८) जन धर्म कथाशिव द्र शास्त्री सस्करण १
 (९) दान शिष्टान राहुल साहूवायन सस्करण १ १९४४ ई०
 (१०) नालदा विद्याल गङ्गा सागर सस्करण १ ।
 (११) नाटककार प्रसाद और चन्द्रगुप्त बजनाथ विन्वनाथ सस्करण १ ।
 (१२) प्रसाद साहित्यकाण्ड डा० हरदेव बाहरी सस्करण १ म० २०१४ वि०
 (१३) प्रसाद काव्य विवेचन डा० हरदेव बाहरी, मस्करण १ १९५९ ई०
 (१४) प्रसाद का काव्य डा० प्रमोदसुन्दर मस्करण १ २ १२ वि०
 (१५) प्रसाद की नाट्यकथा प्रो० रामकृष्ण गुप्त विनीमुक्त सस्करण १

- (१६) प्रसाद और उनका साहित्य विनोदगङ्कर व्यास, मस्करण १, १९४० ई०
- (१७) प्रसाद एक पत्र का तुलनात्मक विवेचन प्रो० रामरजपाल त्रिवेदी
सस्करण १ स० २०१४ वि०
- (१८) प्रसाद के नाटकों का राष्ट्रीय अध्ययन जगन्नाथ प्रसाद शर्मा
सस्करण ५, स० २०१७ वि०
- (१९) प्रसाद की नाट्यकला एक स्कन्दगुप्त समीक्षा रामप्रसाद अग्रवाल सस्करण १
- (२०) प्रसाद का नाट्य चिन्तन गिखरचन्द जन सस्करण १
- (२१) प्रसाद एक अध्ययन प्रो० रामरतन भटनागर सस्करण १ ।
- (२२) प्रसाद के तीन ऐतिहासिक नाटक, राजेश्वर प्रसाद अग्रन मस्करण २
- (२३) प्रसाद के तीन नाटक प्रमनारायण टंडन सस्करण १
- (२४) प्रसाद के नाटकीय पात्र जगदीश नारायण सस्करण १ ।
- (२५) प्रसाद की कथा गुलाबराय, मस्करण १ ।
- (२६) प्रसाद और उनके नाटक केगरी कुमार सस्करण १ ।
- (२७) भारतीय दर्शन बलदेव उपाध्याय सस्करण ४ १९४८ ई०
- (२८) भाग्य सावित्री वापदेव गरण अग्रवाल मस्करण ३
- (६) मनुष्य का भाग्य ल कामत द नाथ, (हिन्दी अनुवाद)
- () मानविकी पारिभाषिक भाग (साहित्य छड) सम्पादक डॉ० नग
सस्करण १९६५ ई
- (३१) मीमामा दान मडन मिश्र सस्करण १
- (३२) मुनि श्री हजारीप्रसाद स्मृतिसंग्रह सम्पादक गोभाचन्द्र भारद्वाज सस्करण १
- (३३) मूल्यांकन डॉ० कहेयाताल सहन सस्करण १ १९६३ ई०
- (३४) विवेचन सस्करण १९५३ ई०
- (३५) चरित्र दवगात्र अनुवाद डा० सूपकान्त सस्करण १ १९६१ ई०
- (३६) साहित्य ज्ञान गचीरानी गुट्ट सस्करण १९५० ई०
- (३७) हिन्दी विश्व काग सम्पादक नग नाथ वसु सस्करण १९२८ ई०
- (८) हिन्दी विश्व कोण ना० प्र० सभा सस्करण १ ।
- (३९) हिन्दी साहित्य काग भाग १ और २ सम्पादक धीरेंद्र वर्मा सस्करण १
- (४०) हिन्दी साहित्य का इतिहास रामचन्द्र शुक्ल सस्करण ८ स० २० ६ वि
- (४१) हिन्दी साहित्य का बृहद् इतिहास डॉ० राजबनी पाण्डेय सस्करण
२०१४ वि०
- (४२) हिन्दी काव्य में नियतियाँ डॉ० रामगोपाल शर्मा त्रिवेदी
सस्करण १, १९६४ ई
- (५) ज्ञान की गरिमा बनेत्र उपाध्याय सस्करण १९५९ ई०

(ग) पत्रिकाएँ

- (१) कल्याण उपनिषदात् १९४६ ई०
- (२) कल्याण मणिस लेवी भागवत धरा
- (३) नागरी प्रचारणी पत्रिका यप ४८ अङ्क १-४
- (४) माध्यम परवरी १९६६ ई०
- (५) भारतीय साहित्य जुलाई १९५८ ई०
- (६) साप्ताहिक भारत २५-२-१९६० ई०
- (७) साप्ताहिक मसार (प्रसादग्रन्थ) १८ फरवरी १९५९
- (८) ज्ञानोत्सव, अप्रैल १९६६ ई०

(घ) अंग्रेज ग्रन्थ तथा पत्र पत्रिकाएँ

- (1) B H U Magazine Oct Dec 1931
- (2) Encyclopaedia Britannica Edition 1979
- (3) Encyclopaedia of Religion and Ethics
- (4) India As Known to PANINI Vashudeo Saran
Lahore Edition 1
- (5) Prabudha Bharat Editor—Gambhu and April 1962
- (6) The Call of the Vedas—A C Bose Edition 1
- (7) The Complete Work of William Shakespeare (London)
Edition 1
- (8) The Golden Treasury F T Palgrave (London)
Edition 1930
- (9) The Philosophy of the Yoga Vasistha B L Atreya
Edition 1936
- (10) The Religion and Philosophy of the Veda And
Upanishads A B Keith Edition 1

एक अथ महत्वपूर्ण प्रकाशन

डॉ० अमरपाल सिंह

कृत

तुलसी-पूर्व राम-साहित्य

राम साहित्य के प्रमुखतम महाकवि
तुलसीदास के पूर्व रचित राम साहित्य
का विपद विवेचन प्रस्तुत करने
वाला शोध ग्रन्थ

मूल्य १८ रुपये

रचना प्रकाशन

इलाहाबाद-१